पंजीयन : UTTHIN/2012/48352

अविरामसाहित्यिकी

समग्र साहित्य की समकालीन त्रैमासिक पत्रिका

।।सामाजिक–राष्ट्रीय प्रतिबद्धता के उन्नयन को समर्पित।।

डॉ. बलराम अग्रवाल के लघुकथा–सृजन की स्वर्णजयन्ती के अवसर पर

डॉ. बलराम अग्रवाल

खंड (वर्ष) : 11 / अंक : 1
अप्रैल–जून 2022

लघुकथा विशेषांक :

लघुकथाकार डॉ. बलराम अग्रवाल जी के योगदान पर केन्द्रित

प्रधान सम्पादिका :
मध्यमा गुप्ता

अंक सम्पादक :
डा. उमेश महादोषी

।।माइक पर/उमेश महादोषी।।

■ निश्चित रूप से आज लघुकथा का व्यवहार साहित्य की केन्द्रीय विधा जैसा है और उसका सम्मान भी वैसा ही है। यदि कहीं कमजोर लघुकथाएँ लिखी जा रही हैं तो वह कमजोरी उन लघुकथाओं को लिखने वाले लेखकों की है। ऐसे लेखकों के साथ मोटे तौर पर दो–तीन तरह की समस्याएँ होती हैं। बहुधा ये लेखक लेखकीय समझ और लेखन के यंत्रों की समझ और उपयोग की ओर से आँखें बन्द किये रहते हैं। भौतिक रूपाकार में घटनाओं या समस्याओं को पिरो देना ही इनके लिए लघुकथा–लेखन और उसका कौशल है। लेखन से पहले अध्ययन और उसके माध्यम से कुछ सीखने को ये मोटे तौर पर सामान्य मान्यताओं को जान लेने और उनके प्रयोग को अपने लेखन के शिल्पगत ढाँचे में शामिल कर लेने से अधिक कुछ नहीं मानते। ऐसे में आलोचना का कोई अर्थ नहीं रह जाता। बहुधा वरिष्ठ रचनाकारों की चिंता इस सन्दर्भ में सामने आती रहती है। मुझे लगता है, जब तक इस चिंता का आधार आलोचना के माध्यम से नये और कमजोर रचनाओं के लेखकों को सीखने के लिए प्रेरित करना रहेगा, तब तक परिणाम बहुत अच्छे नहीं आयेंगे। मैंने देखा है कि कई बार प्रायः कमजोर रचनाएँ लिखने वाले लेखकों की भी एकाध अच्छी रचना सामने आ जाती है और वरिष्ठ लेखक ऐसी रचनाओं के आधार पर उन लेखकों को प्रोत्साहित करते हैं, भविष्य में कुछ अच्छे की आशा से उनका मनोबल बढ़ाते हैं। ऐसी रचनाओं का चयन करके उनकी अच्छाइयों को सामने लाते हैं। यह एक तरीका हो सकता है। एक दूसरा तरीका है लेखन से जुड़ी धारणाओं और धारणागत यंत्रों को सरलीकृत रूप में सोदाहरण जिज्ञासु लेखकों के सामने रखना और उनके प्रभावों की चर्चा करना। अपनी तमाम गतिविधियों के मध्य भाई साहब यानी डॉ. बलराम अग्रवाल जी ने अपनी इसी शैली के माध्यम से बहुत बड़ी संख्या में नये लेखकों को अच्छी लघुकथाएँ लिखने और सीखने के लिए प्रेरित किया है। अपनी उत्कृष्ट लघुकथाओं और संतुलित व तर्कसंगत आलोचना के लिए वह जितना लोकप्रिय हैं, उससे अधिक लघुकथा–सृजन की उन्नति के लिए नये लेखकों के सामने प्रभावी धारणाओं और धारणागत यंत्रों को समझाने एवं अपनाने के लिए एक प्रेरक–रूप में वह लोकप्रिय हुए हैं। लघुकथा में उनका यह एक अलग तरह का योगदान है।

■ वरिष्ठ समालोचक डॉ. कमल किशोर गोयनका साहब द्वारा उठाये जाने एवं संभवतः किसी वरिष्ठ नाटककार द्वारा किसी फिल्म पर की गई टिप्पणी से प्रेरित होकर लघुकथा में लेखकीय प्रवेश एवं उपस्थिति और उसके नकारात्मक प्रभावों पर आम लघुकथाकारों के मध्य चर्चा करने का महत्वपूर्ण काम भाई साहब ने किया है। लघुकथा में नेपथ्य को एक यंत्र के रूप में उपयोग करने और उसके प्रभावों पर भी चर्चा को वह नये लेखकों तक लेकर गये हैं। कहानी से लघुकथा को विलग करने के साथ लघुकथा में लाघव एवं कहानीपन (कथात्मकता) के मुद्दों को भी उन्होंने नयी पीढ़ी को समझाने का प्रयास किया है। मानव मनोविज्ञान पर उन्होंने एक सार्थक चर्चा को आम लेखकों के मध्य उत्प्रेरित किया है। ये कुछेक उदाहरण हैं, जो इस बात का प्रमाण हैं कि लघुकथा के उन्नत स्वरूप की संकल्पना को नयी पीढ़ी के माध्यम से साकार करने का व्यावहारिक तरीका ही कारगर हो सकता है, जिसे डॉ. बलराम अग्रवाल जी ने पूरे विश्वास के साथ अपनाया हुआ है।

■ भाई साहब के लघुकथा में योगदान पर अनेक मित्रों ने अपने–अपने शब्दों में विस्तार से प्रकाश डाला है, सृजन, संपादन, आलोचना, शोध, लघुकथा के ऐतिहासिक सूत्रों से समकालीनता

शेष पृष्ठ 63 पर

अविराम साहित्यिकी

समग्र साहित्य की समकालीन त्रैमासिक पत्रिका

खंड (वर्ष) : 11 / अंक : 1
अप्रैल–जून 2022

डॉ.बलराम अग्रवाल : एक भाव चित्र

प्रधान सम्पादिका : **मध्यमा गुप्ता**

अंक सम्पादक : **डॉ. उमेश महादोषी**

संयुक्त सम्पादिका : **डॉ. संध्या तिवारी**

सह सम्पादिका : **ज्योत्स्ना कपिल**

संपर्क (प्रकाशन / रचना सामग्री प्रेषण हेतु) :
ई–मेल : aviramsahityaki@gmail.com
121, इन्द्रापुरम, निकट बीडीए कॉलोनी, बदायूँ रोड, बरेली–243001, उ.प्र. / मो. 09458929004 (सूचना हेतु)

इन्टरनेट पर उमेश महादोषी संचालित ब्लाग :
http://aviramsahitya.blogspot.com

सम्पादन परामर्श : **डॉ. सुरेश सपन**

मुद्रण सहयोगी : **पवन कुमार**

कृपया अगली सूचना तक कोई शुल्क न भेजें।

स्थायी कार्यालय :
एफ–488 / 2, गली सं. 11, राजेन्द्र नगर, रुड़की, जिला–हरिद्वार–247667, उ.खण्ड
न्यायिक क्षेत्र : रुड़की (हरिद्वार)

अविराम साहित्यिकी की प्रकाशन तिथियाँ हैं– क्रमशः 14 मई, 14 अगस्त, 14 नवम्बर व 14 फरवरी। सभी संबन्धितों को प्रेषण प्रकाशन तिथि के एक सप्ताह में। प्रकाशित सामग्री से संपादक / प्रबंधन की सहमति आवश्यक नहीं है। रचनाओं पर पारिश्रमिक देय नहीं। ईमेल से रचनाएँ मेल बाक्स में पेस्ट करके या वर्ड 2007 या पेजमेकर में ही भेजें। पीडीएफ या स्कैन (फोटो) रूप में रचनाएँ स्वीकार्य नहीं होंगी।

यह विशेषांक :
लघुकथा में डॉ. बलराम अग्रवाल का योगदान

आवरण (बलराम अग्रवाल) रेखाचित्र : **के. रविन्द्र**

एक प्रति का मूल्य : रु. **25 / –**, पाठक सदस्यता : त्रैवार्षिक रु. **300 / –**, आजीवन रु. **1100 / –** (पाठक सदस्यता शुल्क 'अविराम साहित्यिकी' के अंकों की एक–एक प्रति साधारण डाक से भेजने का शुल्क है, रचनाओं के प्रकाशन से शुल्क का कोई संबंध नहीं है। प्राप्त शुल्क वापस नहीं किया जायेगा।)

(सभी राशियाँ 'अविराम साहित्यिकी' के पक्ष में ही बरेली पर देय सी.टी.एस.–2010 चैक या माँग ड्राफ्ट या विवरण की सूचना हमें देते हुए पंजाब नेशनल बैंक, बायपास रोड, बरेली में 'अविराम साहित्यिकी' के खाता 03401131002357 (आईएफएस कोड PUNB0223410) में नकद जमा या इलेक्ट्रानिक अन्तरण द्वारा ही भेजें। धनादेश द्वारा राशि कदापि न भेजें। विज्ञापन हेतु उमेश महादोषी से पूछताछ करें।)

सम्पादन/प्रकाशन/प्रबन्धन पूर्णतः अव्यवसायिक व अवैतनिक

प्रैस लाइन

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक व सम्पादक श्रीमती मध्यमा गुप्ता द्वारा पवन ऑफसैट प्रिंटर्स, 60, पूर्वा दीनदयाल, रुड़की, जिला हरिद्वार (उत्तराखण्ड) से मुद्रित करवाकर एफ–488 / 2, गली संख्या 11, राजेन्द्रनगर, रुड़की, जिला–हरिद्वार (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित।

।।सामग्री।।

लघुकथा में डॉ. बलराम अग्रवाल के योगदान पर केन्द्रित आयोजन

भावभूमि की पृष्ठभूमि (3)

लघुकथा में डॉ. बलराम अग्रवाल

डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी (5)
डॉ. कमल किशोर गोयनका (6)
डॉ. किरन चंद्र शर्मा (10)
डॉ. बृजकिशोर पाठक (14)
बद्री सिंह भाटिया (21)
सुभाष नीरव (23)
भगीरथ (24)
सूर्यकांत नागर (25)
सुकेश साहनी (27)
प्रबोध कुमार गोविल (28)
डॉ. श्याम सुन्दर दीप्ति (29)
प्रताप सिंह सोढी (30)
डॉ. पुरुषोत्तम दुबे (32)
डॉ. अशोक भाटिया (33)
रामेश्वर काम्बोज हिमांशु (35)
विपिन जैन (36)
डॉ. जितेन्द्र 'जीतू' (37)
सन्तोष सुपेकर (40)
डॉ. नीरज शर्मा सुधांशु (41)
शशि पाधा (42)
डॉ. जेन्नी शबनम (43)
डॉ. शील कौशिक (44)
डॉ. संध्या तिवारी (46)
डॉ. चन्द्रेश कुमार छतलानी (46)
प्रेरणा गुप्ता (48)
सविता इन्द्र गुप्ता (49)
डॉ. लता अग्रवाल 'तुलजा' (52)
डॉ. उपमा शर्मा (52)
चित्रा राणा (53)
ज्योत्स्ना कपिल (55)
ऋता शेखर 'मधु' (56)
श्रुति कीर्ति अग्रवाल (57)
विरेन्द्र 'वीर' मेहता (57)

बातचीत

डॉ.बलराम अग्रवाल से कु. चन्द्रेश साहू की वार्ता (58)

छाया दृष्टि

डॉ. बलराम अग्रवाल जी की साहित्यिक यात्रा के कुछ चित्रात्मक पड़ाव (64 व आवरण 4)

बलराम अग्रवाल का लघुकथा सृजन

लघुकथा संग्रह 'सरसों के फूल' से 06 लघुकथाएँ (69)
लघुकथा संग्रह 'पीले पंखों वाली तितलियाँ' से 03 लघुकथाएँ (75)
लघुकथा संग्रह 'तैरती हैं पत्तियाँ' से 06 लघुकथाएँ (77)
लघुकथा संग्रह 'काले दिन' से 05 लघुकथाएँ (80)

.कथा प्रवाह (सदस्यों की लघुकथाएँ)

अशोक भाटिया/राजेश उत्साही (84)
संतोष सुपेकर/आभा सिंह (85)
शील कौशिक (86)
सुदर्शन रत्नाकर/कमलेश चौरसिया (87)
नलिन/मीरा सिंह 'मीरा' (88)
विजयानंद विजय (89)

स्तम्भ

माइक पर : संपादकीय (आव. 2)/गतिविधियाँ (90)/प्राप्ति स्वीकार (92)/स्वामित्व विषयक घोषणा – फार्म 4 (नियम 8) (आवरण 3)

सपत्नीक डॉ. बलराम अग्रवाल जी
श्री बद्रीनाथ धाम पर

।।भावभूमि की पृष्ठभूमि।।

{डॉ. बलराम अग्रवाल अपने व्यक्तित्व और रचनात्मकता, दोनों के ही स्तर पर लघुकथा की सभी पीढ़ियों के मध्य न केवल लोकप्रिय हैं, सभी के चहेते और प्रेरक भी हैं। ऐसे में उनके जैसे शिखर पुरुष के परिचय की औपचारिकता का उद्देश्य शोधादि के दृष्टिगत अकादमिक सन्दर्भ की अपेक्षा–पूर्ति से अधिक कुछ नहीं हो सकता। हम इसी विनम्र भाव को हृदयस्थ करके यहाँ उनके संक्षिप्त जीवन–वृत्त को प्रस्तुत कर रहे हैं।}

डॉ. बलराम अग्रवाल

जन्म : 26.11.1952 को बुलन्दशहर (उ.प्र.) में।

शिक्षा : एम.ए., पीएच.डी. (हिन्दी), अनुवाद में स्नातकोत्तर डिप्लोमा।

माता : श्रीमती प्रेमवती

पिता : श्री श्रीराम अग्रवाल

जीवन सहचरी : श्रीमती मीरा अग्रवाल

भाई : सर्वश्री प्रमोद, नन्दकिशोर, राममोहन एवं श्री संजय

बहनें : सर्वश्रीमती प्रीतिलता, उषाकिरण, साधना एवं श्रीमती पूनम

परिवार :

ज्येष्ठ पुत्र–पुत्रवधू : आकाश एवं मानसी

कनिष्ठ पुत्र–पुत्रवधू : आदित्य एवं प्रीति

पुत्री–दामाद : अपेक्षा एवं विपिन

तीसरी पीढ़ी :

पौत्र : अद्वित (पुत्र आकाश–मानसी) / पौत्री : आदिका (पुत्री आदित्य–प्रीति)।

दौहित्र / दौहित्री : ओजस एवं नेहिल (पुत्र / पुत्री अपेक्षा एवं विपिन)

लेखन / प्रकाशन / योगदान :

मूल लेखन विधा : लघुकथा।

अन्य प्रमुख लेखन विधाएँ : कहानी, व्यंग्य, कविता, क्षणिका, बाल साहित्य, समीक्षा एवं सैद्धान्तिक–व्यवहारिक समालोचना।

मौलिक प्रकाशित पुस्तकें : सरसों के फूल, जुबेदा, पीले पंखों वाली तितलियाँ, तैरती हैं पत्तियाँ, काले दिन (लघुकथा संग्रह)। 'सूली ऊपर सेज' (चयनित व्यंग्यात्मक लघुकथाओं का संग्रह) व 'जूझते हुए धूप से' (चयनित लघुकथाओं का संग्रह, संपा. उमेश महादोषी)। 'बलराम अग्रवाल की 66 लघुकथाएँ और उनकी पड़ताल' (लघुकथा संग्रह व मूल्यांकन, संपा. मधुदीप)।

'खुले पंजों वाली चील' (कहानी संग्रह)। 'चन्ना चरनदास' (लघुकथा / कहानी संग्रह)।

दूसरा भीम, ग्यारह अभिनेय बाल एकांकी, आधुनिक बाल नाटक, चुने हुए 21 बाल नाटक, अकबर के नौ रत्न, भारत रत्न विजेता, देशप्रेम के गीत : जय हो, सचित्र बाल्मीकि रामायण (बाल साहित्य)।

हिन्दी लघुकथा का मनोविज्ञान, परिन्दों के दरमियां, लघुकथा का प्रबल पक्ष, लघुकथा : चिंतन–अनुचिंतन (आलोचना)।

अनुवाद व पुनर्लेखन : अण्डमान व निकोबार की लोककथाएँ, करोड़पति भिखारी, खलील जिब्रान, अनेक विदेशी कहानियाँ। सम्पूर्ण बाल्मीकि रामायण।

संपादन : मलयालम की चर्चित लघुकथाएँ, तेलुगु की मानक लघुकथाएँ, पड़ाव और पड़ताल : खण्ड–2 (लघुकथा एवं समालोचना संकलन), लघुकथा अविराम (अविराम साहित्यिकी के लघुकथा विशेषांक 2012 का परिवर्धित पुस्तक रूप)। समकालीन लघुकथा और प्रेमचन्द। प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, रवीन्द्रनाथ टैगोर, बालशौरि रेड्डी आदि वरिष्ठ कथाकारों की चर्चित कहानियों के 25 संकलन।

पत्र–पत्रिकाओं का संपादन : 'वर्तमान जनगाथा' (1993–1996 तक) का संपादन–प्रकाशन। 'द्वीप लहरी' में संपादन सहयोग (1997–2019)। सहकार संचय (जुलाई 1972), द्वीप लहरी (अगस्त 2002, जनवरी 2003, अगस्त 2007), आलेख संवाद (जुलाई 2008), अविराम साहित्यिकी (अक्टूबर–दिसम्बर 2012, अक्टूबर–दिसम्बर 2015, अक्टूबर–दिसम्बर 2018), आधुनिक साहित्य (जनवरी–मार्च 2019) के पूर्ण लघुकथा विशेषांकों का अतिथि संपादन। अविराम साहित्यिकी के (अप्रैल–जून 2019) भगीरथ परिहार जन्म–जयंती विशेषांक तथा जनवरी–मार्च 2021 से जनवरी–मार्च 2022 तक पाँच लघुकथा स्वर्ण जयन्ती विशेषांकों की शृंखला का अतिथि संपादन। साहित्य अमृत (जनवरी 2017) लघुकथा विशेषांक का संयोजन–संकलन–आकल्पन।

इण्टरनेट पर लघुकथा ब्लॉग/फेसबुक पृष्ठ : इण्टरनेट पर लघुकथा विषयक महत्वपूर्ण ब्लॉग्स का संचालन–संपादन :1. http://kathayatra.blogspot.com
2- http://jangatha.blogspot.com
3- http://laghukatha-varta.blogspot.com
4. https://laghukathavishwakosh.blogspot.com

फेसबुक पर लघुकथा साहित समूह एवं लघुकथा विश्वकोश पृष्ठ का संचालन।

अन्य उपलब्धियाँ :

सीनियर फेलोशिप : 'लघुकथा : इतिहास, स्वरूप और संभावना' विषयक शोध परियोजना पर संस्कृति मंत्रालय (भारत सरकार) की सीनियर फेलोशिप (जून 2019 – मई 2021)।

पाठ्यक्रमों में : 1. केरल शिक्षा विभाग द्वारा कक्षा 7 के पाठ्यक्रम में बाल एकांकी– 'जरूरी खुराक'। 2. हिमाचल प्रदेश शिक्षा विभाग द्वारा कक्षा 4 के पाठ्यक्रम (2014–15) में बाल एकांकी– 'पेड़ बोलता है'।

3. मधुबन बुक्स, मुम्बई द्वारा विभिन्न शिक्षण संस्थाओं के लिए कक्षा 6 के पाठ्यक्रम (2016–17) में बाल एकांकी– 'सूरज का इन्तजार'।

4. ऑक्सफोर्ड एडवान्टेज हिन्दी साहित्यमाला 5 में काव्यनाटिका 'नहीं रहेंगे अगर जंगल' वर्ष 2017 से। 5. कहानी 'सहस्रधारा' सेंट जोसेफ कॉलेज ऑफ कॉमर्स, बैंगलूर की स्नातक कक्षाओं में। 6. अनेक पाठ्यपुस्तकों में बाल एकांकी 'शिवाजी की बहन' एवं 'सुभाष चन्द्र बोस' शामिल।

शोध कार्य : लघुकथा संग्रह 'जुबेदा' पर 2015 में कुरुक्षेत्र वि.वि. में सुश्री गासत्री सैनी द्वारा एम.फिल. हेतु शोध। पं. रविशंकर शुक्ल वि.वि. रायपुर में सुश्री चन्द्रेश साहू 'बलराम अग्रवाल की लघुकथाओं में अभिव्यक्त सामाजिक सरोकार' विषय पर पीएच.डी. हेतु शोधरत।

प्रमुख सम्मान : दिशा प्रकाशन का वरिष्ठ लघुकथाकारों को दिया जाने वाला 'दिशा सम्मान', 'माता शरबती देवी स्मृति सम्मान' आदि अनेक सम्मानों से विभूषित।

सम्प्रति : भारतीय डाक विभाग से वर्ष 2009 में सेवानिवृत्ति के बाद पूर्णतः साहित्य सृजन को समर्पित।

सम्पर्क : एम–70, निकट जैन मन्दिर, नवीन शाहदरा (उत्धनपुर), दिल्ली–110032/मो. 08826499115
ई मेल : balram.agarwal1152@gmail.com ■

।।लघुकथा में डॉ. बलराम अग्रवाल।।

{लघुकथा में डॉ. बलराम अग्रवाल के योगदान को रेखांकित करते विभिन्न विद्वानों के विचार इस खण्ड में प्रस्तुत हैं। डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी जी एवं डॉ. कमल किशोर गोयनका जी के आलेख क्रमशः 'तैरती हैं पत्तियाँ' एवं 'लघुकथा का समय' पुस्तक से साभार लिए गये हैं। क्रमशः डॉ किरन चंद्र शर्मा, डॉ. बृजकिशोर पाठक, श्री बद्री सिंह भाटिया एवं श्री सुभाष नीरव जी के विचार डॉ. बलराम अग्रवाल जी द्वारा संचालित इंटरनेट ब्लॉग 'लघुकथा वार्ता' से साभार लिये गए हैं। स्थान की सीमित उपलब्धता के कारण इनमें से डॉ. बृजकिशोर पाठक, श्री बद्री सिंह भाटिया एवं श्री सुभाष नीरव जी के आलेखों के प्रमुख/महत्वपूर्ण अंशों को ही शामिल किया जा सका है।

उपरोक्त से इतर मित्रों के आलेख/टिप्पणियाँ हमारे आमंत्रण पर उपलब्ध कराये गए हैं। स्थान की सीमित उपलब्धता के कारण इनमें से भी कुछ आलेखों का संक्षिप्तीकरण किया गया है। इस प्रक्रिया में मूल आलेखों से छोड़े गये अंशों को तीन डॉट्स (...) के माध्यम से दर्शाया गया है। जहाँ तीन से अधिक डॉट्स का प्रयोग है, वे डॉट्स आलेख के लेखक द्वारा स्वयं प्रयुक्त किए गये हैं। सहयोग के लिए सभी सुधी अग्रजों/मित्रों का आभार। –अंक संपादक}

डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी

इन पत्तियों में जीवन है

लघुकथाएँ पहले भी लिखी जाती रही हैं; लेकिन पिछले कुछ वर्षों से यह लगभग साहित्यिक आंदोलन बन गयी है। अभी किसी ने ऐसा दावा स्पष्ट रूप से शायद नहीं किया है; लेकिन लगता है 'लघुकथा' अपने लिए स्वतंत्र काव्यरूप होने का आग्रह कर रही है। स्वतंत्र काव्यरूप होने के लिए रचना–विधान में कोई अभूतपूर्व परिवर्तन या योग करना पड़ता है। वह लघुकथा अभी कर पायी है या नहीं, विवादास्पद है; और इस बहस में यहाँ नहीं पड़ा जा रहा है।

बलराम अग्रवाल लघुकथा रचना में बहुत दिनों से निष्ठापूर्वक संलग्न हैं। वे लघुकथा रचनाकार तो हैं ही, इसके साहित्यिक एक्टिविस्ट भी हैं। लेकिन इस सबसे कहीं ज्यादा महत्वपूर्ण है इनका उत्तम लघुकथाकार होना।

'तैरती हैं पत्तियाँ' में 103 लघुकथाएँ संकलित हैं। इन्हें पढ़कर लगता है, कि ये जीवन को आधुनिक व्यापक दृष्टि से देखने वाले कथाकार की रचनाएँ हैं। इन पत्तियों को पढ़कर हम कहानी नहीं, जीवन पढ़ते हैं; और यह मेरी दृष्टि में बलराम की बहुत बड़ी विशेषता और उपलब्धि है।

बलराम अग्रवाल कम बोलने वाले, पीछे बैठने वाले व्यक्ति हैं। यह उनकी विशिष्टता और उनके आत्मविश्वास का परिचायक है। यह आत्मविश्वास उनके प्रगतिशील भाव–बोध में झलकता है जिनमें ये लघुकथाएँ रची–बसी हैं।

आप इन्हें पढ़ें तो लगता है कि लेखक के पास व्यंजना की ऐसी क्षमता है जो छोटी–सी कहानी एक छोटे–से वाक्य से कथा में कितना संकेत भर सकता है। जैसा 'अजंता में एक दिन' में कला की अमरता के विचार को पत्नी के एक छोटे–से भाव कथन–अनुभाव से पारिवारिक संबंध–सुख की सीमा तक पाठक को पहुँचा दिया गया है :

पति की बाँह को जकड़कर चलती नीलिमा तिरछी नजर से उसकी ओर देख व्यंग्यपूर्वक बोली, "लेकिन हैं वो पत्थर ही!"

मैंने साम्प्रदायिकता विरोध और सेक्युलरिज्म के समर्थन में अनेक कहानियाँ पढ़ी हैं। उनमें अनेक उत्कृष्ट भी थीं; लेकिन 'इमरान' भावाभिव्यक्ति और व्यंजना की दृष्टि से अभूतपूर्व है। सेक्युलरिज्म का शोर नहीं, वह सिर्फ 'इमरान' नाम में है। लेकिन यह सेक्युलरिज्म सिर्फ धर्म या पंथ को लेकर नहीं, वह एक वृद्ध भिखारी और एक नवयुवक को भाव–बंधन में बाँधकर भावी के प्रति एक अबूझ लेकिन शुभ संदेश देता है। यह ऐसी विलक्षण लघुकथा है, जो दो भिन्न मजहब के लोगों को जोड़कर नहीं, एक ही मजहब के दो वर्ग–वय के लोगों को जोड़कर मानव–धर्म का संकेत देती है। मैंने ऐसी कोई अन्य कहानी नहीं पढ़ी है। इसी तरह 'उसकी हँसी', 'उजालों का मालिक'।

इन कहानियों पर ध्यान दें तो प्रकट हो जाता है कि बलराम के अधिकांश और प्रभावशाली पात्र निम्नवर्गीय हैं; और उनकी जीवन–स्थितियाँ, उन जीवन–स्थितियों की विसंगतियाँ, उनके सुख–दुःख लेखक ने शब्द–चित्रों में उतारकर मार्मिकता पैदा की है। इसलिए वह सहज प्रगतिशील कथाकार हैं।

'उसकी हँसी' में एक बुढ़िया के मन में संजोयी हुई सुखद अनुभव स्मृति दर्पण–डिबिया के माध्यम से छोटी बालिका में मिलकर पूरी सृष्टि में फैल जाती है। चारों ओर हँसी व्याप्त हो जाती है।

मुझे 'तैरती हैं पत्तियाँ' की अधिकांश कथाएँ अनुभवजन्य और सुरचित लगी हैं। बलराम अग्रवाल में साधना की क्षमता है। मुझे यकीन है, कि वे इस दुर्गम–पथ पर चलते रहेंगे और यश प्राप्त करते रहेंगे।

{बलराम अग्रवाल जी के लघुकथा संग्रह 'तैरती हैं पत्तियाँ' की भूमिका।}

■ बी 5–एफ 2, दिलशाद गार्डन, दिल्ली–11095

डॉ. कमल किशोर गोयनका

लघुकथा और बलराम अग्रवाल

साहित्य में, और समाज में भी, प्रारम्भ से ही मेरी मान्यता यह रही है कि प्रचलित मान्यताओं और लगभग रूढ़ हो चुकी परम्पराओं पर नए सिरे से, नई दृष्टि से विचार किया जाना चाहिए। अपनी इसी मान्यता के चलते प्रेमचंद पर अपने शोध को मैंने शोधोपाधि प्राप्त करने भर तक सीमित नहीं रखा, उससे आगे विस्तृत अध्ययन का आधार बनाया जो सौभाग्य से अब तक जारी है और मरते दम तक जारी रहेगा। नए सिरे से और नई दृष्टि से विचार करने की मेरी मान्यता ने मुझे अपने समय के कुछ नवागत साहित्यकारों यथा– रवीन्द्रनाथ त्यागी, अभिमन्यु अनत, मंजुल भगत आदि के लेखन की समीक्षा करने को प्रेरित किया। इन सभी के लेखन पर मैंने पुस्तकें लिखीं जो काफी सराही गयीं। उस काल में नए कहलाए जाने वाले ये सब लेखक बाद में हिन्दी साहित्य के प्रतिष्ठित

साहित्यकार भी कहलाए। अपनी इसी मान्यता के चलते मेरी समीक्षा दृष्टि ने सातवें–आठवें दशक में नयी उभरी कथा–विधा 'लघुकथा' को अपनाया। मुझे इस विधा की ओर आकर्षित करने का, इससे संवाद करने का श्रेय निःसन्देह उस काल में नए–नए उभर रहे और इस काल तक आते–आते प्रतिष्ठित हो चुके कथाकार डॉ. सतीश दुबे और मधुदीप को है; तथापि मेरी अपनी मान्यता को भी इसका श्रेय जाता ही है। ऐसा न होता तो 'लघुकथा' से जुड़ाव की मेरी यात्रा इन दो की ही पुस्तक समीक्षा और भूमिका लेखन तक सिमटकर रह जाती, आगे न बढ़ पाती।

बाद में, मेरी इस मान्यता ने मुझे अनेक नए लघुकथाकारों से संवाद करने को प्रेरित किया। उसी क्रम में लघुकथा की अनेक पुस्तकों का अध्ययन भी मैंने किया, समीक्षात्मक और आलोचनात्मक टिप्पणियाँ उन पर लिखीं। मुझे यह कहने में आज भी कोई संकोच नहीं है कि उस काल के अनेक लेखक लघुकथा का मसीहा बनने की होड़ में अपनी कुछ ज्यादा ही बढ़–चढ़कर प्रशंसा कर रहे थे। उनमें से कई तो आत्म–श्लाघा के इस सीमा तक शिकार थे कि लघुकथा का शिल्प–विधान और टेकनीक तक तय कर चुकने का, उसका आलोचना–शास्त्र गढ़ देने का दावा पेश करने लगे थे और अपने–अपने नजरिए को 'जरूरी' घोषित व प्रचारित कर रहे थे। वे नहीं समझ पा रहे थे कि संसार का कोई भी ज्ञान अन्तिम नहीं है और साहित्यिक विधाओं में न केवल शिल्प बल्कि संवेदनाओं का भी स्वरूप बदलता रहता है।

जब से मैं समकालीन लघुकथा के सम्पर्क में आया हूँ, तभी से इसे गहराई से जानने–समझने की ओर भी उन्मुख हुआ हूँ। इसके अध्ययन के आधार पर मेरा आकलन यह रहा है कि अन्य कथा विधाओं की तरह लघुकथा भी जीवन की ही आलोचना है। जीवन के अनेक त्रासद पक्षों के उद्‌घाटन के साथ उनके ध्वंस की कामना भी लघुकथाओं में समाई दिखाई पड़ती है। जीवन के यथार्थ अंकन की क्षमता इस विधा में है और इस अंकन में जो लघुकथाकार मुझे सक्षम नजर आते हैं, उनमें बलराम अग्रवाल का नाम मैं निःसंकोच ले सकता हूँ। जहाँ तक बलराम की लघुकथाओं में दर्ज़ जीवन के सैद्धांतिक पक्ष का सवाल है, उसकी कुछेक मान्यताओं से मेरी मत–भिन्नता बनती है, तथापि वह प्रभावित अवश्य करता है क्योंकि अपने समय के अनेक लघुकथाकारों की तुलना में अपने पक्ष को कहीं अधिक मजबूती से रखने की सामर्थ्य वह दिखाता है। अलग–अलग पत्रिकाओं में मैं उसकी लघुकथाओं को यद्यपि अक्सर ही पढ़ता रहता था लेकिन उसकी 25 रचनाओं को एक–साथ पढ़ने का अवसर सर्वप्रथम मुझे कुलदीप जैन द्वारा सम्पादित लघुकथा संकलन 'अलाव फूँकते हुए' मिलने पर मिला। वह पुस्तक मुझे जिन दिनों मिली, मैं एक कार्यक्रम में भाग लेने के लिए जबलपुर जाने की तैयारी में था। इसलिए तुरन्त उस पर कुछ नहीं लिख पाया। बाद में, मैंने उसे अपने साथ रख लिया और सफर के दौरान लगभग पूरे संकलन की लघुकथाओं को पढ़ गया। उसमें संकलित बलराम की रचनाओं ने मुझे इतना प्रभावित किया कि उन पर आलोचनात्मक टिप्पणी देने से मैं स्वयं को रोक नहीं पाया। जबलपुर पहुँचकर दिनभर कार्यक्रम में व्यस्त रहा। अपने ठहरने की जगह पर

पहुँचकर अगले दिन उन लघुकथाओं पर मैंने लम्बा समीक्षात्मक पत्र बलराम के नाम लिखा तथा उसी दिन उसे पोस्ट भी कर दिया। उस पत्र में क्योंकि बलराम की नवें दशक के अंत तक लिखित लघुकथाओं की ही समीक्षा सम्भव थी, इसलिए यहाँ मैं उसके बाद लिखित उसकी लघुकथाओं पर टिप्पणी करने का प्रयास कर रहा हूँ।

बलराम अग्रवाल की कुछ लघुकथाएँ सामान्य की तुलना में कुछ अधिक ही विस्तार पाई रचना हैं। अपने कहानी संग्रह 'चन्ना चरनदास' में 11 कहानियों के साथ मैं समझता हूँ कि उसने अपनी 20–21 लघुकथाएँ संग्रहीत की हैं; लेकिन उनमें से अधिकांश को लघुकथा स्वीकारने में मुझे संकोच होता है। अपने इस मत को मैंने कथाकार युगल द्वारा सम्पादित लघुकथा पत्रिका 'फलक' में प्रकाशित उनकी लघुकथाओं 'आदमी और शहर' तथा 'दुःख के दिन' पर टिप्पणी करते हुए व्यक्त भी किया था। बावजूद इसके, कुछ विशिष्टताओं के कारण समकालीन लघुकथाकारों के बीच बलराम अग्रवाल एक महत्वपूर्ण रचनाकार सिद्ध होता है। 'चन्ना चरनदास' में संग्रहीत 'जहाँ मैं खड़ा हूँ' उसकी व्यापक जीवन–दृष्टि और संवेदनशीलता का परिचय देती है। सामाजिक सामंजस्यहीनता को पहचानकर उस पर कथात्मक टिप्पणी प्रस्तुत करने की क्षमता ही किसी कथाकार की सम्यक् शक्ति का परिचायक होती है। उसकी लघुकथा 'यह कौन–सा मुल्क़ है' देश की पतनशील राजनीति पर करारा व्यंग्य तथा 'कूड़ा' सरकारी कार्यालयों में सामान्य–जन की त्रासद स्थिति का पीड़ादायक चित्र प्रस्तुत करती है।

समकालीन लघुकथा में फंतासी का प्रयोग जिस कुशलता से बलराम ने किया, वह चकित करने वाला था। चकित करने वाला इस अर्थ में था कि ऐसे प्रयोग उसने तब शुरू किए, जब लघुकथा मुख्यतः व्यंग्य, पैरोडी और चुटकुले के फॉर्म में लिखी जा रही थी। ऐसा प्रयोग उसकी लघुकथा 'गाँठ' में देखने को मिला। बिम्बात्मकता और प्रतीकात्मकता की बात करें तो 'और जैक मर गया' से ही उसने इनका प्रयोग आरम्भ कर दिया था। इस स्तर की लघुकथाओं में 'अँगूठी' और 'गुलमोहर' आदि के बाद उसकी 'पीले पंखों वाली तितलियाँ' का नाम लिया जा सकता है। 'छुरियाँ' तो पूरी की पूरी लिखी ही संकेत और प्रतीक की भाषा में गई है। लघुकथा 'दीनानाथ का झोला' की फंतासी को समझना किसी के लिए भी मुश्किल काम नहीं है। अर्थ–केन्द्रित हो चुके समाज में शिक्षार्थियों के गिरते स्तर को यह लघुकथा बहुत धारदार ढंग से व्यक्त करती है। कहने का तात्पर्य यह कि बलराम अग्रवाल बिम्ब, प्रतीक, संकेत, व्यंग्य, फंतासी आदि अनेक काव्यालंकारों का उपयोग करते हुए लघुकथा रचने वाला समर्थ कथाकार है। 'सुन्दरता' जैसी सीधी–सादी लगने वाली लघुकथा भी अर्थ–गाम्भीर्य की दृष्टि से दार्शनिक गहराई वाली रचना है। हालाँकि ऐसा नहीं है कि उसने सब–कुछ नया ही लिखा हो, प्रचलित मुहावरों का उपयोग अपनी लघुकथाओं में किया ही न हो; अथवा कुछ पुराने कथ्यों पर अपनी कलम न चलाई हो, लेकिन ऐसा जरूर है कि उन सबका निर्वाह उसने बड़ी कुशलता से, लगभग नएपन के साथ किया है। 'बिना नाल का घोड़ा', 'कन्धे पर बेताल', 'निवारण' और 'जंगल की बातें' उसकी ऐसी ही लघुकथाएँ हैं।

मनोवैज्ञानिक धरातल और पात्रों के चरित्र का मनोविश्लेषणात्मक चित्रण

बलराम की लघुकथाओं की एक और विशेषता कही जा सकती है। हालाँकि माना यह जाता है कि कथाकार को मनोचिकित्सक की भूमिका में नहीं आ जाना चाहिए; तथापि विश्व कथा साहित्य में पात्रों और परिस्थितियों का मनोवैज्ञानिक चित्रण गत अनेक दशकों से महत्वपूर्ण भूमिका निभाता आ रहा है। लघुकथा भी उससे अछूती क्यों रहे। जहाँ तक मेरी जानकारी है, बलराम अग्रवाल के शोध का विषय भी समकालीन लघुकथाओं का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन ही था। अतः विशेषतः शोधकाल के आसपास लिखी गई उसकी लघुकथाओं में ऐसे कथ्यों का आ जाना स्वाभाविक ही है। फिर भी, इतना मैं अवश्य कहना चाहूँगा कि लघुकथाकार क्या, किसी भी कथाकार को मनोचिकित्सक नहीं बन जाना चाहिए। इसे मैं लघुकथा में लेखक की छद्म उपस्थिति मानता हूँ जोकि गलत है और रचना की प्रभावशीलता को कम करती है। बलराम की मनोवैज्ञानिक धरातल की लघुकथाओं में 'माँ नहीं जानती फ्रायड', 'मन की मथनी' और 'जरूरी खुराक' का नाम लिया जा सकता है।

'हवाएँ बोलती हैं' शीर्ष तले उसने 12 लघुकथाएँ स्वतन्त्र शीर्षक से दी हैं। इन सभी के केन्द्र में सितम्बर 2014 में कश्मीर में आई प्रलयंकारी बाढ़, बचाव–दल के रूप में भारतीय सेना के प्रयास और वहाँ की जनता है जो कुछ अलगाववादी राजनीतिक व धार्मिक तत्त्वों द्वारा भ्रमित कर दी गई थी। इस श्रृंखला की हर लघुकथा यह सिद्ध करने के लिए काफी है कि बलराम अग्रवाल मानवीय मूल्यों तथा संवेदना की प्रस्तुति का कुशल कथाकार है। उसकी दृष्टि में मानवजाति ही प्रमुख है, धर्म–विशेष और समुदाय नहीं। उदाहरणार्थ इस श्रृंखला से 'हवाओं की बातचीत' शीर्षक यह लघुकथा देखिए :

आमने–सामने से आती दो हवाएँ चिंघाड़ मारती झेलम की ऊपरी सतह पर आ टकराईं।

"घाटी में इतनी तबाही बीतने पर भी आप ग़ायब हैं मियां रामपरसाद!" एक ने दूसरी से कहा, "हमारे नहीं तो अपने ही लोगों की मदद करते रहते!!"

"इधर तो सेना भी थी और आप जैसी मददग़ार हजारों हवाएँ भी।" दूसरी हवा बोल पड़ी, "यह देखकर कुछ नेक और नरमदिल हवाओं के साथ मैं कश्मीर के उस पार वाले हिस्से में चला गया था रहमत भाई...हवा होकर भी दिली–सरहदों का...अपने–पराये का ख्याल कायम रहा तो लानत है।"

परस्पर रिश्तों के निर्वाह की समझ, मानवीय धरातल को जानने–परखने की समझ, समानता और समरसता की प्राप्ति के लिए संघर्ष की समझ उसकी प्रारम्भिक लघुकथाओं में तो देखने को मिलती ही थी, नब्बे के बाद लिखित अनेक लघुकथाओं में वह और भी प्रौढ़ता के साथ परिलक्षित होती है। ऐसी रचनाओं में 'आधे घंटे की कीमत', 'पराकाष्ठा', 'सियाही' आदि का नाम लिया जा सकता है; लेकिन जिन रचनाओं में वह अपने समय के राजनीतिक कथ्य को केन्द्र में रखता है, उनमें कुछ से मेरी असहमति बनती है। मेरे साथ–साथ कुछ अन्य विद्वानों की दृष्टि में भी, बलराम की कुछेक लघुकथाएँ स्पष्ट रूप से उसकी राजनीतिक समझ के कच्चेपन का नमूना सिद्ध हो सकती हैं। कहा जा सकता है कि यह कथाकार अपने राजनीतिक सिद्धांत को स्पष्ट

रूप से तय नहीं कर पा रहा; भटक रहा है। वस्तुतः राजनीतिक धरातल हो चाहे धार्मिक या सामाजिक मान्यता विशेष का धरातल, वह सिद्धांत–विशेष की या धर्म विशेष की पैरवी करने की बजाय मानवीय संवेदना की पैरवी कर रहा होता है। वह 'ब्रह्म सरोवर के कीड़े', 'नाटक' और 'मान–अपमान' जैसी लघुकथाएँ भी लिखता है तथा 'सलीम, मेरे दोस्त' और 'रहनुमा' जैसी भी। राजनीतिक धरातल की उसकी रचनाओं पर यहाँ मैं सिर्फ यही टिप्पणी करूँगा कि चाहे–अनचाहे हर व्यक्ति में अच्छी–बुरी एक राजनीतिक प्रतिबद्धता भी अनायास ही पनप जाती है। उसकी 'एक सवाल मासूम–सा' और 'सत्ताहारी' जैसी लघुकथाओं के कथ्य से मेरी असहमति बनती है। मेरा मानना है कि लघुकथाकार को तात्कालिक सन्दर्भ वाले कथ्यों से दूर रहना चाहिए। कथ्य की तात्कालिकता कथा की कालजयी प्रकृति का हनन कर सकती है। तात्कालिक सन्दर्भ व्यंग्य लेखन में ही अच्छे ढंग से भुनाए जा सकते हैं।

बलराम ने लघुकथा की आलोचना सम्बन्धी कुछ लेख लिखे हैं जो मेरे पढ़ने में भी आते रहे हैं। उसने कुछ लघ्वाकारीय कहानियों का अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद भी किया है जो अनेक पत्रिकाओं में प्रकाशित होता रहा है। 'वर्तमान जनगाथा' नाम से लघुकथा केन्द्रित अपनी पत्रिका का प्रकाशन व सम्पादन भी किया है; अन्य भी अनेक पत्रिकाओं के लघुकथा विशेषांकों का समय–समय पर सम्पादन करता रहा है। लघुकथा का आलोचना कार्य उसने शायद नवें दशक के प्रारम्भ में ही शुरू कर दिया था। मुझे याद है कि एक मुलाकात के दौरान मैंने उसे सलाह दी थी कि वह लघुकथा की आलोचना और समीक्षा आदि लिखने में अपनी शक्ति बरबाद न करे, सिर्फ रचनात्मक लेखन करे। मैं समझता हूँ उसने मेरी इस सलाह पर पूरा ध्यान नहीं दिया क्योंकि उसके बाद भी उसकी लिखी आलोचनात्मक टिप्पणियाँ मुझे पढ़ने को मिलती रही हैं। यह जानते हुए भी कि वह अब भी मेरी बात पर शायद शत–प्रतिशत अमल न करे, उसके माध्यम से मैं अन्य नवोदित लेखकों के समक्ष दोहराना चाहूँगा कि रचनात्मक लेखन से जुड़े व्यक्ति का पहला कर्म, पहला दायित्व रचनात्मक लेखन से जुड़े रहना ही है। गुणात्मक परिपक्वता रचनापरक लेखन के अभ्यास से ही आती है, आलोचनापरक लेखन के अभ्यास से नहीं। आलोचना उन्हीं को करने दें जिन्होंने अपने लेखन का आधार आलोचना को ही बनाया है। रचना की सही समीक्षा करने में वे लोग ही सक्षम सिद्ध हो सकते हैं, स्वयं रचनाकार नहीं।

(डॉ. कमल किशोर गोयनका जी की पुस्तक 'लघुकथा का समय' से साभार।)

■ ए–98, अशोक विहार फ़ेज–1, नई दिल्ली–110052

डॉ. किरन चंद्र शर्मा (स्मृतिशेष)

सार्थक और सहज लघुकथाओं की सृजनशीलता

जीवन में जैसे सभी कुछ सहज और स्वाभाविक नहीं होता ठीक वैसे ही हर सहज स्वाभाविक सदैव सार्थक नहीं होता। रचना के स्तर पर यही पहचान लेखकीय सृजनशीलता को जन्म देती है, देती रही है।

जितनी और जैसी पहचान रचनाकार को इस सत्य की होगी, उसकी सृजनशीलता उतनी ही सार्थक और सहज एक साथ होगी। प्रश्न उठता है कि वह स्वाभाविकता क्या है जो सार्थक भी हो और सहज भी? इसी प्रश्न का साहित्यधर्मी रूप यह हो सकता है कि सृजनशीलता, सहजता क्या है? या फिर, हमारे जीवन में ऐसा क्या है जिसे सृजनशील समझा जा सके, या, ऐसा क्या है जो सृजनशील नहीं है?

मुझे अपनी बात इस नकार से ही आरंभ करनी है। यदि जीवन को हम एक चुनौती मानकर चलते हैं तो सृजनशीलता भी एक चुनौती है। चुनौती हमेशा ही सार्थक के साथ–साथ सहज भी होती है। जो सहज है परन्तु सार्थक नहीं, सामान्य है– वह चुनौती नहीं हो सकता। एक उदाहरण के द्वारा स्पष्ट करूँ तो, मनुष्य के रूप में पैदा होना एक सहजता है और केवल सहजता है। इसमें कहीं भी कोई ध्वनि नहीं है कि मनुष्य के रूप में पैदा होना कोई सार्थक प्रक्रिया है, और चूंकि सार्थक प्रक्रिया नहीं है इसलिए यह चुनौती भी नहीं है, किन्तु मनुष्य बनना अथवा होना एक चुनौती है और यह चुनौती है इसलिए सार्थक और सहज दोनों एक साथ है।

अतः वह जीवन प्रक्रिया जो तमाम विपरीत परिस्थितियों में भी सहज रूप से इस चुनौती को स्वीकार करती है कि व्यक्ति मानव जाति के हित में मनुष्य बनने की निरंतर प्रक्रिया में बना रहे– वही सार्थक है, और चूंकि वह सार्थक और सहज दोनों है इसलिए वही सही सर्जनशीलता भी है। संभवत अब मुझे और स्पष्ट करने की आवश्यकता नहीं है कि जो सार्थक है, वह सहज और स्वाभाविक होते हुए भी आवश्यक रूप से सर्जनशीलता नहीं है। इसलिए रचना का रचा जाना महत्वपूर्ण नहीं है, महत्वपूर्ण है रचनाकार का सृजनशीलता से सही–सही परिचय होना। यानी कि उसका रचना के माध्यम से सार्थक और सहज की अभिव्यक्ति दे पाने में सक्षम होना। यह अभिव्यक्ति एक क्षण की भी हो सकती है और एक लम्बे कालखंड में जिये गये जीवन पक्ष की भी।

इसी तरह यह एक व्यक्ति की भी हो सकती है और एक परिवार, समाज, समुदाय या राष्ट्र की भी। बलराम अग्रवाल की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि उसे इस सृजनशीलता की पहचान है। उसकी अनेक लघुकथाएँ जो मेरे सामने बिखरी पड़ी हैं– सृजनशीलता की इस सहज पहचान से ही सर्जित हैं। इसलिए वे सार्थक और सहज एक साथ हैं। इस तरह का रचनाकार आदर्श के लिए भी सहज और स्वाभाविक वातावरण की तलाश में रहता है।

अपनी बात को मैं उसकी दो लघुकथाओं को समानांतर/समीप रखकर स्पष्ट करूँगा कि सृजनशीलता की उसकी पहचान कहाँ और कैसे सहज रचना–प्रक्रिया में ढल जाती है। इनमें से पहली लघुकथा है– 'अकेला कब तक लड़ेगा जटायु' और दूसरी– 'गोभोजन कथा'। इन दोनों लघुकथाओं का सूक्ष्म विश्लेषण करने पर स्पष्ट हो जाता है कि दोनों की जीवन पद्धति और धरातल एक नहीं हैं, पर दोनों में एक चुनौती है और वही चुनौती सृजनशीलता को जन्म देती है। ''...जटायु में तमाम विपरीत परिस्थितियों में भी दूसरे के दुःख से दुःखी हो उठना मानव बनने की

रचना–प्रक्रिया को जन्म देता है। यह सच है कि अकेला जटायु रावणवत् इतने राक्षसों से दीर्घ समय तक नहीं लड़ सकता; लेकिन अमानवीय कृत्यों के खिलाफ उठ खड़ा होना, लड़ना– यह उसका चरित्र है। लड़ने से पहले या लड़ते हुए, वह कभी भी हताश नहीं होता, पर लड़ाई हार जाने पर जो दर्द उसे होता है वह सालता है; साथ ही पूरे के पूरे समाज के सामने एक सार्थक चुनौती प्रस्तुत करता है कि मनुष्यता को अगर बचाना है या तमाम बहशीपन के खिलाफ यदि सकारात्मक लड़ाई लड़नी है, तो जटायु के साथ जुटना ही होगा। उसे इस अकेले लड़ते जाने से मुक्ति दिलाने ही होगी। यह सारी की सारी बात इस लघुकथा में एक सहज और स्वाभाविक रचना–प्रक्रिया के तहत यथार्थ की भूमि पर घटती है और उसी सहजता के साथ अभिव्यक्ति भी पाती है। इस तरह वस्तु, शिल्प और रचना–प्रक्रिया तीनों एकात्म रूप से इस रचना का निर्माण करते हैं। देखें– 'मर मिटने का तिल भर माद्दा तुम अपने अंदर संजोते तो लड़की बच जाती. ... और गुंडे....' कहती, मेरे मुँह पर थूकती.... थू थू करती आँखें। उफ्!'' इससे बड़ी और सार्थक सृजनशीलता क्या होगी कि वह एक सार्थक और सहज हलचल पैदा कर दे।

यथार्थ की इस भूमि से बिल्कुल विपरीत भूमि है 'गोभोजन कथा' की। आदर्शोन्मुख भूमि। रचनाकार यहाँ सहज यथार्थ का इस्तेमाल न कर सहज मनोभावों का इस्तेमाल करता है। बच्चा पाने की अभिलाषा में गाय को (लघुकथा में गर्भिणी गाय) आटा खिलाने का उपक्रम एक पारंपरिक मानसिक भाव है जो एक मनोभाव प्रेरित कर्म को जन्म देता है। वर्षों का यह संस्कार उस समय एकदम डगमगा जाता है जब कथानायिका माधवी गाय को खिलाने के लिए लाया गया आटा गाय के स्थान पर बशीर की गर्भिणी किन्तु भूखी और असहाय विधवा को दे देती है। कहा जा सकता है कि यह एक विचारधारात्मक आदर्श की स्थापना है जो यथार्थ पर चोट करता है, और चूंकि यथार्थ पर चोट करता है तो सहजता पर भी चोट होती है, भले ही वह कितनी भी सार्थक क्यों न हो। लेकिन, इस लघुकथा की सहजता दूसरी है। वह एक संस्कार पर दूसरे संस्कार का आघात है। गाय के स्थान पर विधवा, वह भी विजातीय/विधर्मी, की मदद करना विचारधारा से प्रेरित कर्म न होकर तत्कालीन यथार्थ से प्रेरित होकर एक संस्कार पर दूसरे संस्कार का आघात है। ज्योतिषी ने कहा है कि गर्भिणी गाय को खिलाने से उसकी कोख हरी हो सकती है। यह एक तरह का पारंपरिक संस्कार है जो उसे इस कार्य के लिए विवश करता है लेकिन यहीं एक दूसरे तरह का संस्कार बशीर की गर्भिणी विधवा को देखकर सक्रिय हो उठता है जो पहले संस्कार पर अधिक शक्ति से प्रहार करता है। एक तरह से मानवता के प्रति दयावान होना एक खास तरह के करुणाजनक संस्कार को जन्म देता है जो निजी और स्वार्थपूर्ण संस्कारों पर आज तक हर तरीके से भारी पड़ता है। इस दूसरे आघात का परिणाम निश्चय ही व्यापक और अधिक मानवीय है। सामाजिक स्तर पर व्यक्ति हमेशा ही मानवता का पक्षधर रहा है, इसलिए अनिश्चित परिणाम वाला स्वार्थ तिरोहित होकर निश्चित परिणाम वाला संस्कार बन जाता है। इस तरह इस लघुकथा की रचना–प्रक्रिया एक सहज और सार्थक सृजन को जन्म देती है।

इन दोनों ही लघुकथाओं के विश्लेषण से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि बलराम अग्रवाल में सृजनशीलता की पहचान है जो उससे रचना करवाती है। यहाँ एक बात स्पष्ट कर दूँ कि जब मैं यह कह रहा हूँ कि जीवन में सार्थक सहजता ही रचनाधर्मिता को जन्म देती है अथवा देती रही है तो इसका अर्थ यह कतई नहीं है कि सहजता और स्वाभाविकता मात्रा निरर्थक होती हैं। सहजता और स्वाभाविकता जीवन का गुणधर्म हैं और वह रचना में भी उसी तरह सहायक होता है जिस तरह जीवन में; किन्तु सृजनशीलता का कारण महज सहजता और स्वाभाविक नहीं हो सकतीं। अपनी बात को और स्पष्ट करने के लिए उनके संग्रह 'सरसों के फूल' की दो अन्य लघुकथाओं 'गांठ' और 'गुलमोहर' को लेता हूँ।

किसी भी समय 'गाँठ' का लग जाना एक अनायास क्रिया है, किन्तु ध्वजारोहण जैसे संवेदनशील अवसर विशेष पर गाँठ का लग जाना, वह भी इस तरह कि खुलने में ही न आए– रचनाकार की सार्थक उपस्थिति को प्रकट करता है। इतना ही नहीं; मिनिस्टर की चापलूसी के लिए उसी व्यक्ति को पीछे धकेल देना जिसे उस गाँठ को पाने की दक्षता प्राप्त थी– इस सार्थक उपस्थिति को और व्यापक और गहरा बना देता है। तत्पश्चात दोषी मानकर उसी व्यक्ति का निलंबन तथा उसी का गाँठ खोलने के लिए आमंत्रण! यह उपस्थिति अर्थ की अनेक परतों को खोलती–सी प्रकट होती है। इस तरह सृजनशीलता परत दर परत सार्थक होती चली जाती है। दूसरी लघुकथा 'गुलमोहर' भी लगभग उसी भूमि की लघुकथा है। आजादी की लड़ाई में बागी करार दिये गये देशभक्त द्वारा गुलमोहर का एक पौधा जतन बाबू के बंगले के बाहर लॉन में रोप दिया जाता है। आजादी पा लेने के उपरांत जतन बाबू दिन–रात उस पौधे की देखभाल करते हैं और प्रतीक्षा करते हैं कि हरे–भरे इस वृक्ष पर फूल क्यों नहीं लग रहे? यहाँ सहज और सार्थक की प्रक्रिया में अनेक अर्थ एक साथ फूटते से दिखाई देते हैं। चाहकर पालने–पोसने पर भी आजादी का यह पेड़ कोई फूल क्यों नहीं देता? यही प्रश्न इस लघुकथा को सहज और सार्थक एक साथ बना देता है। इस तरह की अनेक लघुकथाएँ इस संग्रह में है जो लघुकथा की सृजनशीलता की सार्थक अभिव्यक्ति कही जा सकती है।

मेरी बात अधूरी ही रहेगी यदि मैं यहाँ वर्तमान स्थिति को उजागर करने वाली सर्वाधिक सशक्त लघुकथा 'अलाव के इर्द–गिर्द' की चर्चा नहीं करता। यह लघुकथा, लघुकथा के विधान और सही सहज सृजनशीलता दोनों को एक साथ दर्शाती है। 'अलाव' गाँव और गरीबी से जुड़ा शब्द है। एक तरह से, जहाँ यह लघुकथा समाप्त होती है, वहाँ से ही यह सारा संकलन अपनी व्यापकता और विकीर्णता ग्रहण करता दिखाई देता है। यानी हम गाँव के अलाव के इर्द–गिर्द से शुरू होकर उस व्यापक अलाव की ओर अनजाने ही बढ़ने लगते हैं जिसमें हमारा घर, हमारा पड़ोस, हमारा गाँव, हमारा शहर और हमारा देश सभी कुछ जल रहा है और हम उसके केवल इर्द–गिर्द बतियाते चले जा रहे हैं, बस। कितनी बड़ी विवशता के बीच जी रहे हैं हम कि सब कुछ जलता देखकर भी उसके इर्द–गिर्द इकट्ठा–भर होने में अपनी सार्थकता मान लेते हैं और निरंतर चलता रहता है यह सिलसिला– मुझे (और शायद

सभी को) कई सारे मुद्दे इसी सिलसिले में से ढूँढ़ने हैं। यहीं आकर यह भी लगने लगता है कि बलराम अग्रवाल की लघुकथाएँ तीखी और ठंडी एक साथ होती हैं। 'अलाव के इर्द–गिर्द' से ही यह भी पता चलता है कि उनकी लघुकथाओं में तीखापन कहाँ जाकर अपना काम कर जाता है। हालांकि यह परस्पर विरोधी बात लगती है, पर यह विरोध रचनाधर्मिता को और पुष्ट करता है। दरअसल, जो अलाव जलाया है बदरू ने, मिसरी उसे धीरे–धीरे कुरेदता हुआ अपनी आँच से फूँक देता है। बात 'सुराज' से शुरू होकर 'पिरजातंत' तथा 'कोट–कचहरी' से होती हुई 'न्याय–व्यवस्था' पर पहुँचती है और वहाँ से सीधे खेत से सींचते हुए श्यामा से जुड़कर चौधरी पर ठहर जाती है। एक क्षण को ऐसा लगता है कि रचना चौधरी पर आकर ठहर गई है और यहीं अलाव की आँच धीमी पड़ने लगती है, पर मिसरी फिर फूँक मारकर उसे दहका देता है। व्यक्तिगत अनुभव के दायरे में सभी–कुछ समेटता हुआ यह कथाकार भिन्न–भिन्न और व्यापक आयाम दर्शाता हुआ चलता है। मजेदार बात यह है कि जहाँ लगता है कि अलाव बुझ रहा है, वहाँ वह धीरे से उसे कुरेदता हुआ पुनः उसमें फूँक मारने लगता है। इसीलिए जिस अंतर्विरोध की बात मैंने ऊपर कही थी कि इनकी लघुकथाएँ तीखी और ठंडी एक साथ हैं– वही अंतर्विरोध इस लघुकथा–लेखक की शक्ति बन जाता है। जहाँ बड़े ही ठंडेपन के साथ कुछ चुभता चला जाए वहाँ उस चुभन की गहराई का अनुमान सहज ही नहीं लगाया जा सकता। बलराम अग्रवाल के कथाकार की यह विशेषता उसकी अन्य लघुकथाओं में भी व्यक्त हुई है– 'बदलेराम कौन है', 'युद्धखोर मुर्दे', 'जुबैदा', 'कलम के खरीदार' जैसी तेज चुभन वाली लघुकथाओं में भी उसका यह ठंडापन सहज ही हमें आकर्षित करता है। फिर, 'तीसरा पासा', 'अंतिम संस्कार', 'नया नारा', 'अज्ञात गमन', 'गुलाम युग', 'पुश्तैनी गाम' जैसी लघुकथाएँ तो है ही इस पद्धति पर रची हुई।

इस तरह से बलराम अग्रवाल की लघुकथाएँ मात्र लेखन तक सीमित नहीं रह जाती वरन् लघुकथा की सृजनशीलता का एक उदाहरण हमारे सामने प्रस्तुत करती हैं। (समालोचक स्मृतिशेष डॉ. किरन चन्द्र शर्मा खालसा कॉलेज, दिल्ली में हिंदी विभागाध्यक्ष थे। 'सहकार संचय' जनवरी 1998 में प्रकाशित उनका यह आलेख ब्लॉग 'लघुकथा वार्ता' से अविकल प्रस्तुत है।)■

डॉ. बृजकिशोर पाठक (स्मृतिशेष)

कलाजयी बलराम अग्रवाल की कालजयी लघुकथाएँ

...हिंदी लघुकथा लेखन और मूल्यांकन में जिन कुछेक लोगों ने सशक्त रचनाधर्मिता से अपनी अलग पहचान बनाई है, उनमें बलराम अग्रवाल का नाम कनिकाधिष्ठित है। लघुकथा–लेखन में कूड़ा–करकट परोसने वाले तथाकथित नामी–गिरामी हंगामेबाज लोगों की भीड़ छाँटकर जिन कुछेक लोगों ने इस रचना विधा को सही मार्ग दिखलाया, उनमें श्री अग्रवाल का इतिहास इसलिए बनता है क्योंकि इन्होंने आलेखों के माध्यम से भी लघुकथा को एक

निश्चित रूप प्रदान किया है। उनकी लघुकथाएँ अपनी विशिष्ट पहचान के कारण विभिन्न पत्रिकाओं में ही नहीं छपी, वरन् 'कथानामा' और 'लघुकथा कोश' में भी सादर संकलित हुईं। यह मामूली बात नहीं है कि इन्होंने अपनी स्वधर्मिता से लघुकथा को आसान रचनाविधा मानकर रातों–रात साहित्यकार बनने वाले साधन–सम्पन्न सेठिया सामंतों का कद इतना छोटा कर दिया कि वे बौने बन गये। बलराम अग्रवाल के लघुकथाकार की यही ऐतिहासिक भूमिका है।

...बलराम अग्रवाल की लघुकथाएँ मूलतः लघुत्तर लघुकथा {इसी आलेख के आरम्भ में पाठक जी ने लघुकथा को तीन रूपों– लघुत्तम लघुकथा, लघुकथा और लघुत्तर लघुकथा में विभक्त किया है।'(अं.सं.)} के साँचे में ढली हुई हैं, वैसे इन्होंने 'शोषितों को देखकर' व 'औरत और कुर्सी' (बाद में इस रचना का शीर्षक 'कुर्सी का बयान' कर दिया गया –बलराम अग्रवाल) जैसी दूसरे दर्जे की भी कुछ कथाएं लिखी हैं। अग्रवाल जी अपनी लघुकथाओं को, चुटकुला जैसी क्षणिकाएँ लिखकर लघुकथा को होम्योपैथी गोलियाँ या कैप्सूल बाँटना नहीं चाहते। उनकी लघुकथाओं की रूपाकृति से स्पष्ट होता है कि वे मानकर चलते हैं कि लघुकथा यदि कथा साहित्य की कोई स्वतंत्र विधा है तो उसमें कहानीपन अवश्य होना चाहिए। बलराम अग्रवाल की लघुकथाएँ एक ओर व्यंजना शक्ति से उत्पन्न व्यंग्य के कई संदर्भ निर्मित करती हैं तो हास्य–व्यंग का तेवर और मिजाज भी दर्शाती हैं। यह काम पाठकों, समीक्षकों और आलोचकों का है कि वे उनकी लघुकथाओं का विश्लेषण कर बतावें कि किस दक्षता से वे आज के आदमी, समाज और परिवेश की त्रासदियों, विद्रूपताओं, विसंगतियों और विडम्बनाओं की मनोवैज्ञानिक सच्चाई की हममें अंतः प्रेरणा जागृत करती हैं। वस्तुतः उनकी लघुकथाएँ वर्तमान जीवन की सड़ाँध की तीव्र अनुभूति की स्वयं प्रेरित प्रतिक्रिया हैं, जो हमारे अंतस में बिजली की कौंध रह–रहकर प्रकट करती हैं और कुछ कर डालने की प्रेरणा देती हैं।

बलराम अग्रवाल की लघुकथाएँ हममें अहसास पैदा कराती हैं कि वे किसी समस्या पर आधारित नहीं है। वे वस्तुतः युग–सत्य के स्थिति–चित्र हैं। अग्रवाल जी की दृष्टि यथार्थवादी है। युग की किसी सच्चाई पर उनकी गहन अनुभूति, तीव्र ज्वाला के रूप में कहीं काव्य–सत्य के रूप में प्रकट है तो कहीं देखा–भोगा हुआ यथार्थ लेखक की गहरी संवेदना में डूब जाता है। यही कारण है कि अग्रवाल की लघुकथाओं में संवेदित अनुभूत स्थितियाँ चित्रों–बिम्बों के माध्यम से फूटती हैं। प्रायः हर स्थल पर वे वर्तमान जीवन की त्रासदियों, विसंगतियों, विद्रूपताओं को उकेरते हैं और एक चित्रकार की भाँति उनका रेशा–रेशा अभिव्यक्ति के विविध रंगों में कलम की कूची बनाकर डुबोते–उतराते हैं।

इस प्रसंग में श्री कुलदीप जैन द्वारा संपादित 'अलाव फूँकते हुए' में संकलित उनकी लघुकथा 'ओस' का मूल्यांकन आवश्यक है। ...'ओस' लघुकथा अपनी संपूर्ण प्रस्तुति में छायावादी काव्य तत्वों पर आधारित है जिसके कारण बलराम अग्रवाल एक साथ कवि–कहानीकार की भूमिका बखूबी निभाते हैं। एक किस्सागो की भाँति, अपना

कवि–व्यक्तित्व सँभाले अग्रवाल जी इस लघुकथा का आरम्भ करते हैं– ''रात्रि की शीत का आभास पाकर सूर्य समय से शायद कुछ पहले ही संध्या के आँचल में छिप जाना चाहता था। शरीर के ताप को चीर देने वाली शीत ने हल्के अंधकार में ही नगर के मकानों के द्वार बंद कर दिये थे। धीरे–धीरे घोर अंधकार नगर की गलियों में बिखर गया। चिंघाड़ती वायु शीत का सहयोग पाकर वृक्षों का सीना चीर देना चाहती थी।'' वे इसी काव्यात्मक भाषा में आगे बढ़ते हैं– ''नगर से दूर खेतों–खलिहानों के बीच एक पुरानी झोपड़ी में दीपक की लौ शीत लहर को न झेल पाने के कारण कुछ समय काँपने के पश्चात लुप्त हो गई। खेतों में कहीं दूर कई सियार एक साथ हूके...''। इस काव्यात्मक चित्रमय अभिव्यक्ति के साथ एक कहानी उभरती हे कि एक झोंपड़ी में एक वृद्धा फटे–चिटे लिहाफ में लिपटी पड़ी है।... लेखक इस लघुकथा का अन्त करते हुए लिखता है– ''मोहक कहलाने वाली गुनगुनी किरणें शीत वायु को पीठ पर टिकाकर श्मशान को एक और आगमन का संदेश सुना आई।''

मैं समझता हूँ, ऐसी संवेदनात्मक शैली का सफल प्रयोग हिंदी के बहुत ही कम लघुकथाकार कर पाये हैं। स्वयं बलराम अग्रवाल ने अपनी अन्य कथाओं में इसका प्रयोग पुनः नहीं किया है। इस लघुकथा में प्रयुक्त सारे स्थिति–चित्र करुण संवेदना के साथ व्यंग्य की चिंगारियाँ बिखेरते हैं। यदि सावधानी से इस लघुकथा का पाठ किया जाये तो अनुभव होगा कि इसकी संरचना ही गंभीर व्यंग्य के रूप में हुई है। सारे के सारे शब्द–वाक्य रह–रहकर व्यंग्य के तीर छोड़ते हैं। लघुकथाकार ने पड़ोसियों की दीनता को उकेरते हुए, बुढ़िया के अकेलेपन को चित्रित कर पाठकों में करुणा के साथ उत्तेजना पैदा की है। तारीफ की बात है कि लेखक लेखन में कहीं भी भावावेश में नहीं आता, वह केवल गाँव की स्थिति का चित्रण आत्मानुशासन के साथ करता जाता है और हममें उस समाज को फूँक देने का आवेश पैदा करता है जिसमें धन्ना सेठ जैसा क्रूर, ठिंगना जैसा जड़ और पड़ोसियों जैसे असमर्थ व्यक्ति जी भर रहे हैं।

डॉ. किरन चंद्र शर्मा ने बलराम अग्रवाल की लघुकथाओं पर टिप्पणी देते हुए लिखा है कि उनकी कथाएँ तीखी और ठण्डी एक साथ होती हैं। ....उनकी लघुकथाओं में तीखापन....आकर बड़े ठण्डे तरीके से काम कर जाता है।... डॉ. शर्मा की उक्त स्थापना बलराम अग्रवाल की लघुकथाओं की प्रवृत्ति और पाठकीय प्रभाव तथा कथाभास की संरचना पर बहुत सटीक बैठती है।... वे संभवतः यह बताना चाहते हैं कि श्री अग्रवाल की लघुकथाओं के पाठकीय प्रभाव सहज नहीं होते, वे अनिवार्य सजग पाठ–प्रक्रिया की माँग करते हैं। एक साँस में उनकी लघुकथाओं को पढ़ा जाये तो पाठक को सहज रूप से कुछ भी नहीं मिलेगा, उनकी लघुकथाओं से आरपार गुजरने में बड़ी सतर्कता की अपेक्षा होती है। यही बलराम अग्रवाल की लघुकथाओं की पठन–मुद्रा है।

बलराम अग्रवाल ने स्वातंत्र्योत्तर शहर, महानगर और गाँवों की बदल रही दोगली मानसिकता और संस्कृति को अपनी लघुकथाओं का आधार बनाया है। शहरों–महानगरों में गाँवों से भागे लोगों की स्वार्थपरक जड़ता भी इनकी लघुकथाओं का केंद्र बिंदु है। दूर–दराज स्थित गाँवों में पुरानी और नई पीढ़ी का मानसिक

टकराव, यथास्थितवादी जीवन–मूल्यों की आँच में जलती हुई उनकी जिंदगी इनकी लघुकथाओं में घटना और स्थिति के मेल से कथाभास की संरचना करती है। कहीं तो शहर से लेकर गाँवों तक फैली हुई नई पीढ़ी की जागरूकता मिलती है और कहीं बेहद ग्रामीण संस्कार से जुड़े अपनी दुःस्थिति पर किंकर्तव्यविहीन लोग करुणा में भीगते मिलते हैं। इसी कारण इनकी लघुकथाओं में कहानी की सतर्कता मिलती है तो नगर, ग्राम और आंचलिक कथाओं का समन्वित संदर्भन। इस प्रसंग में उनकी एक कलाजयी लघुकथा 'गुलमोहर' की प्रतीकात्मक व्यंग्यात्मक प्रस्तुति दृष्टव्य है। आजादी के पूर्व देशप्रेमियों का दिया गया बलिदान और आजादी के प्रति आज के आदमी का मोहभंग प्रस्तुत लघुकथा का मूलाधार है। अग्रवाल जी ने इस कथ्य–सत्य को आधार बनाकर यह सुघर लघुकथा लिखी है। इस लघुकथा की प्रस्तुति उन लोकगीतों की भावभूमि पर आधारित है, जिनमें कहा गया है कि पति ने जिस पौधे को लगाकर विदेशगमन किया, वह हरा–भरा होकर फूल–फल देने लगा है। पर, उसके लगाने वाले पति अब तक नहीं लौटे। वह लोकगीत प्रतीकात्मक ढंग से पत्नी की काम–पीड़ाओं को मुखरित करता है। बलराम अग्रवाल ने कुछ इसी पद्धति पर 'गुलमोहर' की रचना की है। गुलमोहर के पौधे के साथ आजादी के सपनों के बिखर जाने की पीड़ा की बड़ी ही सफल कलात्मक प्रतीकात्मकता की योजना इस लघुकथा में हुई है।... इस लघुकथा द्वारा बलराम ने व्यंग्य किया है कि जिस आजादी की प्राप्ति के लिए क्रांतिकारियों ने अपने को शहीद बनाया, इसे प्राप्त करने के बाद आजादी के दीवानों के सपने बिखर गए और एक भी उनकी मनोकामना सिद्ध नहीं हुई।

बलराम अग्रवाल ने कलाजयी ही नहीं, कालजयी लघुकथाएँ भी लिखी हैं उनकी लघुकथा 'तीसरा पासा' इसी प्रकार की है। स्वातंत्र्योत्तर भारत में पूँजीपतियों का वर्चस्व राजनीति में कैसे बनता है, चुनावी राजनीति व्यवसायिक कैसे होती जा रही है, और आम आदमी चुनाव से कैसे ठगा जाता है– इस लघुकथा के मूल बिंदु हैं। लेखक ने इस लघुकथा में इन्हीं बिंदुओं के, प्रदेश पार्टी अध्यक्ष कुबेर पांडे और जिलाध्यक्ष शर्मा जी के तर्कों–वितर्कों के माध्यम से, बड़े तीखे व्यंग्य के शर–संधान किए हैं। व्यंजना–शक्ति से संपन्न यह लघुकथा अंततः प्रतीकात्मक संदर्भन देकर प्रस्तुति कला की अद्‌भुत दक्षता प्रमाणित करती है।... इस लघुकथा की गहरी मार तब देखने को मिलती है जब लेखक अंत में टिप्पणी देता है– ''शोषण से त्रस्त दिन–रात चूँ–चाँ चिल्लाता हॉल की छत के बीचो–बीच लटका पंखा बिना किसी विद्रोही स्वर के दनादन घूमता रहा। यहाँ छत पूरे देश का, पंखा शोषित पीड़ित देश के आम आदमी का प्रतीक है। ऐसी प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति के साथ गहरे व्यंग्य–रंग से सना हुआ वाक्य कम ही लघुकथाओं में देखने को मिलता है। इस लघुकथा में जो तराश है, उत्सुकता की क्षमता है, व्यंग्य के विभिन्न स्तरों के उद्‌घाटन की जो दक्षता है, वह अन्यत्र नहीं दिखती। इस लघुकथा के कामा, फुल स्टॉप बोलते हैं और आज के राजनीतिक प्रजातंत्र के माहौल की विद्रूपता को लेखक यथार्थ के स्तर पर बखूबी उतारते हैं।...

'अंतिम संस्कार' बलराम अग्रवाल जी की एक नगर–कथा है। यह उनकी

यथार्थवादी संवेदनहीन मानवीय विवश चेतना की परिणति है। शहर में लगे कर्फ्यू के दौरान पिता के अंतिम संस्कार को लेकर पुत्र की विवशता से उत्पन्न संवेदनशून्यता की परिणति इस लघुकथा में जो चित्रित है, वह अत्यंत मर्मघाती है।... पुत्र अंत में निर्णय लेता है कि आत्मरक्षा के लिए उसने जो औजार रखे हैं, उसी को पिजाकर उससे अपने पिता का पेट फाड़कर सड़क पर फेंक देगा कि दंगे के दौरान उसकी हत्या की गई है। वह खंजर को अपने सिरहाने रखकर आँसुओं से भरी आँखें लिए रात के गहराने की प्रतीक्षा में खाट पर पड़ जाता है। लघुकथा एक मर्मभरी विवशता की करुणा बहाकर यहीं पर समाप्त तो होती है, पर अपनी संपूर्ण प्रस्तुति के साथ कर्फ्यू के नाम पर जो आर्थिक अभाव से मानवीय जड़ता का जो संकेत है, वह लेखकीय संवेदना का उदाहरण भी बनाया है।

इसी प्रकार 'नया नारा' एक ऐसी नगर–कथा है, जिसमें ग्रामीण मजदूरों की हड़ताल के माध्यम से व्यंग्य किया गया है कि आज के पूंजीवादी, औद्योगिक युग में जैसे राष्ट्रीयता, भावना से जुड़कर झण्डों और वेशभूषा तक सीमित हो गयी है, वैसे ही मजदूरों के अधिकार और उनकी माँगे इंकलाबी नारों और उनके झण्डो तक सीमित हो गये हैं। इस लघुकथा में पूरक नारा 'झंडाबाद' इसी तथ्य की ओर संकेत देता है।... लेखक ने गत्यात्मक चित्र उकेरते हुए लिखा है– जंगी जब नारे बोलता है तो उसके गले की सारी नसें मुट्ठी भींचकर हवा में तैरते सैकड़ों हाथों की तरह खड़ी हो जाती हैं।'' इस चित्र से जंगी का विद्रोही व्यक्तित्व सामने आता है तो 'हवा में तने सैकड़ों हाथों' द्वारा हड़ताल की निरर्थकता का संकेत मिलता है। जंगी जब उत्तेजित होकर कहता है कि– 'क्या होता है सही नारा? नारे बनाये जाते हैं, रटे नहीं जाते.... शोषण के खिलाफ महज आवाज नहीं, तलवार उठाऊँगा मैं.... जब तक दमन चलता रहेगा यही कहूँगा।'' जंगी के इस कथन में मजदूरों की जागृति का उद्घाटन हुआ है।...

इसी तरह की एक नगर–कथा है– 'और जैक मर गया'। इस रचना में ग्रामीण व्यक्ति की नौकरी की चाह को शहरी धन्ना सेठ के शुष्क व्यवहार से जोड़कर जड़ता और संवेदनहीनता के साथ असंबद्धता के सिद्धांत को कलात्मक प्रस्तुति दी गई है।... कितनी बड़ी विडंबना है कि धनोन्माद में के. के. साहब आदमी को कुत्तों की पाँत में रखकर सोचते हैं! किस्मत का हर तरह मारा गोखरू कर्जा चुकाने के लिए के. के. के यहाँ कुत्तों का काम करने को विवश है! कर्जे की मार और भूख की पीड़ा तथा अकेला बना हुआ बेचारा गोखरू संवेदनहीन होकर जैक की हत्या कर अपनी नौकरी पक्की कर लेता है! विवशता के परिणाम की यह हद है। अग्रवाल जी की यह लघुकथा चुप्पी के साथ विवरण देती जाती है, समूची कथा का बयान करती जाती है; पर बीच–बीच में 'तलवे चाटना', 'पूँछ हिलाना' आदि की बात चलाकर धारासार व्यंग्य की वर्षा करती जाती है।

इसी प्रकार 'अकेला कब तक लड़ेगा जटायु' एक नये मिजाज की लघुकथा है। इस लघुकथा में शाश्वत संवेदना है जो आज की सभ्यता की उपज है। आज के आदमी का एक वर्ग समाज के परंपरागत आदर्शों, नैतिकता को तिलांजलि देकर अपहरण, बलात्कार, हत्या में लगा हुआ है। अपराधियों को अपराध में संलग्न देखकर

भी हम अलग कट जाते हैं। जो एकाध लोग दुस्साहस दिखाकर भिड़ना चाहते हैं, वे अकेले पड़ जाते हैं और जोखिम उठाकर शारीरिक दंड के शिकार हो जाते हैं। अगर अपराधियों से भिड़ने के लिए लोगों में एकता हो जाय तो इक्के–दुक्के इन गुंडों की एक न चले! यह लघुकथा इसी तथ्य पर आधारित है; पर बीच–बीच में सेक्स की मनोवैज्ञानिक सच्चाई को भी उकेरा गया है।... बलराम अग्रवाल केवल वर्तमान नगर–महानगर जीवन की विडंबनाओं के कथाकार नहीं है। ये केवल उन लोगों तक अपनी लघुकथाओं को सीमित नहीं रखते जो जीने–कमाने के ख्याल से शहरों में नौकरी करते या मजदूर बने हुए हैं। नाना प्रकार के संपन्नों द्वारा राजनैतिक चालबाजी करने वाले ही इनकी कथाओं में नहीं आते, बल्कि वे लोग भी यहाँ मौजूद हैं जो शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आर्थिक शोषण के शिकार होकर छटपटाहट भरी जिंदगी जीने के लिए विवश हैं। अग्रवाल जी के कथाकार का दूसरा रूप आज के गाँव से भी जुड़ा है। इसी कारण ग्राम्य–जीवन से जुड़े हुए हिंदी कहानी–लेखन में जो ग्राम–कथा और आंचलिक–कथा के आंदोलन चले, उनको भी इन्होंने अपनी लघुकथाओं में समेट लिया है। वे एक ओर अपनी कथाओं में परंपरावादी अंधविश्वासों में जीने वाले लोगों का चित्रण करते हैं तो नई जागरूकता के प्रति युवा पीढ़ी की मानसिकता को बखूबी उतारते हैं। 'रामभरोसे', 'बदलेराम कौन है', 'अलाव के इर्द–गिर्द' आदि लघुकथाएँ वस्तुतः आज के दूरदराज गाँवों में फैली हुई पुरानी और नई पीढ़ियों के टकराव और नवजागरण के आयामों का सटीक संदर्भन हैं। यह उनकी यथार्थवादी संवेदनशीलता का प्रमाण है।

'रामभरोसे' शीर्षक लघुकथा ग्राम–कथा और आंचलिक–कथा का समन्वय है। 'रामभरोसे' लोककथा में ग्रामीण युवावर्ग की नवजागृत मानसिकता को आयाम देकर पुरानी पीढ़ी के अंधविश्वासों से टकराव का बड़ा ही जीवंत चित्रण है।...

इस प्रसंग में बलराम अग्रवाल की बहुचर्चित और बहुप्रशंसित लघुकथा 'अलाव के इर्द–गिर्द' का मूल्यांकन आवश्यक है। यह एक सशक्त ग्राम–आंचलिक कथा है। इस लघुकथा में बदरू–मिसरी के वार्तालाप के द्वारा लेखक ने प्रतिपादित किया है कि आजादी के बाद भी जमीदारी प्रभाव और शोषण, उत्पीड़न और हड़पने की नीति बरकरार है। श्यामा और बदरू तथा चौधरी की सूच्यकथाओं के माध्यम से लेखक ने ग्राम्य–जीवन में अभी भी चल रही शोषण और हड़प–नीति को साकार करते हुए प्रजातंत्र और आजादी की व्यर्थथा को उजागर किया है। न्याय–प्रक्रिया पर यहाँ करारी चोट मारी गई है।... गांधीवादी विचारधारा की निरर्थकता और आजादी के प्रति ग्रामीणों के मोहभंग को यहाँ बड़ी ही कलात्मक दक्षता से व्यंजित किया गया है।...

बलराम अग्रवाल की लघुकथा 'बदलेराम कौन है' एक ग्रामीण लघुकथा है। इस रचना में ग्राम की बदहाली और ग्रामोत्थान का आश्वासन देने वाले राजनेताओं की मुखोटेबाजी को यथार्थ स्वर दिया गया है। लेखक ने बदलेराम को चुनावी जीत हासिल करने वाला राजनीतिक दलदल बताया है।...

बलराम अग्रवाल की अधिकांश लघुकथाएँ आत्मकथ्य शैली में लिखी गई हैं। वे कई लघुकथाओं में विभिन्न पात्रों का रूप धारण कर रचना के साथ चलने वाली घटना

या स्थिति में अपने को साथ लेकर चलते हैं, ताकि कथ्य की विश्वसनीयता अधिक जानदार और लेखक की स्वानुभूत मार्मिकता सिद्ध हो। जहाँ अग्रवाल जी ने अपने को अलग रखकर लघुकथाएँ लिखी हैं, वहाँ पर लेखकीय टिप्पणियाँ ऐसी बनी हैं कि लगता है कि रचना की घटना–स्थितियाँ लेखक के भोगे हुए यथार्थ से प्रादुर्भव हैं। कहीं भी ऊपर से ओढ़ा हुआ मामला नहीं लगता। ऐसा भी नहीं लगता है कि लेखक ने किसी से सुनकर किसी लघुकथा की रचना की है।...

बलराम अग्रवाल की लघुकथाओं की विशेषता है कि पात्रों के चयन और उनके चारित्रिक–विन्यास में वे अत्यंत सजग हैं। उनके पात्र वर्तमान जीवन में पैदा हुई विसंगति और विद्रूपताओं की उपज हैं। हर वर्ग, हर जाति और हर मनःस्थिति के लोग इनकी लघुकथाओं में हैं। इसी कारण अग्रवाल जी की लघुकथाएं एक साथ घटनाप्रधान और चरित्रप्रधान हो जाती हैं। सबसे मजे की बात यह है कि पात्रों के नाम उनकी गुणवत्ता या चरित्र को ध्यान में रखकर दिये गए हैं। बदलेराम, रामभरोसे, जतन बाबू ऐसे ही लोग हैं जो अपनी करनी–धरनी से अपने नाम की सार्थकता सिद्ध करते हैं। इनकी लघुकथाओं में कुबेर पांडे और शर्मा जी जैसे व्यवसायिक राजनेता है तो कड़क कुर्ता पाजामा पहने लौंडे–लफाड़े भी हैं; जो सिद्धांतहीन होकर चुनाव–काल में पैसा कमाने के लिए मालदार पार्टी कार्यकर्ता बनकर अपनी रोटी सेकते हैं। इनकी लघुकथाओं में जंगी जैसा मजदूर नेता है तो गोखरू जैसा ग्रामीण युवक भी, जो अपनी पत्नी की चिकित्सा के दौरान लिए गए कर्ज को चुकाने के लिए कुत्तों का काम सीखता और करता है।...

बलराम अग्रवाल लघुकथा में चूँकि कहानी के हिमायती हैं, इसलिए इनकी रचनाओं में स्थिति और वातावरण के चित्रण पर अधिक सतर्कता देखने को मिलती है। इनके चित्रण में कभी काव्यात्मकता का स्वरूप देखने को मिलता है, तो कभी सीधी–सरल भाषा में गत्यात्मक चित्रों–बिम्बों का आयोजन। यह दक्षतापूर्ण वैदुर्य बहुत कम लघुकथाओं में देखने को मिलता है। अन्य लघुकथाकार या तो नाटकीय त्वरा से सहसा अपनी लघुकथाओं को आरम्भ करते हैं और कुछेक पात्रों के माध्यम से घटना–स्थिति उठाते–पटकते झटके से अंत देकर कथ्य को अंतिम वाक्य से कहकर स्वशब्दवाच्यत्व दोष से ग्रसित कर देते हैं।

बलराम अग्रवाल की लघुकथाएं वातावरण, स्थिति चित्रण के रंग में पात्रों को समेटते हुए झटके देती हैं जरूर, पर कथ्योद्घाटन का उपर्युक्त दोष कहीं भी देखने को नहीं मिलता। बलराम अग्रवाल पाठक–समीक्षकों का दायित्व समझते हैं कि वे उनके लघुकथाओं के कथ्य को संपूर्ण रचना के अंतर्गत चित्रित स्थिति वातावरण के संदर्भ में विश्लेषित–उद्घाटित करें। उनकी प्रस्तुति का यह यथार्थवादी आग्रह वही है जो प्रेमचंद की सर्वश्रेष्ठ तीन कहानियों– शतरंज के खिलाड़ी, कफन और पूस की रात का है। बलराम अग्रवाल की लघुकथाओं में ठंड के स्थिति चित्र बार–बार आते हैं, विभिन्न संदर्भों आयामों से जुड़कर।... उनकी लघुकथाओं में पात्रों के क्रियाकलाप भी गत्यात्मक चित्र खींचते हैं। 'अंगूठी' शीर्षक लघुकथा में जमूरे की चादर और जमूरे की हरकतों का चित्रमय दृश्यांकन किया है। 'अलाव के इर्द–गिर्द' में इसी प्रकार शुरू से

लेकर चित्रात्मक दृश्य और पात्रता साकार हुई है।...

बलराम अग्रवाल की लघुकथाओं में मुख्यरूप से तीन वर्गों के पात्र हैं। पहले वर्ग के पात्र वे हैं जो नगर–महानगरों में रहते हैं। दूसरे वर्ग में वे लोग आते हैं जो गाँव छोड़कर शहर में आजीविका के लिए रह रहे हैं। तीसरा वर्ग उन लोगों का है जो गाँवों में जनमे, बढ़े और वहीं के वातावरण में जी रहे हैं। अग्रवाल जी ने अपनी लघुकथाओं में इन तीनों वर्गों के लोगों को ध्यान में रखकर ही अपने लघुकथाओं में संवाद योजना की है। शहरी वर्ग के पात्र तो शुद्ध भाषा अंग्रेजीनुमा भाषा बोलते हैं; पर गाँव से शहर में आये लोगों की भाषा में शहरी और ग्रामीण संस्कार मिले–जुले हैं। जो लोग बिल्कुल गाँवों के हैं, वे आंचलिक भाषा का प्रयोग करते हैं। शहर में पलने वाले विभिन्न वर्ग के पात्र अपने अनुकूल भाषा बोलते हैं।...

इस प्रकार, बलराम अग्रवाल हिंदी के उन कुछेक लघुकथाकारों में हैं, जिन्होंने लघुकथा को कहानी के तत्वों के स्पर्शमात्र के कथाभास के आयाम निर्मित कर इसके एक स्वरूप को निर्धारित किया है। बेकारी, मानवीय संवेदनहीनता, मानसिक जड़ता और आजादी की विडंबना, राजनीतिक छलावा, अवशिष्ट जमींदारी, जातिगत पाखंड, आजादी के प्रति मोहभंग आदि आज की जिंदगी की सच्चाइयों को अपने लघुकथा–संसार का विषय चुनकर अग्रवाल जी ने समकालीन चेतना को यथार्थवादी स्वर प्रदान किया है। आज के गाँवों की दुर्दशा, अपहरण, उनके आपसी टकराव, पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी की आस्थाओं का पारस्परिक संघर्ष, नागरिक जीवन में पैसे के लिए फैला देह–व्यापार भी इनकी लघुकथाओं के मूल स्वर बने हैं। बलराम अग्रवाल अपनी अधिकांश लघुकथाओं में एक बिंदु पर हर जगह केंद्रित दीखते हैं। यह बिंदु है शहर से गाँवों तक फैले हुए राजनीतिक छल–छद्म और वासनापूर्ति की घृणित व्यूह–रचना! कृषक जीवन का सीधा–सादा रूप आज कैसे धन्ना सेठों के प्रभाव में आकर अस्तित्वहीन होता जा रहा है, अग्रवाल जी ने अपने कई लघुकथाओं में यथार्थवादी परिणति के रूप में उजागर किया है। उनकी लघुकथाओं में जो लेखकीय संवेदनशीलता, अनुत्तेजना से उत्पन्न होने वाली उत्तेजना और व्यंग्य के तीखे स्वर–संधान हैं, वे कम ही लघुकथाओं में देखने को मिलते हैं। घटना–स्थिति को चित्रात्मक बिम्बात्मक आयाम देकर लघुकथा की प्रस्तुति–कला की दुर्लभ क्षमता इन्हें प्राप्त है। ■

बद्री सिंह भाटिया (स्मृतिशेष)

जिंदगी के रंगमंच पर एक सौ तीन झाँकियाँ

...'तैरती है पत्तियाँ' संग्रह में छोटी–बड़ी 103 लघुकथाएँ विभिन्न कथावस्तुओं को समेटे हुए विभिन्न सामाजिक समस्याओं से पाठक का कम से कम समय में साक्षात्कार कराती हैं। उन्होंने समाज में राजनीति की विभिन्न अवस्थितिओं को उसके विभिन्न रूपों में प्रकट किया है। वास्तव में आदमी की कोई भी गतिविधि राजनीति के प्रभाव के बिना नहीं रह सकती। इस संग्रह में

अधिकांश कथाएँ राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में रची गई हैं। 'कहानी कुत्ते की', 'खबरों के सिर–पैर', 'एक राजनीतिक संवाद', 'गोपाल जी की लुटिया', 'बंदरों की नई खेप', 'मीडिया इन दिनों', 'मुर्दों के महारथी' आदि कथाओं में राजनीति के भीतर की मवाद तथ्य और अभिव्यंजना के रूप में एक मनोवैज्ञानिक प्रभाव पैदा करती है।...

बलराम अग्रवाल ने राजनीति से इतर मानवीय पक्ष को भी अभिव्यक्त किया है। आदमी के जीवन में प्रेम एक महत्वपूर्ण पहलू है। इन कथाओं में 'समंदर : एक प्रेम कथा', 'रॉनी', 'और ये...ऽ...ऽ!', 'गुलाब', 'प्रेमगली अति साँकरी', 'बुधुआ', 'रेगिस्तान', 'बेचारा कुल्फीवाला', 'जाना बसंत का' को लिया जा सकता है। 'समंदर : एक प्रेम कथा' संग्रह की प्रथम कथा है। इसमें कथापात्र अपने जवानी के दिनों के प्रेम प्रसंग को समंदर के बहाने अपनी किशोर पुत्री को उसके जीवन के लिए एक संदेश देती है। 'रॉनी' कथा संवेदना की कहानी है। कुत्ते भी मानवीय प्रेम और तिरस्कार को समझते हैं। इस कथा में उन्होंने इसी पीड़ा को अभिव्यक्त किया है। 'प्रेमगली अति साँकरी' में मानवीय अंतस को प्रकट करते हैं। प्रेम विवाह के बाद भी यदि पत्नी की फाइल में कुछ प्रेम पत्र मिलें, तो मानसिक प्रताड़ना होना स्वाभाविक है। एक प्रश्न भी, कि उसने उम्र के आखिरी पड़ाव तक वे क्यों सँभालकर रखे होंगे? यह प्रश्न भी है और सोच भी।

...जाने कितने समय से यह पढ़ते आने की कसक कि कश्मीर भारत और पाकिस्तान के बीच विवाद की एक जड़ है। इस जड़ की परिणति विगत वर्षों में सभी ने देखी है। बलराम अग्रवाल ने इस मानवीय पक्ष को भी अपनी अभिव्यक्ति का विषय बनाया है। 'कश्मीर', 'बेचारा पत्थरबाज', 'बड़े लोग', 'नए रहनुमा', 'पाकिस्तान' जैसी कथाएँ इस पीड़ा और मानवीय सोच को प्रकट करती हैं। कश्मीर एक प्रतीकात्मक कथा है, जो दो मूर्ख भाइयों के आपसी संवाद के माध्यम से कही गई है। 'बेचारा पत्थरबाज' बेशक हम कश्मीर के पत्थरबाजों से या विभिन्न विदेशों में हो रही ऐसी घटनाओं से जोड़कर देखते हैं, मगर यह समझने की जरूरत है कि यह पत्थरबाज वास्तव में वह नहीं जो दिख रहे होते हैं। किसी के दिमाग की उपज और किसी बिचौलिए के हथियार हैं। संवेदना इतनी कि कहीं भीतर एक कसक अपने होने पर भी है। चंद पंक्तियों की यह संवादात्मक रचना विचार करने को विवश भी करती है।...

...'गर्दिश में गौरैया', 'परदादारी', 'वतन के पेड़–पौधे और तितलियाँ', 'अकेला कब गिरता है पेड़' आदि कुछ रचनाओं में उन्होंने पाठक को अवगत कराया है कि ये मात्र प्रकृति में शोभा की नहीं बल्कि सजीव संवेदनशील अभिव्यक्ति हैं।

महिला समाज की एक मेड़ी है। यद्यपि वह कथा, कहानी में किसी न किसी रूप में आ ही जाती है, मगर बलराम अग्रवाल ने उनकी पीड़ा को अलग से भी अभिव्यक्त किया है। 'उठा लो खंजर', 'अपूर्णता का त्रास', 'बूढ़ी अम्मा', 'ये दुकानवालियाँ', 'मान का पान' आदि कथाओं में नारी के विभिन्न रूप दृष्टव्य हैं।... समाज में वृद्धों की स्थिति बदलते हुए परिवेश में चिंतनीय हो गई है। यद्यपि ग्रामीण क्षेत्रों में उनकी स्थिति इतनी खराब नहीं है जितनी शहरों में। बलराम अग्रवाल ने अपनी कथाओं में उनके बारे में भी अवगत कराया है। 'उसकी हँसी', 'जिंदगी' आदि कथाएँ इनमें गिनाई

जा सकती हैं। फंतासी के रूप में लिखी 'उसकी हंसी' कथा समय से साक्षात्कार करा विगत और वर्तमान के संयोजन को प्रकट करती अपनी ही तरह की रचना बनी है।...

बलराम अग्रवाल की बहुत–सी कथाएँ विभिन्न प्रकार के सामाजिक धरातलों को लेकर रचित हैं कि उन्हें किसी एक बंधन में नहीं बाँधा जा सकता। 'छिन्न मस्तक', 'टॉफी', 'जिंदगी के मायने', 'नौकर और शाह', 'पाखण्ड', 'समझदारी', 'पुरातन इतिहास', 'बकरा और बादाम', 'मौसम की मार' आदि कथाएँ अपने कथा वैशिष्ट्य के लिए एक अलग पहचान रखती हैं। 'तीन तलाक' के बारे में जितना विज्ञापित है उतना ही भीतर ही भीतर कुछ अलग–सा होता है। एकाएक गुस्सा और गलतियों का एहसास आदमी की फितरत है। ऐसा ही 'दूसरा छोर' बंद कमरे के भीतर की दस्तक है, जो बूढ़े इमाम का भी सच है। तलाक देना और पश्चाताप करना बस दीवारें ही नहीं सुनती। मगर दीवारों का संकट यह है कि वे कमोबेश ही सुनी बात को विज्ञापित कर पाती हैं। इसी प्रकार 'टॉफी' कथा भी स्वयं को भूलने की कथा है। एक ऐसे घाव के रिसाव को रोके रखने की, जो उसे जिंदगी के धारे में बहते मिला था। पठनीय और मननीय भी।...

(लघुकथा संग्रह 'तैरती हैं पत्तियाँ'' की श्री बद्री सिंह भाटिया जी द्वारा समीक्षा के प्रमुख अंश।) ■

सुभाष नीरव

बलराम अग्रवाल की आलोचनात्मक पुस्तकें

...2017 में आई बलराम अग्रवाल की लघुकथा आलोचना की पुस्तक 'हिंदी लघुकथा का मनोविज्ञान' ने चौंकाया था। यह एक बेहद खास और गंभीर पुस्तक के रूप में हमारे सामने इस नई सदी में आई। लघुकथा की जो नई पीढ़ी 21 वीं सदी के पहले दो दशकों में हमारे सामने उभरकर आई, वह लघुकथा से जुड़े बहुत से धुँधलकों के बीच साँस लेती दिखाई दी। ये धुँधलके अभी भी हैं। उनके लिए जरूरी है कि वे लघुकथा के मनोविज्ञान को भी समझने की कोशिश करें। 2018 में बलराम अग्रवाल की दूसरी पुस्तक 'परिंदों के दरमियां' आई, जो 'हिंदी लघुकथा का मनोविज्ञान' की अपेक्षा कहीं अधिक सरल और बोधगम्य पुस्तक है। यह पुस्तक इसी नई पीढ़ी के नए लेखकों, जिन्हें परिंदे नाम दिया गया, को पूरी तरह ध्यान में रखकर लिखी गई है और लेखक इसमें बहुत सफल भी रहा है। अब 2019 में 'लघुकथा का प्रबल पक्ष' नाम से आलोचनात्मक पुस्तक का आलेख प्रकाशन दिल्ली से प्रकाशित होकर आना भी इस क्षेत्र में एक स्वागत योग्य और सराहनीय कदम ही कहा जाएगा। लघुकथा के दुर्बल (कमजोर) पक्ष पर तो बहुत बातें होती हैं, पर इसके सबल या प्रबल पक्ष पर भी बात करने की बेहद जरूरत महसूस होती है। शायद, बलराम अग्रवाल का भी यही मंतव्य रहा हो इस पुस्तक के पीछे। यह पुस्तक अब मेरे अगले कई दिनों और कई रातों पर कब्जा करने वाली है। फिलहाल यहाँ इस पुस्तक की अपनी बात यानी भूमिका का अंतिम पैरा आपसे साझा अवश्य करना चाहूँगा।

''साहित्य और विज्ञान दोनों में कुछ अवधारणाएँ उपयुक्त समय से पहले पेश

होने के कारण हास्यास्पद मान ली जा सकती हैं, लेकिन जरूरी नहीं कि वह सर्वथा अग्राह्य अथवा त्याज्य ही हों। छोटी लघुकथा और लंबी लघुकथा के विभाजन का समय, मुझे लगता है, अभी नहीं है। लेकिन यह कभी नहीं आएगा, ऐसा कहना बुद्धिमानी नहीं होगी। साहित्य अपने कूड़ेदान को भी रिसायकल करता है, परंतु अभी सिर्फ लघुकथा, उसमें कहानीपन और संपूर्णता में उसके प्रभाव को रेखांकित करने भर का समय है। अभी लोग 'लघुकथा' शब्द के आभामंडल से चमत्कृत हैं, सराबोर हैं। 'लघुवादी लघुकथा' की अवधारणा संभवत इस आभामंडल के कारण ही सिर पटक रही है। अतीत में 'अणुकथा' की अवधारणा दम तोड़ चुकी है। यह समय विभाजन में शक्ति व्यय करने की बजाय लघुकथा को पुष्ट करने, उसके प्रबल पक्ष को स–तर्क, स–प्रमाण सामने रखने का है। (बलराम अग्रवाल)... ('लघुकथा का प्रबल पक्ष' के प्रकाशन पर 02.08.2019 को व्यक्त श्री नीरव जी की प्रतिक्रिया का अंश/इंटरनेट ब्लॉग 'लघुकथा वार्ता' से साभार)

■डब्ल्यू ज़ैड–61 ए/1, दूसरी मंज़िल, गली नं. 16, वशिष्ट पार्क, नई दिल्ली–110046/मो. 09810534373

भगीरथ

बलराम अग्रवाल : व्यापक व्यक्तित्व

वरिष्ठ लेखक बलराम अग्रवाल लघुकथा साहित्य के एक्टिविस्ट है, व्याख्याकार तो वे हैं ही. यानी थ्योरी और प्रेक्टिस में समान रूप से दखल रखते हैं। 'परिंदों के दरमियाँ' में नवलेखकों के हर प्रश्न का उत्तर देते हुए शंका समाधान करते हैं। वे नए लेखकों को बराबर प्रेरित करते हैं और अच्छा लिखने पर मुक्त कंठ से प्रशंसा भी करते हैं। गोष्ठियों और सम्मेलनों के वे आवश्यक किरदार हैं। उनके बिना सब कुछ फीका–फीका सा लगता है और अशोक भाटिया भी साथ हों तो फिर क्या कहने! आकाशवाणी और दूरदर्शन से अनेकों बार रचनाएँ और वार्ताएँ प्रसारित, गूगल मीट में वे सतत भागीदारी करते हैं और अध्यक्ष पद को सुशोभित करते हैं। लघुकथा लेखक बड़े ध्यान से उनकी वार्ताएँ और वक्तव्य सुनते हैं। लघुकथा पीठ के वे पीठासीन अधिकारी हैं। लघुकथा लेखकों/लेखिकाओं के बीच सबसे लोकप्रिय हैं।

इनका सफर आठवें दशक से प्रारंभ होता है। बुलंदशहर में जन्मे और वहाँ से उखड़े, टेढ़े–मेढ़े रास्ते तय करते दिल्ली में बस गए। नवम्बर 1952 में जन्मे और वयस्क होते–होते लेखनी हाथ में संभाल ली, 1969 में लेखन आरम्भ कर दिया। पहली लघुकथा 'लौकी की बेल' 1972 में प्रकाशित। 'वर्तमान जनगाथा' का प्रकाशन–संपादन 1992–93 में प्रारम्भ किया जो 1996 तक चला।

पोस्टऑफिस की नौकरी के साथ शिक्षा भी चलती रही, एम.ए. (हिन्दी), अनुवाद में स्नातकोत्तर डिप्लोमा और फिर डाक्टरेट वह भी लघुकथा में। इनका शोधग्रंथ 'हिंदी लघुकथा का मनोविज्ञान' पुस्तकाकार प्रकाशित है, जिसे लघुकथा आलोचना का ग्रन्थ भी कह सकते हैं। विभिन्न भारतीय भाषाओं (मलयालम और तेलुगु) के लघुकथा लेखन को सामने लाने का श्रेय भी इन्हें जाता है। अनेक विदेशी लघुकथाओं का अंग्रेजी से हिंदी

अनुवाद। जिब्रान की अनेक लघुकथाओं का अनुवाद जो पुस्तक रूप में भी प्रकाशित है।

लघुकथा विशेषांकों का अतिथि संपादन– सहकार संचय, द्वीप लहरी के तीन लघुकथा विशेषांक तथा आलेख संवाद का विशेषांक, अविराम साहित्यिकी के महत्वपूर्ण लघुकथा विशेषांक, जिनमें पहला विशेषांक (2012) बाद में पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित हुआ। इनकी लघुकथाओं के पंजाबी, राजस्थानी, मलयालम, तेलुगु, मराठी, अंग्रेजी व निमाड़ी आदि में अनुवाद हो चुका है। 'केक्ट्स ते तितलीआँ' (अनुवादक श्यामसुंदर अग्रवाल) नाम से लघुकथाओं का संग्रह पंजाबी में प्रकाशित।

इनका सृजन फलक बड़ा है। पाँच लघुकथा संग्रह– सरसों के फूल, जुबैदा, पीले पंखों वाली तितलियाँ, तैरती हैं पत्तियाँ, काले दिन लघुकथा साहित्य की थाती हैं। वे जीवन के यथार्थ को, संघर्ष को, हमारे समक्ष लेखन के माध्यम से लाते हैं, वे वंचितों और शोषितों के पक्षधर हैं। समाज में परिवर्तन की पृष्ठभूमि बनाने के लिए लिखते हैं। इनके बिना लघुकथा का परिदृश्य कुछ और ही होता, विकास के क्रम में जरा पीछे होते, लघुकथा सृजन करने वाली इतनी बड़ी सेना नहीं होती।

बलराम अग्रवाल की लघुकथाओं के शीर्षक बहुत आकर्षित करते हैं। भाव और भाषा की जुगलबंदी, बिम्ब और प्रतीकों के प्रयोग, और इनकी लघुकथाओं का अंत विस्मयकारी, प्रभावशाली, प्रहारात्मक और अभिव्यंजनात्मक होता है। इन्होंने कई कालजयी रचनाओं का सृजन किया है, जैसे– अलाव के इर्दगिर्द, अकेला कब तक लडेगा जटायु, और जैक मर गया, युद्धखोर मुर्दे, खोई हुई ताकत, बदलेराम, गो भोजनम् कथा, जुबैदा, नागपूजा, जहर की जड़ें, समंदर : एक प्रेम कथा, बुधुआ, ब्रह्म सरोवर के कीड़े, सरसों के फूल, बिना नाल का घोडा, अकेले भी जरुर घुलते होंगे पिताजी, अनसुनी चीखें, उजालों का मालिक, हिन्द फ़ौज का सूरमा, पीले पंखों वाली तितलियाँ, मन अनंत में तथा और भी अनेकों लघुकथाएँ।

परिवार में घुलने–मिलने वाले और उनसे मित्रतापूर्ण व्यवहार करने वाले व्यक्ति हैं वे। अपने ही नहीं, मित्रों के परिवार में भी आसानी से घुल मिल जाते हैं। वे मिलनसार और जॉली स्वभाव के व्यक्ति हैं, इसलिए दोस्तों में लोकप्रिय हैं। बच्चों में रमने वाले और आध्यात्मिकता में रमण करने वाले संवेदनशील व्यक्तित्व के धनी हैं। लचीले हैं, इसलिए विरोधी विचार वालों से भी सामंजस्य बिठा लेते हैं। वे कतिपय भावुक हैं और कभी–कभी लहरों के साथ बह जाते हैं लेकिन फिर संभल भी जाते हैं। मुखौटा विहीन सहज व्यक्तित्व के धनी हैं। उम्र के इस पड़ाव पर भी सक्रिय हैं और लघुकथा को दिशा देने में लगे हैं।

■ 228, नयाबाजार कालोनी रावतभाटा–323307, राजस्थान / मो. 09414317654

सूर्यकांत नागर

विधा को समर्पित एक विलक्षण व्यक्तित्व

वैसे आधुनिक लघुकथा का उद्भव 1971–72 के आसपास माना जाता है। शैशव काल से लेकर अब तक विधा अनेक

उतार–चढ़ावों, विवादों, बहसों और प्रयोगात्मकता से गुजरी है। कह सकते हैं कि विद्या ने अब एक मुकम्मल मुकाम हासिल कर लिया है। जो लघुकथाकार निस्वार्थ भाव से विधा के उन्नयन के लिए काम कर रहे हैं, उनमें बलराम अग्रवाल एक प्रमुख नाम है। आधी सदी से वे लघुकथा के संवर्धन के लिए पूरे समर्पण भाव से सक्रिय हैं। सैकड़ों लोगों के अलावा उन्होंने विधा के सिद्धांत पक्ष पर भी खूब लिखा है। आज भी हिन्दी लघुकथा के अतीत और वर्तमान के पन्नों को खंगालने में लगे हैं। लघुकथा के आलोचना पक्ष पर उनके गंभीर विमर्श ने लघुकथा को दिशा प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उल्लेखनीय है कि लघुकथा की समीक्षा एवं आलोचना का मुद्दा उपेक्षित और अविश्वसनीय–सा रहा है। लघुकथा–आलोचना पर अघकचरों का आधिपत्य समाप्त करने के लिए मुख्य धारा के स्वतंत्र, गंभीर, वरिष्ठ आलोचकों को आगे आना होगा।

विधा के प्रति बलराम के पैशन का प्रमाण है उनका अनुवाद कार्य और अनेक लघुकथा संकलनों का संपादन। मलयालम की चर्चित लघुकथाएँ और तेलुगु की मानक लघुकथाओं के संकलन का संपादन भी उन्होंने किया है। उम्र के इस पड़ाव पर भी उनके उत्साह पर ब्रेक नहीं लगा है। हाल ही के वर्षों में उनके– तैरती हैं पत्तियाँ, काले दिन और सूली ऊपर सेज जैसे स्तरीय लघुकथा संग्रह आए हैं। 'सूली ऊपर सेज' बलराम की चुनी हुई व्यंग्य रचनाओं का संग्रह है। समाज और व्यवस्था के अंतर्विरोध/विरोधाभास से उपजी व्यंग्यात्मक स्थिति को बेपर्दा करने का कोई अवसर वे नहीं छोड़ते। साम्प्रदायिक विद्वेष के प्रति उनके अंदर वाजिब गुस्सा है। यह आक्रोश वक्रीय और सात्विक है। अराजक नहीं। उनकी कई व्यंग्य कथाएँ साम्प्रदायिकता के विरोध में तथा साम्प्रदायिक सद्भाव के पक्ष में हैं। ऐसी कुछ लघुकथाएँ हैं– गोभोजन कथा, भरोसा, दहशतगर्द, अंदर की आवाज, कौम के गद्दार, भगवानदास, मान–अपमान आदि। बलराम की व्यंग्य कथाओं में करुणा और सहानुभूति का अद्भुत रसायन है।

संकेतिकता और प्रतिकारात्मकता बलराम की लघुकथाओं की बड़ी ताकत है। शोर अच्छी लघुकथा के मार्ग की बड़ी बाधा है। विधा अराजक होने पर अपना प्रभाव खो देती है। शिल्पगत विशेषता के बावजूद बलराम बाहरी सौंदर्य के लिए न तो कथ्य की बलि चढ़ाते हैं, न भाषा की पच्चीकारी करते हैं। उन्हें शब्द–ऊर्जा का ज्ञान है, जिसका वे सूझ–बूझ से प्रयोग करते हैं। जटिल यथार्थ को सहज शिल्प में प्रस्तुत करने की अद्भुत क्षमता है उनमें।

बलराम का विश्वास है कि नेपथ्य में ऐसा बहुत कुछ होता है जो मंच से रिलेट करता है। बलराम की लघुकथाएँ जीवन के रंगमंच के नेपथ्य में झाँकने का अवसर देती हैं। इस अदृश्य का संबंध कथ्य से होता है। जब पाठक नेपथ्य से झाँककर रचना में प्रवेश करता है तो एक बड़ी दुनिया उसके सामने होती है। वस्तुतः बलराम नेपथ्य के असल को सामने लाते हैं।

शोध और ज्ञान की जिज्ञासा इतनी कि कथा–सम्राट प्रेमचंद की छोटी कहानियों में लघुकथा के तत्व हैं अथवा नहीं, और हैं तो किस हद तक, की पड़ताल के लिए बलराम ने देश के साहित्यकारों से अभिमत मँगाकर 'समकालीन लघुकथा

और प्रेमचंद' शीर्षक से महत्वपूर्ण ग्रंथ प्रकाशित किया।

बलराम का विश्वास लघुता में प्रभुता का है। लघुकथा में लघु का मान रखना चाहिए। समर्थ लघुकथाकार वह जो पाठक का कम समय लेकर उसे अधिकाधिक दे। उसे स्वयं और पाठक की क्षमता पर भरोसा करना चाहिए।

समकालीनता के प्रति सजग यह प्रयोगवादी कथाकार लघुकथा के कोष को इसी प्रकार समृद्ध करता रहे, यही कामना है।

■ 81, बैराठी कॉलोनी नं. 02, इंदौर–452014, म. प्र./मो. 09893810050

सुकेश साहनी

बलराम अग्रवाल : लघुकथा की विकास–यात्रा का समर्पित हस्ताक्षर

बरसों पहले जब मेरी लघुकथा–लेखन की शुरुआत हुई थी, तब मैं इस विधा में सक्रिय दूसरे रचनाकारों के बारे में बहुत कम जानता था। सारिका में 'डरे हुए लोग' के प्रकाशन पर भाई जगदीश कश्यप ने मुझसे सम्पर्क किया और 'मिनीयुग' से परिचय कराया। उन्हीं के माध्यम से मेरा सम्पर्क सतीशराज पुष्करणा से हुआ। मिनीयुग में उस समय सह–सम्पादक के रूप में कुलदीप जैन और अखिलेन्द्र पाल सिंह काम कर रहे थे, जगदीश कश्यप के कहने पर मैं भी बतौर सह–सम्पादक इसमें शामिल हो गया। हमारा मिलना–जुलना शुरू हो गया। इसी कड़ी में भाई बलराम अग्रवाल भी 'मिनीयुग' से जुड़ गए। तभी संभवतः कुलदीप जैन के निवास पर पहले–पहल मेरी मुलाकात भाई बलराम अग्रवाल से हुई थी।

हम जब, जहाँ भी मिलते थे, लघुकथा पर लम्बा विमर्श होता था, चर्चा के केंद्र में 'मिनीयुग' के स्तम्भ तो होते ही थे, इसके अलावा लघुकथा में हो रहे ख़राब लेखन को लेकर भी चर्चा होती थी। जगदीश कश्यप के बाद हम पाँच की टोली में जिस लेखक की रचनात्मकता ने मुझे प्रभावित किया, वह बलराम अग्रवाल ही थे। बलराम अपने लघुकथा लेखन के प्रति काफी सचेत और गंभीर थे। यही कारण है कि उस दौरान उनका लघुकथा लेखन औरों की तुलना में काफी सीमित था, लेकिन उन दिनों उन्होंने अनेक यादगार लघुकथाएँ लिखीं, जिनकी बदौलत उन्हें लघुकथा जगत में विशिष्ट पहचान मिली। यह पंक्तियाँ लिखते हुए उस दौर में उनके द्वारा लिखी गई कुछ चर्चित और सशक्त लघुकथाएँ याद आ रही हैं– फुटबाल, नागपूजा, कुंडली, गोभोजन कथा, खनक, बिना नाल का घोड़ा, कब तक लड़ेगा जटायु आदि। उनके समकालीन बहुत से लघुकथा लेखक लघुकथा के वर्तमान परिदृश्य में आज कहीं दिखाई नहीं देते, जिसका मुख्य कारण उनके लेखन का चुक जाना ही कहा जाएगा। बलराम अग्रवाल अपने स्तरीय लेखन से आज भी लघुकथा विधा को समृद्ध करते दिखाई देते हैं। निरंतर लेखन के बीच उन्होंने लघुकथा में प्रयोग के जोखिम उठाने में गुरेज़ नहीं किया, इस बात की परवाह किए बिना कि उनकी रचना लघुकथा

कहलाएगी अथवा नहीं। समसामयिक विषयों पर तात्कालिक प्रतिक्रिया स्वरूप संवाद शैली में लिखी गई कुछ रचनाएँ इस श्रेणी में आती भी हैं। विधा के प्रति समर्पित कथाकार ही ऐसे खतरे उठा सकता है।

लघुकथा सम्मेलनों, गोष्ठियों में सक्रिय भागीदारी के फलस्वरूप हमारा एक दूसरे से मेल–मिलाप और लघुकथा–विमर्श जारी रहा, यहाँ कहना न होगा कि इन गोष्ठियों, कार्यशालाओं के माध्यम से भी भाई बलराम अग्रवाल को करीब से जानने का अवसर मिला। प्रारंभिक दौर में बलराम अपनी बात आलेखों के माध्यम से अधिक रखते थे, उनके खोजपरक लेख विधा के विकास में सहायक बने। बरेली सम्मेलन हो या पंजाब में शुरू में आयोजित जुगनुओं के अंग–संग कार्यक्रम, लघुकथाओं पर उनकी टिप्पणियाँ कम ही देखने को मिलती थीं। धीरे–धीरे इस दिशा में भी उन्होंने अपनी सटीक और सारगर्भित टिप्पणियों से विधा को लाभान्वित किया और आने वाली पीढ़ी को मार्गदर्शन देने के साथ–साथ प्रोत्साहित भी किया। सम्मेलनों के भारी–भरकम और थका देने वाले सत्रों के बीच भाई बलराम और अशोक भाटिया के चुटकलेबाजी और हँसी–मज़ाक वातावरण को खुशनुमा बना देते थे, भाई बलराम के व्यक्तित्व का यह पहलू भी उल्लेखनीय है।

'लघुकथा साहित्य' और 'जनगाथा' ब्लॉग्स के माध्यम से नए पुराने लेखकों की रचनाओं और लेखों को एक जगह उपलब्ध कराने का बड़ा काम भी उनके द्वारा किया जा रहा है। उनके द्वारा सम्पादित पुस्तकों की लम्बी सूची है, जो लघुकथा लेखन की ओर प्रवृत्त लेखकों के लिए काफी उपयोगी हैं। खलील जिब्रान सहित कुछ विदेशी लेखकों की लघुकथाओं का अनुवाद कार्य भी उनके द्वारा किया गया। सोशल मीडिया पर भी लघुकथा विषयक कई ज्वलंत मुद्दों को उनके द्वारा बहस हेतु आमंत्रित किया जाता है, जिससे बहुत से विवादस्पद मुद्दों पर विराम लग जाता है।

बलराम अग्रवाल लघुकथा के क्षेत्र में ऐसा नाम है, जिसने अपने लेखन, संपादन और गतिविधियों द्वारा इस विधा को समृद्ध करने में अविस्मरणीय योगदान दिया है। विधा को अपनी बहुमूल्य सेवाएँ प्रदान करते रहें, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ!

■ 185,उत्सव,महानगर पार्ट–2, बरेली–243122, उ.प्र./मो. 09634258583

प्रबोध कुमार गोविल

विधा का बल

एक समय था जब पत्र–पत्रिकाएँ आपकी धारणा बना देते थे। पिछली सदी का आठवाँ दशक ऐसा ही समय था। कुछ हिंदी अख़बार और पत्रिकाएँ बड़े आलेखों के बाद बची जगह में क्षणिका, गीतांश, उद्धरण अथवा कुछ गद्य पंक्तियाँ छाप देते थे। कभी–कभी इनके साथ लेखक का नाम भी होता था।

सरसरी निगाह से देखते हुए भी आपका ध्यान इस बात पर चला जाता था कि शब्दों के खेत में खर–पतवार की तरह उगी ये पंक्तियाँ निरर्थक नहीं हैं, इनमें रचनात्मकता का रस है। जब आप इन्हें ढूँढ़कर पढ़ने के अभ्यस्त हो जाते थे तब

आपको ये संतुष्टि मिलने लगती थी कि इनमें कथ्य, प्रभाव, प्रवाह, प्रतीति आदि भी है। और आपको इन्हें रचने वाले नामों में दिलचस्पी होने लगती थी। ये लघुकथा के शुरुआती दिन थे। बलराम अग्रवाल को मैंने वहीं पाया। उनकी रचना कमरे के एक कौने में रखे किसी छोटे आइने की तरह होती थी, जिसमें पूरा परिदृश्य झलक जाता था। बलराम अग्रवाल को मैं अक्सर पढ़ने लगा। उनकी रचना में मुझे औषधीय गुण दिखाई देते थे। उनकी ये लघुकथाएँ मुझे ऐसी लगती थीं जैसे किसी ने बेर की झाड़ी से पके बेर चुनकर आपको दे दिए हों। एक लंबी–चौड़ी कंटीली झाड़ी का सार तत्व मानो अब आपकी हथेली पर हो।

बहुत गिने–चुने थोड़े से ही ऐसे नाम थे, जिनकी रचना में आपको परिपक्वता का आभास होता था। शायद यही कारण था कि बलराम अग्रवाल का नाम छाछ बिलोते हुए ऊपर आ गए मक्खन की भाँति ऊपर दिखाई देने लगा। एक अलग साहित्यिक विधा के रूप में लघुकथा के निरंतर लोकप्रिय होते जाने के दिन थे और कई समीक्षक तथा शुभचिंतक लघुकथाकार लघुकथा लिखने के साथ–साथ लघुकथा को परिभाषित और परिमार्जित भी कर रहे थे। इस विधा के विभिन्न मानदंड निर्धारित हो रहे थे।

लघुकथा विषयक आलेखों में किसी तथ्य की स्थापना के लिए उदाहरण स्वरूप जिन रचनाकारों के काम की पड़ताल होती थी, उनमें बलराम अग्रवाल का नाम प्रायः दिखाई देता था। कुछ समय बाद लघुकथा को लेकर बलराम (समकालीन भारतीय साहित्य के वर्तमान संपादक) ने भी एक विशद परियोजना के तहत लघुकथा पर कई विशाल खंडों में समाहित महत्वपूर्ण कार्य किया। तब परिहास में अक्सर कहा जाता था कि विधा के रूप में लघुकथा के प्रतिष्ठापन की चुनौती के इस दौर में इसे 'बल' प्रदान करने के लिए दो–दो बलराम हासिल हैं।

आज लघुकथा का दौर है। मात्रा और स्तर दोनों में ही ज़बरदस्त उछाल है। बलराम अग्रवाल संभवतः आज के भी सबसे सशक्त लघुकथाकारों में हैं। ऐसा कहने में कोई जोखिम नहीं है।

■बी–301, मंगलम जाग्रति रेजीडेंसी, 447, कृपलानी मार्ग, आदर्शनगर, जयपुर–302004,राज./मो. 09414028938

डॉ. श्याम सुन्दर दीप्ति

बलराम अग्रवाल : लघुकथा के हर पड़ाव व हर धरातल पर सक्रिय

किसी भी नई विधा या विचार मंच को स्थापित करने या मान्यता के स्तर पर ले जाने के लिए, उसके आरम्भिक सदस्यों को हर धरातल पर कार्य करना होता है। विधा के माध्यम से बात करें और विशेषतः नई विधा लघुकथा, जिसका आरम्भ हिन्दी के लघुकथा मनीषी सौ वर्ष के करीब मानते हैं और छह दशकों से इसकी सक्रियता पर बात करते हैं।

लघुकथा के शुरुआती दौर में, जब इसका कोई अपना सौन्दर्य–शास्त्र, लेखन कौशल को लेकर मान्य रूपरेखा नहीं थी, तो इस धुँधलके के दौर में, जिन लेखकों

ने सृजन कार्य किया, उन्हें समीक्षकों ने स्वीकार्यता नहीं दी तो उन्हीं लेखकों ने खुद ही आलोचना का कार्य भी अपने हाथ में लिया और लघुकथा के कुछ आरम्भिक मापदण्ड तैयार किए। किसी भी विधा को समझने और उसमें सिद्धहस्त होने के पड़ाव देखें तो वह हैं– अध्ययन, लेखन, अनुवाद, सम्पादन, वाचन व व्याख्यान।

लघुकथा विधा से जुड़े इन पड़ावों को सफलतापूर्वक पार करने के बाद, वाचन व व्याख्यान तक पहुँचने वाले, गिनती के लेखकों में से एक नाम जो इस विधा के ऊपरले पायदान पर खड़ा नज़र आता है, वह है बलराम अग्रवाल। यह बात तो तय है कि अध्ययन के पहलू से बलराम अग्रवाल ने न केवल सभी विषयों का साहित्य पढ़ा है, बल्कि साहित्य के सहयोगी विषयों का साहित्य भी पढ़ा है, जिसकी झलक उनकी रचनाओं में मिलती है। अपने मौलिक लेखन में 'सरसों के फूल' से लेकर 'तैरती हैं पत्तियाँ' तो हैं ही, साथ ही सम्पादन को भी साथ रखा। पुस्तक सम्पादन साथ, इलैक्ट्रॉनिक (संचार) माध्यम के जरिए भी लघुकथा को प्रचारा–प्रसारा, विस्तारा है। अनुवाद एक अन्य माध्यम है, जो लेखन व सूझबूझ को व्यापक दृष्टिकोंण प्रदान करता है। तेलुगु, मलयालम की लघुकथाओं के अतिरिक्त मुंशी प्रेमचन्द व खलील जिब्रान जैसे महान लेखक की लघुकथाओं से जुड़े कार्य से लेखकों को अवगत कराया।

लघुकथा का शास्त्रीय कार्य अपने हाथों में लेते हुए अपने व्यापक अध्ययन को आधार बनाते हुए, छिटपुट लेखों के अलावा, 'लघुकथा : चिंतन–अनुचिंतन' व 'लघुकथा का प्रबल पक्ष' जैसा सराहनीय कार्य किया। इसी दिशा में एक अन्य कार्य जो लघुकथा परिपक्व आधार को दर्शाता है, वहीं उनके 'हिन्दी लघुकथा का मनोविज्ञान' कार्य से लघुकथा की सार्थकता सिद्ध होती है और मान्यता का रास्ता आसान होता है। विधा के अगले पड़ाव में अनेक व्याख्यानों के माध्यम से नए लेखकों को लघुकथा लेखन का आधुनिक दृष्टिकोण अपनाने की दिशा देता 'परिन्दों के दरमियां' जैसा कार्य सामने आया।

कह सकते हैं कि जून 1972 में पहली लघुकथा और 1994 में पहली पुस्तक के प्रकाशन से लेकर पाँच दशक की अनथक, निरंतर लगन, वह भी एक विधा के लिए; और परिणाम हमारे सामने हैं। लघुकथा विधा सिर्फ मान्य ही नहीं हुई है, बल्कि विश्वविद्यालयों में इस पर और स्वयं बलराम अग्रवाल के लघुकथा–लेखन पर शोधकार्य भी हो रहे हैं।

■ 97, गुरु नानक एवेन्यु, अमृतसर–143001, पंजाब / मो. 09815808506

प्रताप सिंह सोढी

विशिष्टताओं के तेजपुंज बलराम अग्रवाल

पलाश बेशक हर मिट्टी में नहीं खिलता, परंतु जब खिलता है तो उसकी रंगत आसपास के वातावरण को भाती है। एकाकी पड़ा बीज बिना पानी, धूप और खाद के क्षरित होने लगता है। धरती के भीतर जब बीज अंकुर बनकर उपजता है तो एक नई वनस्पति का संचार होता है। मनुष्य के भीतर जब हलचल होती है तो उद्‌गार जन्म लेते हैं और ये उद्‌गार जब सुर बनकर प्रसार पाते हैं तो कविता बनती है, कथा बनती है, गीत बनता है।

आदमी के भीतर अपने समय से आगे देखना और आने वाले समय की आहट को महसूस करना जिंदा लोगों की शिनाख्त के किसी पथ पर बिछुड़ जाने का एहसास जैसा होता है। जिंदगी एक हसरत है, जो सबको मिले। जीना एक कला है, जीने की कला सबको आनी चाहिए। जीने को एक कला तथा साहित्य को आराध्य मानने वाले सृजन शिल्पी डॉ. बलराम अग्रवाल जी अपने जीवन के सत्तर वर्ष के करीब पहुँचकर भी एक ऊर्जावान युवा से प्रतीत होते हैं। दो दशकों से मैं उनके करीब रहा हूँ। मेरे साथ उन्होंने इंदौर, उज्जैन में कई दिन व्यतीत किए हैं। वे मेरे साथ मांडव भ्रमण पर भी गये थे। उनसे मिलकर हर बार मुझे लगा कि वे एक प्रकाश पुंज हैं जो अपने व्यक्तित्व से सभी को प्रकाशमान करते हैं। मेल–मुलाकात और नींद, इन दोनों की लंबाई–चौड़ाई नहीं होती, होती है गहराई। और ये दोनों अपनी गहराई से आँके जाते हैं। अधिकांश लोगों को हम घंटों मिलते हैं, महीनों तक मिलते रहते हैं, परंतु जब भी उनसे मिलकर लौटते हैं तो ऐसा लगता है मानो मस्तिष्क खोखला हो गया है। इसके विपरीत कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जिनके साथ कुछ पलों में ही एक युग जी लेते हैं। एक छायावादी अग्रज कवि के शब्दों में, ´There are moments in ages and ages is moments´

अग्रज छायावादी कवि की इस उक्ति को बलराम अग्रवाल जी ने अपने जीवन में उतार उसे सार्थक किया है। इन्हीं गुणों के कारण उनका व्यक्तित्व हर एक को प्रभावित करता है। साहित्य भी एक कला है एक वस्तु के रूप में बेशक कला प्रदर्शन की मोहताज होती है परंतु अभिव्यक्ति के रूप में कला निसंदेह रूप के भीतर की रचना होती है। बाहर वही है जो नश्वर है, वह जिसे नष्ट होना है। सत्य वही है जो भीतर है, वही सुंदर है और शिव भी। भीतर का यह सत्य आनंद देता है। इसी आनंद को एक लंबे अरसे से मन मस्तिष्क में संजोए हुए एक साधक के रूप में वे साहित्य साधना में लीन हैं। साहित्य को जीवन और समाज से अलग रखकर देखा नहीं जा। डॉ. बलराम अग्रवाल जी के बहुआयामी व्यक्तित्व एवं उनके कृतित्व को जानने के लिए हमें उनकी जीवन गाथा से गुजरना होगा। उ. प्र. के बुलंदशहर में 26 नवंबर 1952 को जन्मा यह साहित्यकार अपने बुलंद इरादों के बल पर बुलंदी के शिखर को छू पाया है। अपने जीवन के हैरतअंगेज सफर में न जाने कितने पड़ाव और मंजिलें आई हैं, जहाँ से गुजरकर उन्होंने यह मुकाम हासिल किया है। शासकीय सेवा में रहते हुए भी सेवानिवृत्ति तक उन्होंने साहित्य का दामन इतनी पुख्तगी से पकड़ा जो आज तक थामे हुए हैं। लघुकथा विधा के प्रति उनका समर्पण और अनवरत उसे उत्थान की ओर ले जाने की प्रतिबद्धता से कौन नहीं वाकिफ है। लघुकथा विधा के वे कीर्तिस्तंभ हैं और देश के शीर्षस्थ लघुकथाकारों में उनका नाम है। एक समीक्षक के रूप में लघुकथा विधा पर लिखे आलेखों में उन्होंने निष्पक्ष एवं एक शोधार्थी के सच्चे स्वरूप को प्रकट किया है। उन्होंने विधा में आई विसंगतियों के जाल को काटने में बेहद साहस पूर्वक काम किया है। वे रचनाकार के नाम से नहीं परंतु उसकी गुणवत्ता के पक्षधर हैं। उनकी बेबाक समीक्षाएँ उनके भीतर के सच की तर्जुमानी करती हैं।

कोई भी सत्य तब तक अपना नहीं होता, जब तक वह अनुभव से नहीं गुजरता। इस सत्य पर आधारित हैं उनकी कहानियाँ, जो मनुष्य के भीतर सोई चेतना को जाग्रत करती हैं। बाल साहित्य में बाल एकांकी, आधुनिक बाल नाटकों में ऐतिहासिक एवं पौराणिक गाथाओं को प्रस्तुत कर बाल साहित्य को समृद्ध किया है। उनके गहन चिंतन–मनन के दस्तावेज हैं लघुकथा विधा पर लिखी उनकी पुस्तकें, हिंदी लघुकथा का मनोविज्ञान, परिंदों के दरमियां, लघुकथा का प्रबल पक्ष, लघुकथा : चिंतन–अनुचिंतन, उत्तराखंड; अनुवाद व पुनर्लेखन में 'अंडमान व निकोबार की लघुकथाएँ, करोड़पति भिखारी, खलील जिब्रान : अनेक विदेशी कहानियाँ, सम्पूर्ण बाल्मीकि रामायण आदि ने हिंदी साहित्य को समृद्ध किया है। डॉ.बलराम अग्रवाल का संपादन कार्य काफी विस्तृत है। उन्होंने मलायम की चर्चित लघुकथाएँ, तेलुगु की मानक लघुकथाएँ, समकालीन लघुकथा और प्रेमचंद (आलोचना), प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, रवींद्र नाथ टैगोर, बालशौरि रेड्डी आदि कथाकारों की चर्चित कहानियों पर संकलन निकाले हैं। सहकार संचय, द्वीप लहरी, आलेख संवाद, अविराम साहित्यिकी, आधुनिक हिन्दी साहित्य के लघुकथा विशेषांकों का संपादन किया है। लघुकथा संग्रह 'जुबैदा' पर 2005 में कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, हरियाणा से सुश्री गायत्री सैनी ने एम. फिल. किया। उनका बाल एकांकी 'जरूरी खुराक' केरल शिक्षा विभाग द्वारा कक्षाओं के पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया गया। हिमाचल प्रदेश के शिक्षा विभाग ने उनका बाल एकांकी 'पेड़ बोलता है' कक्षा 4 के पाठ्यक्रम में शामिल किया। 'सूरज का इंतजार' बाल एकांकी मुंबई द्वारा शिक्षण संस्थाओं के लिए तैयार पाठ्य पुस्तक माला 'गुंजन' में कक्षा 6 के लिए सम्मिलित किया गया। डॉ. बलराम अग्रवाल जी को अनेक सम्मानों से नवाजा गया है।

साहित्य की विभिन्न विधाओं का यह चितेरा न तो अपनी उपलब्धियों पर इतराता है और न ही आत्ममुग्धता के भाव उसके चेहरे पर नज़र आते हैं। वह अपने साहित्य में जीता है और अपने सहयोगी साहित्यकारों को सार्थक जीवन जीने की नुस्खे बाँटता है। उसका सामीप्य जीवटता एवं कर्मठता का पाठ पढ़ाता है। वह एक जिंदादिल इंसान है जो ईश्वर की सत्ता और उसकी महिमा का कायल है। प्रकृति के मनोरम दृश्यों को रूह में समेटे सुकून पाता है। विद्वान साहित्यकार प्रतिभावान तो बहुत होते हैं लेकिन अपने अंतरतम में मनुष्य बने रहने वाले दुर्लभ होते जा रहे हैं। डॉ. बलराम अग्रवाल जी उसी दुर्लभ प्रजाति के मनुष्य हैं, जिनमें इंसानियत का जज्बा जीवटता, समर्पण समंदर की तरह गहरा और अनुकरणीय है। अदीनाः स्याम शरदः शतम् (अदीन होकर सौ वर्ष जिएँ।) इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

■ 05, सुख शांति नगर, बिचौली हप्पी रोड, इंदौर–452016, म. प्र./मो. 07312591837

डॉ. पुरुषोत्तम दुबे

बलराम अग्रवाल : पँक्ति से हटकर लघुकथाकार

वर्तमान में लघुकथा के भीड़तंत्र में एक अलग–थलग नाम लघुकथाकार बलराम अग्रवाल का है। उनका लघुकथाकार

सार्थक लघुकथा लिखने में प्रज्ञासम्पन्न है। यहाँ प्रज्ञा से मेरा आशय बुद्धि से अधिक 'समझ' से है। बलराम अग्रवाल की लघुकथाएँ उनकी विलक्षण समझ से जन्मीं होकर लघुकथा की सृजनावस्था का ऐसा रूप गढ़ती हैं, जिनका अनुसरण कर कोई भी महत्वाकांक्षी लघुकथाकार लघुकथा के लेखन में महारत हासिल कर सकता है।

बलराम अग्रवाल की लघुकथाओं में कथ्य निरूपण की स्थिति यकसां न होकर हर बार वैविध्यपूर्ण होती है। बड़ी बात यह कि लघुकथा के सृजन में जिस भी अन्तर्वस्तु का वे स्पर्श करते हैं, अपनी समझ से उसका यथोचित निर्वाह कर उसको कथा के स्वरूप में ढाल देते हैं। लघुकथाकार बलराम अग्रवाल की कथ्य वैविध्यपूर्ण लघुकथाओं का परिशीलन करने पर उनकी लघुकथाओं का मैयार निम्नांकित बिंदुओं से विवेचित किया जा सकता है–

1. बलराम अग्रवाल की सपाट लघुकथाओं में भी उनकी विचारात्मक शक्ति का परिचय मिलता है जो विचार प्रधान लघुकथाओं के लेखन की तहज़ीब बनकर सामने आती हैं।
2. बलराम अग्रवाल की संवादात्मक लघुकथाएँ सम्वादों में रची–बसी होकर भी सम्वादों के पार्श्व से कथा के कथ्य को अभिव्यक्त करती मिलती हैं।
3. बलराम अग्रवाल की जो लघुकथाएँ व्यंग्यात्मक होती हैं, उनमें व्यंग्य का रूप उनकी समाजमूलक चेतना से पोषित हुआ मिलता है।
4. बलराम अग्रवाल की लघुकथाओं का अन्त अप्रत्याशित ढंग से खुलता है, जो पाठक वर्ग को हतप्रभ करने वाला होता है।
5. बलराम अग्रवाल की लघुकथा के पात्र एक ऐसे तिलिस्म से बँधे होते हैं जो पाठक वर्ग को खुद से खुद की मुलाक़ात कराते जान पड़ते हैं।
6. बलराम अग्रवाल की लघुकथाएँ बतौर भूमिका की अनावश्यकता से जन्मीं होती हैं और जो प्रारम्भ से ही कथ्य से प्रतिबद्ध हुई दिखाई देती हैं।
7. बलराम अग्रवाल की लघुकथाएँ परिवेशजन्य कथ्य को लेकर चलती हैं, जिसकी वजह से उनकी लघुकथाओं में समकालीनबोध उभरकर आता है।
8. बलराम अग्रवाल की लघुकथाओं में प्रयुक्त विरामचिह्न लघुकथाओं के कथ्य को खण्डित नहीं करते प्रत्युत कथ्य–कथन का लहज़ा बनकर उपस्थित हुए मिलते हैं।
9. बलराम अग्रवाल की लघुकथाओं में सांकेतिकता के अनुप्रयोग भाषा का प्रतिनिधित्व करते प्रतीत होते हैं।
10. बलराम अग्रवाल की लघुकथाओं की भाषा जटिल न होकर शिल्प की कतार खड़ी नहीं करती, जिससे उनकी लघुकथाओं पर क्लिष्टता के अंकुश लगे हुए नहीं मिलते हैं।

■ शशीपुष्प, 74 जे/ए स्कीम नं. 71, इन्दौर–452009, म.प्र./मो. 09329581414

डॉ. अशोक भाटिया

बलराम अग्रवाल यानी लघुकथा में निरंतरता

सन 1972 में 'कात्यायनी' (लखनऊ) में 'लौकी की बेल' छपने के साथ लघुकथा–क्षेत्र में बलराम अग्रवाल ने पहला कदम

रखा, तो वह भी नहीं जानता था कि लघुकथा ही उसके लेखन–संपादन आदि की मुख्य धारा बन जाएगी, न ही सन 77 में बरनदूत (बुलंदशहर) में कृष्ण कमलेश के लघुकथा–संग्रह 'मोहभंग' पर छपी अपनी पहली टिप्पणी से समीक्षा–आलोचना के मार्ग पर भविष्य में निरंतर चलने की कोई आहट ही थी, लेकिन बलराम की कलम दोनों में रमी, और ऐसी रमी कि आज तक बलराम अग्रवाल और निरंतरता– दोनों एक–दूसरे के पर्याय बनकर चल रहे हैं।

सन 72 से 78 के बीच बलराम की कलम पारंपरिक और समकालीन– दोनों प्रकार की लघुकथाएँ लिखती रही। बोध तत्व से संचालित दार्शनिक धरातल की ('उनके बीच का अंतर' जैसी) लघुकथाएँ तब 'भारत सावित्री' पत्रिका में आती रहीं, तो 'और जैक मर गया', 'नया नारा' जैसी लघुकथाएँ इस विधा के नवरूप के निकट रहीं। 'अपने पाँव', 'समय से मुलाकात', 'दाम्पत्य' आदि इसी समय की लघुकथाएँ हैं। जहाँ तक संपादन की बात है, तो गाज़ियाबाद से ही जगदीश कश्यप 'मिनीयुग' (अनियतकालीन) निकालते थे, जो सन 78 के आसपास लघुकथा–केन्द्रित हो गई थी। लगभग इसी समय बलराम अग्रवाल 'मिनीयुग' से जुड़े और उसके कलात्मक आयाम का दायित्व सम्हाला।

सन 1978 में 'समग्र' (दिल्ली) का ऐतिहासिक महत्व का विशेषांक आया, तो लघुकथा–साहित्य को मानो नयी धार और दिशा मिल गई। लघुकथा की गंभीर, रचनात्मक धरा का प्रतिनिधित्व करने वाले इस विशेषांक ने जिन लेखकों को गहरे में प्रभावित किया, उनमें बलराम अग्रवाल भी थे। बोध आदि तत्व उनसे छिटक गए और अपने वक्त की जमीन से लघुकथाएँ अँखुआने लगीं। कलम ने गति पकड़ी। इसके बाद आने वाले लघुकथा विशेषांकों में वे निरंतर अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हैं, चाहे वह 'नवतारा' (79) हो, 'वर्ष–वैभव' (80) हो, 'कथाबिम्ब' (81) या फिर 'हस्ताक्षर' (82), 'आतंक' (83) जैसे प्रतिनिधि लघुकथा–संकलन हों। यह क्रम चलता रहा, हालांकि उस काल के सामान्य अंकों में इनकी लघुकथाएँ कम मिलती हैं, शायद भेजने की प्रवृत्ति कम रही हो।

सन 82 का रोचक वाकया है। कहानी की केन्द्रीय पत्रिका 'सारिका' में एक लघुकथा भेजी, तो तत्काल लौट आई। बलराम को स्वभावानुसार शरारत सूझी। पत्नी मीरा अग्रवाल के नाम से वही रचना दुबारा भेजी, तो आगामी अंक में छप भी गई। मन खिन्न हुआ। मार्च 84 के घोषित लघुकथांक के लिए कुछ नहीं भेजा तो रमेश बत्तरा का पोस्टकार्ड आ गया कि लघुकथा भेजो।

अस्सी के दशक में ही बलराम ने 'सरस्वती' के अंक से पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी की रचना 'झलमला' को 'विश्ववाणी' (गाज़ियाबाद) के संपादक जगदीश बत्रा के पास 'हिंदी की पहली लघुकथा' शीर्षक के साथ भेजा। बेशक बाद में नयी–नयी शोध के अनुरूप पहली लघुकथा की दावेदारी बदलती गई।

अस्सी के दशक में लघुकथा कई बीमारियों से जूझती रही। शास्त्रीय सवालों की रस्सी से लघुकथा के हाथ–पैर बाँधने की कोशिशें इसी दशक में हुईं, जिनके

विरोध में मेरा आलेख 'लघुकथा और शास्त्रीय सवाल' (1987) आया। 'उपविधा' नामक वायरस भी इसी समय आया। रोग लगाने वाले हालांकि स्वयम् को लघुकथा के बड़े डॉक्टर मानते थे। ठीक इसी समय कांकरोली राजस्थान से 'संबोधन' का लघुकथांक आया, जिसमें उमेश महादोषी द्वारा लिए साक्षात्कार में बलराम अग्रवाल ने 'उपविधा' की अवधारणा को आधारहीन बताया।

'लघुकथा में मनोविज्ञान' पर शोध करने वाले बलराम अग्रवाल के लिए सन 88 के पटना सम्मलेन में शंकर पुणताम्बेकर द्वारा उनकी लघुकथाओं की तारीफ मनोवैज्ञानिक झटका साबित हुई। इनकी कलम मानो कुछ वर्ष के लिए बक्से में कैद हो गई। आखिर रमेश बत्तरा ने समझाकर प्रशंसा का भूत उतारा तो सन 93 से लेखन की नयी पारी शुरू की। बस फिर रुकने का नाम नहीं लिया। सन 94 में पहला लघुकथा–संग्रह 'सरसों के फूल' भी आ गया।

बलराम कभी बाल–नाटक, कभी वाल्मीकीय रामायण तो कभी ओशो रजनीश पर काम करते दीखते हैं, लेकिन वे फिर–फिर अपने मूलाधार यानी लघुकथा की ओर लौट आते हैं। 'जैसे उड़ि जहाज को पंछी, फिरि जहाज पे आवै...'।

प्रशंसा और सम्मान को लेखक किस प्रकार लेता है, कलम पर इस बात का प्रभाव पड़ना लाज़मी है। श्याम सुंदर अग्रवाल ने अपनी माताजी के नाम से मिन्नी कहानी/लघुकथा पर 1992 में माता शरबती देवी सम्मान शुरू किया तो पहला सम्मान पाकर मैं भी दो साल भटका रहा। लेकिन 1997 में बलराम अग्रवाल यह सम्मान पाकर और भी सक्रिय हो गए। इसी बरस इनकी सम्पादित पुस्तक 'मलयालम की चर्चित लघुकथाएँ' प्रकाशित हुई। बाद में 'तेलुगु की मानक लघुकथाएँ' भी आई। और सम्मेलनों में तो अक्सर उपस्थित रहने वाले बलराम अग्रवाल के साथ मेरी बहुत–सी यादें जुड़ी हैं। हम सन 88 से अब तक पटना, बरेली, कोटा, पंचकूला, अमृतसर, कोटकपूरा, रायपुर, दिल्ली, अबोहर, इंदौर, भोपाल आदि जाने कितने शहरों में कितनी–कितनी बार प्रतिभागी के रूप में गए हैं। और जाने कितनी जगहों पर रात को हमारे ठहाकों ने कितनों को जगाया और हँसाया, इसकी अनुगूँज कई दिन तक बनी रहती थी।

■ 1882, सेक्टर 13, करनाल–132001, हरियाणा/मो. 09416152100

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'

सदा सक्रिय डॉ. बलराम अग्रवाल

डॉ. बलराम अग्रवाल जी से मेरा परिचय 1980 के आसपास का है। मैं एक गम्भीर लघुकथा–लेखक के तौर पर इनको जानता था। फ़रवरी 1989 में बरेली के लघुकथा–सम्मेलन में भेंट हुई। इसी वर्ष फिर शाहदरा की लघुकथा–गोष्ठी में मिले। इसके बाद मिन्नी और पटना के लघुकथा सम्मेलन में

लगातार इनकी सक्रियता देखने को मिली। व्यक्ति के रूप में इनकी सबसे बड़ी विशेषता है कि ये एक लेखक से भी ऊपर पारिवारिक सदस्य की तरह हैं, जिसके दर्शन हमें श्याम सुन्दर अग्रवाल, श्याम सुन्दर दीप्ति और डॉ. पुष्करणा, मधुदीप और डॉ. उमेश महादोषी के साथ रही इनकी अन्तरंगता में मिलते हैं। लघुकथा–सृजन के साथ ही इनका सम्पादन–कार्य का क्षेत्र भी बहुत बड़ा रहा। लम्बे अर्से तक द्वीप लहरी के सम्पादन में सहयोग किया तथा अनेक मित्रों को पत्रिका से जोड़कर लघुकथाओं को भी प्रोत्साहित किया। आधुनिक साहित्य, साहित्य अमृत के यादगार विशेषांक निकाले, तो अविराम साहित्यिकी में मित्र महादोषी जी के साथ निरन्तर जुड़े रहे। जिस शहर में गए, वहाँ नए–पुराने लघुकथाकारों से भी समय निकालकर सम्पर्क किया। लघुकथा के प्रति इनके समर्पण का सबसे बड़ा उदाहरण है, स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति के बाद आराम न करके परिश्रमपूर्वक पीएच. डी. करना। लघुकथा के अतिरिक्त मंचीय नाटकों का सृजन इनका महत्त्वपूर्ण कार्य है। काव्य के क्षेत्र में क्षणिकाओं पर इनकी मज़बूत पकड़ है। फोटोग्राफी में इनकी विशेष अभिरुचि है। इस क्षेत्र में भी इनका कलात्मक सौन्दर्यबोध अनुकरणीय है।

स्वयं आगे बढ़ने के साथ दूसरों को आगे बढ़ाना इनका महत्त्वपूर्ण गुण है। आजकल लोगों की यह प्रवृत्ति कम होती जा रही है। अधकचरा लिखने वाले और छपास के रोगी इनके विचारों और लघुकथा–चिन्तन से प्रायः सहमत नहीं होते। ये ऐसे लोगों के सामने अपनी बात रख देते हैं और उनकी असहमति और असन्तुष्टि की चिन्ता किए बिना आगे बढ़ जाते हैं।

कुछ लोग ऐसे हैं जो कहीं भी बैठें, मुँह लटकाए रहते हैं। बलराम अग्रवाल उनसे बिल्कुल अलग हैं। जहाँ या जिन लोगों के बीच में बैठेंगे, पूरे वातावरण को अपने ठहाकों से जाग्रत कर देंगे। अवस्था के 70 वें वर्ष में पहुँचने पर भी ये आज के बहुत से युवाओं से अधिक सक्रिय हैं।

मेरी शुभकामना है कि आप अपने लेखन और जिजीविषा से सदा चिर युवा बने रहें।

■ 1704–बी, जैन नगर, गली नं. 4/10, कश्मीरी ब्लॉक, रोहिनी सेक्टर–38, करारा, दिल्ली–81/मो. 09313727493

विपिन जैन

बलराम अग्रवाल : बहुत सहज और साफ व्यक्ति

बलराम अग्रवाल हिंदी लघुकथा को समर्पित ऐसा नाम है, जिन्होंने लघुकथा लेखन के साथ आलोचना कार्य भी पर्याप्त रूप से किया है। लघुकथा में नेपथ्य को महत्व देते हुए वह कहते हैं– ''लघुकथा आकार की दृष्टि से क्योंकि कहानी की तुलना में बहुत छोटी कथा रचना है, जाहिर है उसका नेपथ्य कहानी की तुलना में विस्तृत होगा। लघुकथाकार कथा के मात्र

संदर्भित बिंदुओं पर कलम चलाता है, शेष को नेपथ्य में रखता है; लेकिन लघुकथा को कहानी के नेपथ्य से उसी तरह को–रिलेटेड और को–लिंक्ड रहना चाहिए जिस प्रकार कहानी का नेपथ्य उपन्यास के साथ रहता है। वस्तुतः नेपथ्य वह वातायन है, जिसे लेखक अपनी रचना में तैयार करता है तथा पाठक को विवश करता है कि वह उसमें झाँके तथा रचना के व्यापक संसार में विचरण करे, उसको जाने।'' उनकी जो लघुकथाएँ यत्र–तत्र पत्रिकाओं में छपती रही हैं, उनमें कथातत्व भरपूर नजर आता है तथा वे कहानी का छोटा रूप नहीं हैं। उनकी लघुकथा का रचाव और कसाव बेहतरीन होता है तथा उसकी लघुता में व्यापकता नजर आती है। बलराम अग्रवाल ने लघुकथा में व्यापक कार्य किया है। लंबे समय से मैं उन्हें जानता हूँ तथा व्यक्तिगत रूप से मिलता भी रहा हूँ। कथाकार के अलावा वह व्यक्ति के रूप में बहुत सहज और साफ व्यक्ति हैं। उनके कई लघुकथा संग्रहों से मैं गुजरा हूँ या मेरे पढ़ने में आए हैं। मुझे उनकी लिखी लघुकथाओं ने प्रभावित किया है। लघुकथा को लेकर वह किसी प्रकार अतिशयोक्तिभरी बातें नहीं करते। उसकी स्पष्ट अवधारणा उनके पास है। लघुकथा की सीमा और सामर्थ्य से भी वह परिचित हैं। मैं इस बात से पूर्णतया सहमत हूँ कि लघुकथा अभी भी अपने शैशवकाल में है, अभी उसे और आगे जाना है। लघुकथाएँ अपनी रचनात्मक शक्ति के बल पर ही आगे जाएँगी, याद रखना चाहिए। उन्हें कहानी की प्रतिद्वंद्वी बनकर सामने नहीं खड़ा होना है। भले ही कहा जाए कि अभी उसके फलों में यथे मीठापन नहीं है, उसके पास कहानी जैसी सामर्थ्य नहीं है; फिर भी लघुकथा जिस तरह आगे बढ़ी है और निरन्तर बढ रही है वह परिदृश्य निराश नहीं करता।

■ के आई 147, कविनगर गाजियाबाद–201002, उ.प्र./मो. 09873927829

डा. जितेन्द्र 'जीतू'

एक बानगी, बलराम अग्रवाल की लघुकथाओं की

बात ज्यादा पुरानी नहीं है। डा.रामकुमार घोटड़ व रामयतन यादव के सम्पादन में 'लघुकथा सप्तक' नामक संकलन आया था, जिसमें अन्य छह लघुकथाकारों के साथ–साथ बलराम अग्रवाल की कुछ चुनी हुई लघुकथाएँ भी हैं। ये एक तरह से बलराम अग्रवाल की प्रतिनिधि लघुकथाएँ मानी जानी चाहिए गोकि सम्पादकों ने इन लघुकथाओं को अपने सप्तक के लिए चुना है। इन लघुकथाओं में बलराम अग्रवाल के कुछ चुने हुए रंग छिपे हैं। एक लघुकथा पढ़िए आपको एक रंग मिलेगा। दूसरी लघुकथा पढ़िए, आपको दूसरा रंग दिखेगा। आप जैसे–जैसे पढ़ते जायेंगे, बढ़ते जायेंगे; आपको बलराम अग्रवाल की लेखन शैली के सुंदर दर्शन होते जायेंगे।

बलराम अग्रवाल को लघुकथा लेखन की संस्था यों ही नहीं माना जाता। उनके भीतर लेखन की आग है जिसे वे शब्दों के माध्यम से स्थानान्तरित करते हैं।

जैसे–जैसे उनका हाथ शब्दों को टंकित करता जाता है, वैसे–वैसे वे पाठकों के मन–मस्तिष्क में आग लगाते चलते हैं। जो आग कभी लेखक की होती थी, वही आग पाठकों को ट्रांसफर हो जाती है। उनकी लेखन शैली की दूसरी विशेषता यह है कि वे अपनी तड़प को बरकरार रखते हैं। आग ट्रांसफर करके भी तड़प बरकरार रहती है, जो उनकी लघुकथा को लिखने के लिए ज़रूरी सामान मुहैया कराती है। तीसरी चीज़ है बेचैनी। जो बेचैनी उनकी लघुकथा में उनके माध्यम से अन्तरित होती है, वही बेचैनी पाठकों में लघुकथा पढ़ने के बाद भी बनी व बची रहती है। चौथी विशेषता है सामान्य–सी प्रतीत होने वाली घटना को लघुकथा में रूपान्तरित कर देना।

संकलन में लघुकथा 'गोभोजन कथा' बलराम अग्रवाल स्पेशल है। लघुकथा भावपूर्ण है। मैसेज देती है। इन हिडन मैसेजेस के लिए ही बलराम अग्रवाल जाने जाते हैं। लघुकथा का शिल्प आकर्षित करता है। लघुकथा में 'बेजान पत्थर और अव्वल अहमक' जैसे वाक्य विन्यास पाठकों के मन के भीतर लघुकथा को नदी में नौका की भाँति दूर तक ले जाते हैं। लघुकथा के दोनों मुख्य पात्रों का चित्रण प्रभावी है। पति जहाँ हिन्दू–मुसलमानों में भेदभाव नहीं करता, वहीं पत्नी को शुरू में मुसलमानों के यहाँ गाय जैसे विषय पर नाक–भौं सिकोड़ते हुए दिखाया गया है। बाद में इसी स्त्री का मन गर्भिणी गाय और गर्भिणी स्त्री को देखकर बदल जाता है। वह दान के लिए गाय की अपेक्षा स्त्री का चुनाव करती है। लघुकथा में गाय की हार और स्त्री की विजय होती है। उस स्त्री की भी, जो गर्भिणी है। उसकी भी, जो दान दे रही है। इस प्रकार लघुकथा की विजय होती है। लेखक की जय होती है।

इसी संकलन में एक अन्य लघुकथा है 'अपने–अपने सुख।' लेखक साम्प्रदायिक नहीं होता। कम से कम एक अच्छे लेखक के लिए तो यही सिद्ध है। साथ ही यह भी सिद्ध है कि लेखक जिस विचारधारा का होता है उसी विचारधारा को श्रेष्ठ मानता है। हालांकि लेखन में विचारधारा का प्रभाव आता रहा है, आता है और आता रहेगा। जो लेखक अपने लेखन में गरीब, किसान, मजदूर और मेहनतकश लोगों को प्राथमिकता देता है उसी की रचनाएँ कालजयी और विश्वसनीय होती हैं क्योंकि सरकार और राजनीतिक पार्टियाँ तो आती–जाती रहती हैं। सत्ताएँ बदलती रहती हैं। गरीब, मजदूर, किसान प्रत्येक काल में विद्यमान रहते हैं। उन पर लिखा इसलिए हर पीढ़ी पढ़ती है। वही कालजयी होता है। यह भूमिका इसलिए कि बलराम अग्रवाल ने भी प्रस्तुत लघुकथा में अपनी व्यक्तिगत सोच को दरकिनार करते हुए एक प्रभावी विषय पर कलम चलायी है और मात्र चलायी ही नहीं है, उसे विश्वसनीय भी बनाया है। लघुकथा में अलीम सर को एक बच्चे की मौत पर सुकून है। ऐसा वे किसी से कह रहे हैं। वे कहते हैं कि यदि मरने वाला बच्चा हमारे धर्म का होता तो सेक्यूरल लोग आसमान सिर पर उठा लेते। उत्तर में रामलाल कहते हैं कि पकड़ा गया अपराधी हमारे धर्म का निकला, यह हमें भी सुकून है। यदि यह आपके मज़हब का होता तो राष्ट्रवादी आसमान सिर पर उठा लेते।

इसी संकलन में एक अन्य लघुकथा है 'दाम्पत्य।' दाम्पत्य जीवन की मनोदशा को बलराम अग्रवाल खूब समझते हैं। कम से कम नीरा और उसके पति के सम्बन्धों

वाली इस लघुकथा से तो यही सिद्ध होता है। नीरा को पति के लिए पैंट चाहिए। पति को नीरा के लिए साड़ी। अंत में पैंट जीतती है। लेकिन पति चाहता है कि साड़ी जीते। साड़ी तो नहीं जीतती पर नीरा जीत जाती है। लघुकथा में दात्पत्य जीवन के प्लस–माइनस को सधे शब्दों में दर्शाया गया है। लघुकथा में पुरुष के अहम् को दर्शाने से भी लेखक स्वयं को न रोक सका। शायद लघुकथा में स्वाभाविकता लाने के उद्देश्य से। पत्नी की लायी हुई पैंट पहनकर औंधे मुँह पलंग पर जा लेटना तो कम से कम यही दर्शाता है कि अब पत्नी मनाने के लिए आयेगी।

पत्नी आयी और मनाया। दोनों की आत्मा तृप्त हुई। पाठकों की भी हुई। पाठकों के बीच की लघुकथा है। पात्रों का चरित्र–चित्रण अलग से करने की अक्सर आवश्यकता होती ही नहीं है। लघुकथा का कथानक ही इसे तय कर देता है। दोनों का चित्रण मजबूती से हुआ है और प्रभावी भी है। लघुकथा का सौन्दर्य उसकी सरलता है। कथानक की भी। और पात्रों की भी।

इसी संकलन में एक अन्य लघुकथा है 'बेचारा कुल्फी वाला।' इस खूबसूरत, प्यार और बेवफाई की चाशनी में डूबी हुई लघुकथा का नाम ही है जो इस लघुकथा की गरमाई को ठंडा कर रहा है। यह एक पुरुष व स्त्री (लड़का व लड़की) की लघुकथा है जो प्रेम में आकंठ डूबे हुए थे कि लड़की ने लड़के को अपनी माँ के निर्णय से अवगत कराया। संकेतों से ज्ञात होता है कि माँ इस रिश्ते के लिए राजी नहीं है और स्त्री (लड़की) को माँ के इस निर्णय से कोई असहमति नहीं है। लड़की चाहती है कि उनके इस निर्णय से लड़का भी सहमत हो। ज़ाहिर है कि लड़का नहीं होता। उसकी आपत्ति है कि माँ बेशक इस रिश्ते से सहमत न हो, लड़की को माँ के इस निर्णय से सहमत नहीं होना चाहिए। लड़के को माँ के निर्णय से आपत्ति नहीं है। उसे आपत्ति है तो इस बात से कि लड़की माँ के पक्ष में बयान दे रही है। जबकि वह अब तक लड़के से प्यार करती रही है। इस हिसाब से उसने लड़के के विश्वास को खंडित किया है। इस मनोवैज्ञानिक लघुकथा में पाठक अंत में क्या तलाशेंगे, नहीं जानता। लेकिन प्यार के उतार–चढाव को लेखक ने इतनी खूबसूरती से शब्दों में बाँधा है कि जब दोनों अंत में अलग होते हैं तो पाठकों को थूक निगलने में भी कठिनाई होती है। संवाद शैली की इस लघुकथा में दोनों चरित्रों को भरपूर प्रभावी बनाने में लेखन ने कोई कसर नहीं छोड़ी है। लघुकथा में शिल्प की उपस्थिति शीर्ष पर है। जिसके लिए बलराम अग्रवाल को पाठक सिर पर बैठाते हैं। लघुकथा में शिल्प की पराकाष्ठा देखिए कि प्यार की जो शिद्दत लड़का लघुकथा में महसूस करता दिखाई देता है उसी शिद्दत को गंभीर पाठक लघुकथा पढ़ते हुए महसूस करता है, मानो लड़की से प्रेम वही करता हो। मानो लड़की ने ना उसे ही की हो। मानो लड़के का ग़म उसका ग़म हो। मानो लघुकथा में उसकी खुद की कथा हो। मानो खुद बलराम अग्रवाल उसके हों, उसकी कहानी लिख रहे हों, उसकी ज़िन्दगी का वृतान्त लिख रहे हों। लघुकथा के अंत में, अलग होते दोनों के रास्तों पर कुल्फी वाला दिखाई देता है। कुल्फी दोनों के सम्बन्धों की ठंडाई का प्रतीक (बिम्ब) है, जिसे बलराम अग्रवाल ने सोच–समझकर/जानबूझकर

रचा है। यह प्रतीक लघुकथा पर सूट भी करता है। यदि ऐसा है तो लघुकथा का नामकरण कुल्फीवाला नहीं, 'कुल्फी' होना चाहिए था। 'कुल्फी वाले' बेचारे की कोई भूमिका लड़के–लड़की को अलग करने में नहीं दिखी। शानदार लघुकथा।

■ कविकुल, खरवन्दा निवास, स्टेशन रोड, बिजनौर–246701, उ.प्र./मो. 08650567854

सन्तोष सुपेकर

डॉ. बलराम अग्रवाल : अनुकरणीय व्यक्तित्व

डॉ. बलराम अग्रवाल, नाम सामने आते ही एक अत्यंत ऊर्जावान, बात–बात में ठहाके लगाने वाले, सकारात्मक सोच से भरपूर, निराशा के हर सागर से आशा के मोती ढूँढ़ लाने वाले, सोते–जागते लघुकथा की चिंता करने वाले, स्वभाव से यायावर, जीवन्त व्यक्तित्व आँखों के सामने आ जाता है। उनसे मेरा सम्पर्क सन 2010 से है, जब आदरणीय सुरेश शर्माजी (अब स्मृति शेष) ने मेरे लघुकथा संग्रह 'बन्द आँखों का समाज' के विमोचन में उन्हें उज्जैन बुलाया था। संग्रह पढ़कर वे खुश नहीं हुए बल्कि उन्होंने इसे हास्यास्पद कहा, पर उनकी आलोचना मुझे प्रभावी लघुकथाएँ लिखने की नसीहत दे गई। लघुकथा में वाक्य विन्यास पर भी उन्होंने मेरी ही लघुकथा के उदाहरण से मुझे समझाया– ''वह चतुर दाढ़ीवाला व्यक्ति हिन्दू मोहल्ले में साधु और मुस्लिम मोहल्ले में फकीर बनकर भीख माँगता है'' ...उन्होंने कहा कि 'दाढ़ी चतुर नहीं होती' और फिर सुधार करवाया– 'वह दाढ़ीवाला चतुर व्यक्ति...'

फिर 2012 में बलराम जी की प्रेरणा से मैंने लघुकथा को लेकर विक्रम विश्वविद्यालय के हिंदी विभागाध्यक्ष डॉ. शैलेन्द्रकुमार शर्मा का साक्षात्कार लिया, जिसे उन्हीं (बलराम जी) के अतिथि संपादन में प्रकाशित 'अविराम साहित्यिकी' के प्रथम लघुकथा विशेषांक (अक्टूबर–दिसम्बर 2012) में प्रकाशित किया और वह काफी चर्चित और प्रशंसित रहा। मेरी लघुकथाओं में उन्होंने कई बार आवश्यक सुधार, सम्पादन किये। उनमें से एक, बाद में महाराष्ट्र सरकार के कक्षा दसवीं के हिंदी के पाठ्यक्रम में शामिल हुई।

लघुकथा को लेकर बलराम जी इतने उत्साहित हैं कि कहीं भी लघुकथा सम्मेलन में स्वयं के व्यय से आ जाते हैं। उनके प्रभावी आलेख पढ़कर हमने जाना कि लघुकथा में 'लाघव' क्या है। लघुकथा को लेकर वे 'सेंसिटिव' भी इतने हैं कि विधा को कोई खतरा पहुँच रहा हो तो बड़ी से बड़ी विभूति को भी खरी–खोटी सुनाने में नहीं चूकते। लघुकथा और उसके इतिहास से सम्बन्धित किसी भी तथ्य को वे एकदम मान नहीं लेते (चाहे वह कितनी ही बड़ी हस्ती ने लिखा या बताया हो) बल्कि उस सन्दर्भ में पूरी पड़ताल करने में विश्वास रखते हैं। उनके शब्दों में– ''हम तो लघुकथा का भला चाहते हैं किसी व्यक्ति विशेष से हमें मतलब नहीं।'' लघुकथा को लेकर कोई भी उनसे कभी भी बातचीत कर सकता है। भूख, प्यास या किसी और तृष्णा की मज़ाल नहीं जो उन्हें बातचीत से रोक सके। वे केवल लघुकथा तक सीमित नही हैं। उनका रचना संसार बहुआयामी है, वे एक सफल अनुवादक, सम्पादक, कथाकार और

व्यंग्यकार भी हैं। उनकी रचनाएँ एक नई दृष्टि के साथ, आज के समय से साक्षात्कार कराती हैं। अपनी मौलिकता को बरकरार रखते हुए, हृदय को छूती हैं। भरोसा, पीले पंखों वाली तितलियाँ, बिना नाल का घोड़ा आदि इसके श्रेष्ठ उदाहरण हैं। डॉ. बलराम अग्रवाल जी का लघुकथा के प्रति प्रेम–समर्पण स्तुत्य, अनुकरणीय है। उनकी रचनाओं में छाई शब्दशिल्पता, गद्यात्मकता, आधुनिक भावबोध से उपजी प्रभावोत्पादकता सभी कुछ मंत्रमुग्ध कर देने वाला है। हाल ही में हिंदी लघुकथा विश्वकोष की शुरुआत कर उन्होंने लघुकथा के व्योम में नई लालिमा बिखेरी है। लघुकथा को बेहद समर्पित, लघुकथा में जीवन्तता और विविधता के इस प्रबल पक्षकार से हमें अभी बहुत उम्मीदें हैं।

■ 31, सुदामा नगर, उज्जैन–456001, म.प्र./मो. 09424816096

डॉ. नीरज शर्मा सुधांशु

बलराम अग्रवाल : अग्रिम पंक्ति के लघुकथाकार

साहित्य के क्षेत्र में अत्यंत सम्मानित नाम है डॉ. बलराम अग्रवाल जी का। ये सम्मान यूँ ही नहीं मिलता किसी व्यक्ति को। इसके पृष्ठ में उनका साहित्य के प्रति अनुराग, विषयों को समझने की क्षमता व तदनुरूप कठिन परिश्रम का महत्त्वपूर्ण योगदान है। लघुकथा, कहानी, बालकहानियाँ, समीक्षा जैसी अनेक विधाओं में माहिर बलराम अग्रवाल जी ने विशेष तौर पर लघुकथा विधा को अपनी मुख्य विधा स्वीकार किया।

सरसों के फूल, जुबैदा, पीले पंखों वाली तितलियाँ, तैरती पत्तियाँ काले दिन सहित कथा–साहित्य के छः संग्रह विधा के लिए मानक की तरह हैं। एक वरिष्ठ साहित्यकार से अपेक्षा रहती है कि वह अपने अनुभवों व ज्ञान से अपने अनुगामियों के लिए साहित्य के भंडार में विधा के सूक्ष्म बिंदुओं पर प्रकाश डालें। बलराम अग्रवाल जी ने अपने समीक्षात्मक–आलोचनात्मक आलेखों व अनेक साक्षात्कारों के माध्यम से अनेक भ्रमों का निवारण कर विधा को समझने वालों के लिए राह आसान की है। एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा था– मनुष्य के मस्तिष्क की बंद खिड़कियों और जंग लगे कब्जों को खोलने, स्मूदनैस देने का काम करने वाले 'टूलकिट' का नाम साहित्य है।

वनिका पब्लिकेशंस के बैनर तले दिए एक वीडियो–साक्षात्कार में उन्होंने लघुकथा व कहानी के अंतर को बखूबी समझाया था। लघुकथा विधा में पदार्पण कैसे हुआ के प्रश्न का उत्तर देते हुए उन्होंने बताया कि एक बार कात्यायिनी पत्रिका में लघुकथा नाम से कॉलम देखा। पत्रिका में उन रचनाओं को पढ़ने पर उन्हें लगा कि ऐसी छोटी रचना तो वे भी लिख सकते हैं। इस तरह से लघुकथा विधा को एक उत्कृष्ट लघुकथाकार मिला। वह लघुकथा को स्थापित करने व कथा विधा में उचित स्थान दिलाने का समय था। इस पुनीत कार्य में बलराम अग्रवाल जी का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। मैंने उनकी पहले की व आज की भी अनेक लघुकथाएँ पढ़ी हैं। मुझे हमेशा महसूस हुआ है कि किसी कथ्य को लघुकथा की माँग के अनुरूप संवेदना के उच्च स्तर पर पहुँचाने में उनका जवाब नहीं।

उन्होंने लघुकथा लेखन में प्रचलित रूढ़िगत रवैये को तोड़ने का साहस दिखाया। उनके पास तथ्यों को समझने व समझाने की अनूठी दृष्टि है। उन्होंने अपने विस्तृत अध्ययन से लघुकथा को भी कालखंडों में बाँटा है। ...उन्हीं के प्रयासों से लघुकथाकार कोश जैसा श्रमसाध्य कार्य संपन्न हो पाया है। अनेक वर्षों से अपने ब्लॉग जनगाथा के अंतर्गत वे लघुकथा को लेकर हो रहे कार्यों का समावेश करते रहे हैं। बात पुस्तकों की हो या ऑनलाइन माध्यम की, उनका सदैव प्रयास रहता है कि लघुकथा के विषय में हो रहे नवीन कार्यों से अवगत कराते रहें। प्रतियोगिताओं में निर्णायक की भूमिका निभाते हुए उन्होंने उत्कृष्ट रचनाओं को पुरस्कृत कराया है। अनेक पत्रिकाओं व पुस्तकों के लघुकथा–विशेषांकों का संपादन कर अच्छी लघुकथाएँ पाठकों तक पहुँचाते रहे हैं। साथ ही पाठ्य–पुस्तकों में लघुकथा के समावेश के लिए प्रयासरत रहे हैं। लघुकथा विधा के क्षेत्र में अग्रिम पंक्ति में उनका नाम रखा जाता है। एक विधा के विकास के लिए जो कुछ भी किया जाना चाहिए उस सबमें बलराम अग्रवाल जी का महत्वपूर्ण योगदान है।

■ सरल कुटीर, आर्यनगर, नई बस्ती, बिजनौर–246701, उ. प्र./मो. 09837244343

शशि पाधा

लघुकथा साहित्य को समर्पित बलराम अग्रवाल

बहुआयामी प्रतिभा के धनी बलराम अग्रवाल जी के समग्र लेखन की ओर दृष्टि डालें तो कहानी, लघुकथा, यात्रा संस्मरण, बाल कथाएँ आदि विभिन्न विधाओं में उनकी उत्कृष्ट रचनाएँ साहित्य जगत को समृद्ध कर रही हैं। लेकिन उनकी रचनाधर्मिता के रुख को पहचानें तो लघुकथा के प्रति उनका विशेष लगाव दृष्टिगोचर होता है। लघुकथा के विकास के क्षेत्र में उनका अमूल्य योगदान और समर्पण का भाव इस विधा को और भी परिष्कृत एवं परिमार्जित करने में सहायक रहा है। अपनी विधा के प्रति ऐसा समर्पण विरलों में ही देखा गया है।

बलराम अग्रवाल जी की लघुथाओं में विषय के वैविध्य के कारण उनका पाठक के साथ सीधा सम्पर्क जुड़ जाता है। उनके पात्र और प्रसंग भी जमीन से जुड़े हुए रहते हैं। उनकी लघुकथाओं में कहीं समाज की विसंगतियों के प्रति चिंता है, कहीं कुप्रथाओं पर शब्दों का प्रहार है, कहीं राजनैतिक व्यवस्था की उथल–पुथल और कहीं शोषण की चक्की में पिसे हुए शोषित वर्ग की पीड़ा का मौन चीत्कार है। बाल–मनोविज्ञान जैसे सूक्ष्म विषय को केंद्र बिंदु बनाकर उन्होंने बहुत–सी रचनाएँ लिखी हैं, जिनको पढ़ने से पाठक को बालमन की कोमलता के साथ–साथ बच्चों के मन के अंतर्द्वन्द्व को भी जानने और समझने का अवसर मिलता है। इनकी बालमन पर केन्द्रित लघुकथाओं को पढ़कर ऐसा लगता है, जैसे इन पात्रों का बचपन असमय ही उनसे छीन लिया गया हो।

उनके समग्र लेखन में से कुछ लघुकथाओं का मैं उल्लेख करना चाहूँगी। 'लगाव' पढ़ते–पढ़ते पाठक के सामने मुख्य पात्र बाबूजी की आन्तरिक व्यथा मूर्तरूप

में सामने आकर खड़ी हो जाती है। अभी–अभी खोई पत्नी के वियोग की पीड़ा से व्यथित बाबूजी बेटे–बहू को अपना दुःख भी नहीं बता सकते। चुपचाप अपनी पत्नी की मनसद को गोदी में रखने से शायद उनकी वेदना कम होती हो। केवल मनसद को गोदी में रखने के चित्र ने इस लघुकथा को कालजयी बना दिया है।

इसी प्रकार उनकी एक और लघुकथा 'सियाही' के अंत तक आते–आते पाठक दुनिया की स्याह तस्वीर के काले–सफेद सारे रंग देखने लग जाता है। वास्तव में अखबार तो एक माध्यम है; समाज, देश राजनीति के वीभत्स रूप को स्याही में रंगने का। अखबार को नकारना यानी विसंगतियों से जूझने की कशमकश जैसा अंतर्भाव मन को कचोट देता है। इसी प्रकार 'समंदर : एक प्रेमकथा' में भरपूर जीवन जी चुकी दादी और पोती के बीच संवाद के रूप में लिखी गई है। शरीर से बूढ़ा होकर भी व्यक्ति मन से बूढ़ा नहीं होता, क्यूँकि जीवन के वसंत का उल्लास उसके संग सदा साये की तरह जीता है और हर पल उसके अस्तित्व को तरंगित करता रहता है।

विशिष्ट लघुकथाकार बलराम अग्रवाल जी की लघुकथाएँ पाठक और इस विधा के साधक का मार्गदर्शन भी करती हैं और प्रेरित भी। इस विशेषांक के माध्यम से उन्हें बहुत–बहुत शुभकामनाएँ।

■ वर्जीनिया, यूएसए / ईमेल : shashipadha@gmail.com

डॉ. जेन्नी शबनम

बलराम अग्रवाल : प्रतिष्ठित लघुकथाकार

श्री बलराम अग्रवाल साहित्य–संसार में बहुत सम्मानीय और प्रतिष्ठित हस्ताक्षर हैं। कहानी, कविता, बाल साहित्य, आलोचना, लेख, लघुकथा, अनुवाद आदि के अग्रणी लेखक हैं। अंडमान–निकोबार की लोककथाओं और ख़लील जिब्रान की लघुकथाओं का हिंदी अनुवाद कर इन्होंने उल्लेखनीय कार्य किया है। लघुकथा–विषयक कार्यों के लिए बलराम जी को सम्मान प्राप्त हो चुका है।

लघुकथा की विकास यात्रा में बलराम जी का बहुत महत्वपूर्ण व प्रभावपूर्ण योगदान है। इनका ब्लॉग 'लघुकथा–वार्ता' लघुकथा–विषयक विचारों के लिए तथा 'जनगाथा' लघुकथा विधा की ब्लॉग पत्रिका है। बलराम जी के लघुकथा पर लिखे आलेख नवोदित लघुकथाकारों के लिए ही नहीं बल्कि पाठकों के लिए भी बहुत महत्वपूर्ण है। 'लघुकथा की रचना–प्रक्रिया' लेख में वे बताते हैं कि बोधकथा, नीतिकथा, भावकथा से अलग लघुकथा क्यों और कैसे है। बलराम जी कहते हैं, ''चेतना जितनी अधिक प्रखर होगी, लेखनी उतनी ही मुखर होगी।'', ''लेखक का धर्म है कि वह अन्तःजगत् से जुड़े। जितना गहरा वह पैठेगा, उतना ही गहरा वह प्रस्तुत करेगा।'', ''अपनी समेकित इकाई में लघुकथा को गद्य–गीत जैसी सुस्पष्ट, सुगठित व भावपूर्ण; कविता जैसी तीक्ष्ण, सांकेतिक, गतिमय और लयबद्ध तथा कथा की ग्राह्य

शीर्ष विधाओं– कहानी व उपन्यास जैसी सम्प्रेषणीय और प्रभावपूर्ण होना चाहिए।''

'लगाव' लघुकथा मुझे बेहद पसंद है। इस लघुकथा में मार्मिक और मानवीय संवेदनाओं की अद्‌भुत अभिव्यक्ति है। छोटी–छोटी बातें या छोटी–छोटी घटना या सामान्य–सी चीज़ कई बार कितनी अनमोल हो जाती है, यह इस लघुकथा में देख सकते हैं। जीवन साथी जब अकेला रह जाए तो यही छोटी–सी चीज़ जीवन जीने के लिए सम्बल बन जाती है। लघुकथा के माध्यम से जीवन–दृष्टि, सोच और चिंतन को विकसित करने के लिए 'पिताजी ने कहा' बलराम जी की एक बहुत प्रभावी लघुकथा है।

बलराम जी लघुकथा की विकास–यात्रा में लघुकथा के ऐसे सहयात्री हैं जो लघुकथा के साथ स्वयं भी यात्रा करते हैं व दूसरों को भी प्रेरित कर इस यात्रा में शामिल करते हैं।

■ द्वारा श्री राजेश श्रीवास्तव, द्वितीय तल, 5/7, सर्वप्रिय विहार, नई दिल्ली–16

डॉ. शील कौशिक

लघुकथा में डॉ. बलराम अग्रवाल का मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण

बहसों और चर्चाओं के बीच से निखरकर लघुकथा आज जहाँ आकर खड़ी है और अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाए हुए है, वह अनेकानेक मूर्धन्य लघुकथाकारों के प्रयासों से ही संभव हुआ है। बीसवीं सदी की शुरुआत से लेकर अब तक यदि डॉ.बलराम अग्रवाल जी के लघुकथा में योगदान पर दृष्टिपात करते हैं, तो निश्चित ही यह अति महत्वपूर्ण व अंकन योग्य है। उन्होंने न केवल लघुकथा सृजन में ही अपनी धाक जमाई है बल्कि लघुकथा के तत्वों को अपनी गहरी विश्लेषणात्मक दृष्टि से नए सिरे से परिभाषित किया और नये आयाम स्थापित किए हैं।

मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि मैंने जबसे लघुकथा को जाना है, तब से ही आदरणीय डॉ. बलराम अग्रवाल से मैं परिचित रही हूँ। सन् 2004 त्रैमासिक मिन्नी, अमृतसर के तत्वावधान में आयोजित विभिन्न अंतर्राज्यीय लघुकथा–सम्मेलनों में इन्हें सुना, समझा और गुना है... लघुकथा के प्रति इनके समर्पण को देखा है। मेरे संयोजन में आयोजित 3–4 अक्टूबर 2009 को हरियाणा लेखिका मंच के संयुक्त तत्वावधान में तथा उसके पश्चात भी हरियाणा प्रादेशिक लघुकथा मंच, सिरसा की ओर से सिरसा में आयोजित अनेक लघुकथा–सम्मेलनों में समीक्षक के रूप में भागीदारी कर चुके हैं। अपनी गहन विश्लेषणात्मक एवं मनोवैज्ञानिक दृष्टि से नवोदित लघुकथाकारों का आपने सदैव ही मार्ग प्रशस्त किया है।

समकालीन लघुकथा को संपूर्णता से देखने का डॉ. बलराम जी का अनूठा कथन है, जो मुझे बहुत अपील किया है, कि कम शब्दों में बस आप एक फोटो की कल्पना कीजिए, जिसे छोटे आकार में इस कुशलता से निकाला गया हो कि उसमें चित्रित व्यक्ति अथवा परिवेश (कथा के संदर्भ में मनोभाव भी) का कोई भी 'डिटेल' दबने न पाया हो और एनलार्ज करने पर सिनेरियो उतना ही रहे, अपने मूल आकार से छोटी या बड़ी करने पर प्रभावशीलता और आकर्षण की स्वाभाविक तीव्रता को खो बैठती है। इसी प्रकार लघुकथा में नेपथ्य के महत्व को उजागर करते हुए डॉ. बलराम जी ने कहा है कि यदि लघुकथाकार कथा के मात्र

संदर्भित बिंदुओं पर कलम चलाता है और शेष को नेपथ्य में बनाए रखता है, यह उसका कथा–कौशल है और यही लघुकथा की प्रभावकारी क्षमता है। लघुकथा में नेपथ्य पाठक के भीतर एक श्रृंखला जागृत कर देने की क्षमता रखता है, यानी लिखे या कहे जा चुके के नेपथ्य में पाठक को उतार देना, उसके पीछे के हालात को जानने–समझने की उत्सुकता उसमें जगा देना, लघुकथा का विशिष्ट गुण है।

डॉ. बलराम जी का कथन है कि लघुकथा अब गुफाओं को छोड़कर मैदान में आ बसी है और मैदान से वितान की ओर बढ़ चली है। अर्थात अब लघुकथा में मानव जीवन से संबंधित सभी विषय– विचार हो या कर्म, नीति हो या धर्म, सभी क्षेत्रों पर समकालीन समाज असंगतियों का एक उलझा हुआ गुंजलक बनकर रह गया है। इस गुंजलक का हर घुमाव, हर मोड़ अवांछित और अप्रिय असंगति के कारण दर्द का पुंज बन गया है। समकालीन लघुकथा इस गुंजलक के जोड़ों और घुमावों में पैठ चुके असाध्य दर्द का आख्यान है, जो सामाजिक ताने–बाने में पैठ गया है।

डॉ. बलराम अग्रवाल जी का हिंदी में पीएच.डी. का विषय मनोविज्ञान रहा है और उन्होंने इसमें समकालीन हिंदी लघुकथा में मानवीय व मानवेतर, दोनों श्रेणी के पात्रों के व्यवहार में आने वाले मनोवैज्ञानिक औचित्य को समझने का प्रयास करने के साथ–साथ उनके मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन पर सैद्धांतिक व व्यवहारिक दोनों दृष्टियों से प्रकाश डाला है। लघुकथा की सौंदर्यानुभूति व प्रभावशीलता में मनोविज्ञान का महत्वपूर्ण योगदान है। डॉ. बलराम अग्रवाल ने 'हिंदी लघुकथा का मनोविज्ञान' पुस्तक में सन 1971 से लेकर 2016 तक की लघुकथा यात्रा को समेटा है। यानी इस दौरान की लघुकथाओं को मनोविज्ञान और मनोविश्लेषण के विभिन्न सिद्धांतों की कसौटी पर कसा है। मैं समझती हूँ लघुकथा क्षेत्र में यह पहला और अनूठा कार्य है। उन्होंने न केवल अन्य लघुकथाकारों की लघुकथाओं को इस कसौटी पर कसा है, बल्कि स्वयं उनकी बहुत सी लघुकथाओं में यही दृष्टिकोण परिलक्षित होता है। उदाहरण के लिए 'बिना नाल का घोड़ा' व 'पीले पंखों वाली तितलियाँ' इनकी चर्चित एवं प्रशंसित लघुकथाएँ हैं। 'पीले पंखों वाली तितलियाँ' लघुकथा में बाल मनोविज्ञान को किस तरह तितलियों व छिपकली के माध्यम से पिरोया है, यह सीखने वाली बात है। इसी प्रकार 'बिना नाल का घोड़ा' में फेंटेसी के साथ–साथ नायक के मनोविज्ञान को घोड़े के रूप में प्रयुक्त प्रतीक के माध्यम से घर और कार्यालय के बीच नायक की भागती–दौड़ती व संघर्षरत जिंदगी को दर्शाया गया है। लघुकथा का मार्मिक अंत नायक के प्रति पूरी सहानुभूति बटोर लेता है– ''तुम्हारी कुंडली कल पंडित जी को दिखाई थी। ग्रह–दशा सुधारने के लिए काले घोड़े की नाल से बनी अँगूठी अपने दाएँ हाथ की अंगुली में पहननी होगी,'' माँ ने कहा।

''नाल पर अब कौन पैसे खर्च करता है माँ!'' माँ की बात पर वह कातर स्वर में बुदबुदाया, ''हंटरों और चाबुकों के बल पर अब तो मालिक लोग बिना नाल ठोंके ही घोड़ों को घिसे जा रहे हैं... ।'' यह कहते हुए अपने दोनों पैर चादर से निकाल कर उसने माँ के आगे फैला दिए, ''लो...देख लो।''

लघुकथा के इस अनवरत पथिक को अनेकानेक साधुवाद व शुभकामनाएँ।

■ मेजर हाउस–17,हुडा सेक्टर–20, पार्ट–1,सिरसा–125056 हरियाणा / मो. 09416847107

डॉ. संध्या तिवारी

लघुकथा के पर्याय डॉ. बलराम अग्रवाल

विगत वर्षों में हमारे कितने ही लघुकथा पुराधाओं ने लघुकथा के सुगठित, सुसंस्कृत और विकसित गढ़न को रचने में भारी योगदान दिया है। उन्हीं विद्वानों की अग्रिम पंक्ति का एक जाना–पहचाना नाम है डॉ. बलराम अग्रवाल।

डॉ. बलराम अग्रवाल जी ने हालांकि लघुकथाओं के इतर बाल साहित्य, कहानी, कविताएँ भी लिखी हैं लेकिन उनका महत्वपूर्ण काम लघुकथा क्षेत्र में अधिक है। उनकी लघुकथा यात्रा 1971–72 से आरम्भ हुई तो अब तक उत्थानोन्मुख है। लघुकथा संग्रह– सरसों के फूल, जुबैदा, पीले पंखोंवाली तितलियाँ, तैरती हैं पत्तियाँ, काले दिन, सूली ऊपर सेज के अतिरिक्त डॉ. साहब ने आलोचना, सम्पादन, लघुकथा अनुवाद आदि में महत्वपूर्ण कार्य किया है। हिन्दी लघुकथा का मनोविज्ञान, परिंदों के दरमियाँ, लघुकथा का प्रबल पक्ष, लघुकथा : चिंतन–अनुचिंतन आदि उनकी प्रमुख आलोचनात्मक पुस्तकें हैं। डॉ. बलराम अग्रवाल जी ने सम्पादन क्षेत्र में भी उल्लेखनीय कार्य किया है। त्रैमासिक पत्रिका– जनगाथा एवं अनेक पुस्तकों के साथ उन्होंने कई पत्रिकाओं के विशेषांकों का भी संपादन किया है। इनमें विशेषतः सहकार संचय, द्वीप लहरी, आधुनिक साहित्य, अविराम साहित्यिकी आदि उल्लेखनीय हैं।

इसके अतिरिक्त 'सियाह हाशिए' का उर्दू से, 'वाल्मीकि रामायण' का संस्कृत से तथा अनेक विदेशी लघुकथाओं का अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद कार्य भी किया। डॉ. साहब निरंतर लघुकथा क्षेत्र में अपना अतुलनीय योगदान देकर लघुकथा विधा को अन्य विधाओं की तरह साहित्य के शीर्ष पर पहुँचाने के लिए कटिबद्ध प्रतीत होते हैं। मेरी दृष्टि में तो वह लघुकथा के पर्याय ही बन चुके हैं।

■महिला पुलिस चौकी के सामने, निकट सलोनी हॉस्पीटल, यशवंतरी रोड, पीलीभीत, उ.प्र./मो. 07017824491

डॉ.चंद्रेश कुमार छ्तलानी

डॉ.बलराम अग्रवाल : लघुकथा का एक प्रबल पक्ष

किसी रचनाकार की सबसे बड़ी पहचान उनकी रचनाएँ होती हैं। डॉ. बलराम अग्रवाल से मेरी पहचान उनकी रचनाओं के जरिए ही हुई है। कई सालों पहले इन्टरनेट पर लघुकथा सर्च करते समय वेबसाइट 'गद्य कोश' में एक ही व्यक्ति की 20–25 लघुकथाओं की सूची दिखाई दी। पहली बार देखी 'गद्य कोश' वेबसाइट का नाम भी अच्छा लगा और उस वक्त लघुकथा कहने–सीखने के पहले स्तर पर खड़ा मैं 'गद्य कोश' में एक ही व्यक्ति की इतनी रचनाओं को देखकर स्वतः ही आकर्षित हुआ। आप समझ ही गए होंगे कि वह सूची

किनकी रचनाओं की थी। तब रचनाओं द्वारा पहली बार परिचय हुआ था डॉ. बलराम अग्रवाल से। मेरे द्वारा पढ़ी गयी उनकी पहली लघुकथा है– 'अकेला कब तक लड़ेगा जटायु'। गद्य कोश की उस सूची में यह शीर्षक पढ़ते ही उत्सुकता जागी कि यह रचना कैसी होगी? इस कालजयी रचना से मैंने कई दफा कुछ न कुछ पाया है। इस रचना का उद्देश्य मुझे समाज को यह समझाना प्रतीत हुआ है कि 'जटायु तो अकेला ही था और अकेला ही है लेकिन आज के युग में रावणों की संख्या बढ़ गयी है। बदमाशों के गुट बन गए हैं और गुट का हर व्यक्ति रावण का कर्तव्य अदा कर रहा है, परन्तु नारी रुपी सीता की रक्षा में जटायु का साथ देने की बजाय लोग अपनी शांति में दखल न हो, यह पसंद करते हैं।' यह रचना समाज के अजटायु रूप के प्रति हृदय में आक्रोश भर देती है।

पड़ाव और पड़ताल, जिसे मैं 'लघुकथा का बाइबिल' मानता हूँ और अपने मित्रों से भी ऐसे ही परिचय करवाता हूँ, के खंड 17 में बलराम अग्रवाल जी की 66 लघुकथाएँ हैं और उनकी पड़ताल की गयी है। खंड के प्रारंभ में 'मेरी लघुकथा यात्रा' के अंतर्गत डॉ. बलराम ने 'लघुकथा हमें साथ लेकर चलती है' शीर्षक के अंतर्गत अपनी लघुकथा यात्रा के विस्तृत वर्णन के प्रारंभ में गीता को उद्धृत करते हुए कुछ इस तरह से कहा है कि ''व्यक्ति अपनी इन्द्रियों के माध्यम से जो कुछ ग्रहण करता है वह 'आहार' है और जो कुछ भी देता है वह 'विहार' है।'' गीता के अध्याय 6 के श्लोक संख्या 17 'युक्ताहार विहारस्य...भवति दुःखहा' का उल्लेख करते हुए उन्होंने अन्न को स्थूल से सूक्ष्म तक परिभाषित भी किया। हालाँकि हो सकता है कि यह बात लघुकथा मानकों के लिए इतनी महत्वपूर्ण नहीं हो, लेकिन महत्वपूर्ण है डॉ. बलराम अग्रवाल का अध्ययन। मेरा मानना है कि उन्होंने इसे इस तरह भी ग्रहण किया होगा कि व्यक्ति जिस तरह के साहित्य को पढ़ेगा, वैसा ही उसकी बुद्धि का विकास भी होगा। उन्होंने गीता का इतना गहन अध्ययन किया है तो किस तरह के ज्ञान ने उनके मन–मस्तिष्क का विकास किया होगा यह तो हम समझ ही सकते हैं; साथ ही गीता स्वयं भी सरल भाषा में कही गयी वह लघु पुस्तक है जिसका अर्थ तो आसानी से समझा जा सकता है लेकिन भावार्थ बहुत मुश्किल से। यही तो लघुकथा भी है सरल शब्दों में कही गयी लघु रचना जिसका विस्तार अनंत तक हो सकता है। लघुकथा शब्द किसी ने न सुना हो, लेकिन गीता समझने का प्रयास किया है तो लघुकथा यात्रा अपने–आप ही शुरू हो जाती है। पड़ाव और पड़ताल के खंड 17 में डॉ. बलराम ने अपनी लघुकथा यात्रा के बारे में बताने से पहले एक ऐसा सन्देश दिया है जो न केवल लघुकथा का एक दृश्य खींचने का सामर्थ्य रखता है वरन उनके व्यक्तित्व के बारे में भी एक गहरा सन्देश देकर जाता है।

लघुकथा विधा के प्रेमियों ने यदि बलराम अग्रवाल की रचना 'नया नारा' नहीं पढ़ी तो उनसे बहत कुछ छूटा हुआ है। दोगली मानसिकता के विरोध में जंगी 'इन्कलाब जिंदाबाद' के स्थान पर 'इन–की–लाश झंडाबाद' का नारा लगाता है, यह कहकर कि 'नारे बनाये जाते हैं – रटे नहीं जाते, दमन के खिलाफ सिर्फ आवाज़ ही नहीं तलवार भी उठाऊँगा... माँगे नहीं मानी गयी तो इन–की–लाश ही करूँगा और झंडे पर लटका दूँगा।'' आक्रोश में डूबी यह पंक्ति कितने ही प्रश्न छोड़ जाती है– जंगी

'इन्कलाब जिंदाबाद' क्यों नहीं कह रहा? अपनी माँगें मनवाने के लिए तलवार उठाने की बात उसके दिमाग में क्यों आई? उसने कितना शोषण सहा या देखा होगा? और झन्डे पर लटका दूँगा! यहाँ झंडे अर्थात प्रशासन/सरकार का व्यक्ति की बजाय झंडे के मोह के प्रति विरोध का सटीक चित्रण एक पंक्ति द्वारा किया गया है।

लघुकथा विधा में परिवर्धन का आकलन करते हुए बलराम अग्रवाल कहते हैं कि, ''आरम्भिक लघुकथाएँ आम तौर पर उपदेश और उद्‌बोधन की मुद्रा में नज़र आती हैं या फिर व्यंग्य व कटाक्षपरक पैरोडी कथा के रूप में, जबकि समकालीन लघुकथा मानवीय संवेदना को प्रभावित करने वाली बाह्य भौतिक स्थिति अथवा आन्तरिक मनःस्थिति के चित्रण मात्र से पाठक मन में आकुलता उत्पन्न करने का, मस्तिष्क में द्वन्द उत्पन्न करने का दायित्व–निर्वाह करती है। अध्ययन से सिद्ध होता है कि समकालीन लघुकथा पाठक के समक्ष सिर्फ निदान प्रस्तुत करती है, समाधान नहीं।''

केवल रचनाएँ ही नहीं, लघुकथा–एक्टिविस्ट बलराम अग्रवाल की रचनाओं के शीर्षक भी मनन करने योग्य हैं– 'अकेला कब तक लड़ेगा जटायु' के अतिरिक्त 'कंधे पर बेताल', 'एल्बो', 'और जैक मर गया', 'अलाव के इर्द–गिर्द', 'अज्ञात–गमन', 'बदलेराम', 'अथ ध्यानम्', 'ब्रह्म सरोवर के कीड़े', 'कसाईघाट', 'आखिरी उसूल' आदि लघुकथाओं के शीर्षक ही अपने आप में इतना सामर्थ्य रखते हैं कि पाठक का ध्यान स्वतः ही आकर्षित हो जाए।

अंत में एक साक्षात्कार में डॉ. बलराम अग्रवाल द्वारा कहे गए शब्द उद्धृत करना चाहूँगा, जिनमें एक सन्देश भी निहित है, ''लघुकथाकार के रूप में मैं केवल हिन्दी समाज से ही नहीं समूचे मानव समुदाय से मुखातिब हूँ और अपनी बात को 'प्रवचन', 'सैद्धांतिक आदेश' या 'नैतिक निर्देश' के रूप में बोलने की बजाय रचनात्मक लघुकथा के रूप में ही रखना ज्यादा पसन्द करूँगा।''

■ 3 प 46, प्रभात नगर, सेक्टर–5, हिरण मगरी, उदयपुर–313002, राज./मो. 09928544749

प्रेरणा गुप्ता

डॉ. बलराम अग्रवाल : प्रेरणास्पद व्यक्तित्व

स्थापित लघुकथाकार आदरणीय डॉ. बलराम अग्रवाल जी आज हर किसी के लिए प्रेरणास्रोत हैं, आपका नाम लेते ही मन श्रद्धा से भर उठता है। आपकी लेखकीय यात्रा को शब्दों में बाँधना आसान नहीं है। वर्षों से अपनी लेखनी के माध्यम से आप जो देते आए है, वो आज लघुकथा जगत में धरोहर के रूप में अंकित है। आपके पास इंसानों के मनोभावों पढ़ने की अति सूक्ष्म दृष्टि है। समाज में व्याप्त विसंगतियों पर भी आपकी पैनी नजर है, जो कलम की धार पर रच–बसकर सीधे पाठक के हृदय पर जा लगती है और उसकी सोच को प्रभावित करती है। आपकी साहित्य साधना का सबसे बड़ा उदाहरण है कि आप दिन–रात लघुकथा पर नये–नये प्रयोग करते रहे हैं, जो अति सराहनीय एवं नवोदितों के मार्गदर्शन योग्य हैं। आपकी एक लघुकथा– 'अकेला कब तक लड़ेगा जटायु' पढ़ते ही

अन्य लघुकथाओं को भी पढ़ने की ललक बढ़ती चली गयी थी। कुछ लघुकथाएँ आज भी मेरे मस्तिष्क पटल पर अंकित हैं। जैसे– बिना नाल का घोड़ा, कन्धे पर बेताल, भरोसा, कुण्डली, रद्दीवाला, पीले पंखों वाली तितलियाँ, प्यासा पानी, सियाही इत्यादि। मैं डॉ. बलराम अग्रवाल जी को हृदय से बधाई एवं शुभकामनाएँ देती हूँ, अनवरत आपकी कलम यों ही चलती रहे और समाज को सार्थक नजरिया देती रहे। सादर।

■ द्वारा एस. के. टेक्सटाइल, 50/28, नौघड़ा, कानपुर–208001, उ.प्र./मो. 09793800751

सविता इन्द्र गुप्ता

लघुकथा में मानवीय संवेदनाओं का मसीहा डॉ. बलराम अग्रवाल

जब कोई अनगढ़–अल्हड़ बाला शैशवावस्था में किसी दूरदराज़ गाँव से महानगर पहली बार आती है तो मासूम शिशु की तरह फटी–फटी आँखों से चारों ओर विस्मय से खोयी–खोयी देखती है। सोचती है– ''हे राम! ये मैं कहाँ और किनके बीच आ गयी?'' उसके आस–पास के भले मानस भी उसके भविष्य के प्रति चिंतित हो जाते हैं और अनिश्चितता से घिरे हुए उसे सहारा देने का प्रयास करते हैं। सन 1971 में सच्चे अर्थों में अस्तित्व में पहली बार आई लघुकथा की मनोदशा भी कुछ–कुछ ऐसी ही थी। कहानी विधा के एक के बाद एक आंदोलनों को नकार दिए जाने के बाद, कहानीकारों का रुझान लघुता के प्रति बढ़ा और लघुकथा के अस्तित्व ने अँगड़ाई ली। साहित्य के जिन पुरोधाओं ने लघुकथा को उँगली पकड़कर चलना सिखाया। ...गिरने से बचाया, उसमें आत्मविश्वास और भविष्य के प्रति उत्साह जगाया, जिन्होंने लघुकथा विधा को साहित्य के विशाल प्रांगण में तुलसी के बिरवे–सा रोपा, उसे अपने श्रम–उद्यम तथा तन–मन–धन से सींचकर, साहित्य की एक स्वतंत्र विधा के रूप में स्थापित किया, उनमें सर्वाधिक समर्पित हस्ताक्षरों में जो नाम सर्वप्रथम ज़हन में उभरता है; वो है डॉ. बलराम अग्रवाल।

डॉ. बलराम अग्रवाल उदार, सदाशयी, समाज और देश की उन्नति के लिए सजग और चिंतित, सरल–सहज व्यक्तित्व के धनी हैं। ये सभी गुण उनकी लघुकथाओं में भी परिलक्षित होते हैं। अति साधारण नौकरियों के चलते उन्होंने जीवन में अभाव झेले और आम–आदमी की पीड़ा को निकटता से देखा और अनुभूत किया। इसीलिए उनकी लघुकथाओं के पात्र आम–आदमी के नजदीक खड़े दिखाई देते हैं। यही कारण है उनकी लिखी लघुकथाएँ विशेषतः निम्न मध्यम वर्ग के पाठकों को सघनता से प्रभावित करती हैं और उनसे सहज ही जुड़ाव स्थापित कर लेती हैं।

समय–समय पर जब भी देश में कहीं भी लघुकथा सम्मेलन हुए अथवा महागोष्ठियाँ हुईं, डॉ. बलराम अग्रवाल उसमें ससम्मान आमंत्रित किये जाते रहे हैं। वे अपने सभी काम छोड़कर लघुकथा के उत्थान हेतु सम्मेलनों तथा गोष्ठियों में अपनी उपस्थिति दर्ज कराते और अपने सारगर्भित उद्‌बोधन से सभी नए–पुराने लघुकथाकारों को लघुकथा सृजन के कुछ मुख्य तत्व बिंदु दे जाते, जिससे लघुकथा–लेखन को दिशा

मिलती। वे लघुकथा में शीर्षक, भाषा, शैली, प्रयोगधर्मिता, कथ्य सार्थकता, गुण–दोष, विषय चयन में कुशलता, नवीनता, शब्द सीमा, बोधगम्यता, लघुकथा में नेपथ्य और लाघव का महत्त्व, अभिव्यंजना, पात्रों की काया में प्रवेश और मनोविश्लेषण, यथार्थ के प्रति प्रतिबद्धता, नवीनतम बिम्ब–प्रतीक–संकेत अलंकार आदि–आदि के महत्त्व को सरलता व सहजता से समझाते। परिणामतः लघुकथाकार अपनी दृष्टि और कौशल में और अधिक संपन्न होकर घर लौटते और लघुकथा सृजन करते। ज़ाहिर है, जब कई सौ लघुकथाओं का लेखक, हिंदी साहित्य को लघुकथा के कितने ही सारगर्भित आलेखों की धरोहर सौंपता लेखक, पचासों पुस्तकों का सम्पादक, मलयालम और तेलुगु भाषाओं की लघुकथा संग्रहों का सम्पादक, अंग्रेजी और संस्कृत से ली कथाओं का अनुवादक तथा पुनर्लेखक, कई सौ लघुकथा का समीक्षक, कई पत्रिकाओं का निरंतर सम्पादन–कर्ता, बहुत से लघुकथा विशेषांकों का अतिथि सम्पादक, लघुकथा पर शोधोपाधि प्राप्त व्यक्ति का प्रभामंडल स्वतः ही ऐसा प्रभावशाली बन पड़ता है कि उसके मुँह से निकले शब्द सुधि श्रोताओं के मन–मस्तिष्क पर छप जाते हैं। लघुकथा सम्मेलन तथा गोष्ठियों में दिये गए उनके उद्‌बोधन–सन्देश सभी लघुकथाकारों को तीव्रता से सम्प्रेषित होते रहे हैं और इस प्रकार विधा की विकास यात्रा में परोक्ष–अपरोक्ष योगदान करते रहे हैं। लघुकथा गोष्ठियों में सभी की लघुकथाएँ सुनने के बाद प्रत्येक पर उनकी आशु समीक्षा, लघुकथाकारों को एक कार्यशाला जैसा लाभ देती रही हैं।

नवांकुरों को बड़ी उदारता से प्रोत्साहित तथा प्रेरित करते रहे हैं। वे कहते रहे हैं कि प्रकाशन के लिए उतावले ना हों। लघुकथाओं को बार–बार धैर्य से पढ़कर सुधारें और मित्रों और वरिष्ठों से भी सुधरवाएँ। स्वयं भी मानते हैं कि उन्होंने अपने कई मित्रों से समय–समय पर मशविरा लिया, जिससे मुकम्मल रचनाएँ विधा को मिलीं। यही कारण है कि उनका पहला लघुकथा संग्रह 'सरसों के फूल' 1994 में आया और दूसरा दस वर्षों के अंतराल पर 'जुबैदा' 2004 तथा तीसरा 'पीले पंखों वाली तितलियाँ' इसके ग्यारह वर्षों बाद 2015 में प्रकाशित हुआ। उनके अनुसार हड़बड़ी में लिखी और प्रकाशित की गयीं लघुकथाएँ, इस विधा का हित के स्थान पर अहित अधिक करती हैं। लघुकथा विधा की विकास यात्रा के प्रति इस तरह की सतत चिंता और लेखन और सम्पादन में निरंतरता, उनके इस विधा को अनुपम योगदान का साक्षी है।

आज इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का युग है। साहित्य में भी फेस–बुक, व्हाट्सएप, ब्लॉग बहुत लाभप्रद सिद्ध हुए हैं। डॉ. बलराम अग्रवाल ने मीडिया के माध्यम का भरपूर उपयोग किया है। वे फेसबुक पर सक्रिय रहकर लघुकथा पर चर्चा करते रहे हैं और अपने ब्लॉग 'जनगाथा' और 'लघुकथा साहित्य' द्वारा भी लघुकथा के क्षेत्र में गुणवत्ता और मात्रा के स्तर पर प्रशंसनीय कार्य करते रहे हैं। ये दोनों ब्लॉग, लघुकथा लेखकों और समीक्षकों की दृष्टि को पैनी और परिष्कृत करते हैं। 'जनगाथा', 'कथा यात्रा' एवं 'लघुकथा–वार्ता' के माध्यम से लघुकथा लेखकों और पाठकों को लाभान्वित और आनंदित कर उनकी साहित्यिक व मानसिक पिपासा को भी पोषित कर रहे हैं। ये ब्लॉग लघुकथा रसिकों को चिंतन व अनुभवों को अभिव्यक्ति देने का योगदान भी

करते हैं और लघुकथा की किसी पाठशाला से कमतर नहीं आंके जा सकते।

लघुकथा के विभिन्न पहलुओं पर डॉ. बलराम के सारगर्भित आलेख, लघुकथा साहित्य के दस्तावेज/धरोहर की तरह हैं, जो आने वाले समय में नव लघुकथाकारों का मार्गदर्शन कर इस विधा की विकास धारा को गत्यात्मक प्रवाह और दिशा देते रहेंगे। मधुदीप की 'पड़ाव और पड़ताल' की शृंखला के खंड–2 से अर्थात लगभग आरम्भ से ही जुड़े रहे हैं। इसके भिन्न खंडों में प्रकाशित उनके आलेख और समीक्षीय पड़ताल प्रासंगिक और उद्धरणीय है। उनकी लघुकथाओं पर आधारित खंड–17 में 66 लघुकथाओं में कितनी ही कालजयी लघुकथाएँ हैं, जिन्हें पढ़–गुनकर नवागत लघुकथाकार अपने रचना कौशल को धार दे सकते हैं। सभी के द्वारा लुटते जाने तथा तरह–तरह से छले जाने ने आम–आदमी और उसके शोषक को और भी असंवेदनशील बना दिया। क्या उच्च वर्ग और क्या मध्यम निम्न वर्ग, सबमें संवेदना का संकट गहराता चला गया; जिसे डॉ. बलराम ने लघुकथा आंदोलन के माध्यम से स्पंदित करने का बीड़ा उठाया। वे लघुकथा में संवेदना के तत्व की पैरवी करते रहे हैं और इस तत्व के महत्त्व को बताते रहे हैं। उनका यह योगदान लघुकथा विधा को सार्थक और सोद्देशीय बनाता है। उनकी लघुकथाओं में मानवीय संवेदनाएँ खूब उभरकर आती हैं और पाठक मन को आंदोलित कर उनके पत्थरदिल को पिघलाती हैं। 'और जैक मर गया' का गोखरू, 'अंगूठी' का जमूरा, 'गुलमोहर' का जतन बाबू, 'गो भोजनम् कथा' का इन्दर, 'जुबैदा' की जुबैदा, 'मन अनंत में' के बाबू जी, 'थोपा गया अभिशाप' की मम्मी, 'अकेले भी घुलते होंगे पिताजी' का बिज्जू, 'धागे' की बुआ, 'झिलंगा' की अम्मा जी संवेदना के भाव जगाते हैं और अपरोक्ष में एक बेहतर समाज की संरचना में योगदान करते हैं। 'बिना नाल का घोड़ा', 'पीले पंखों वाली तितलियाँ', 'जानवर', 'लगाव', 'संवेदनशीलता के सींग', 'रुका हुआ पंखा', 'कब तक लड़ेगा जटायु' आदि लघुकथाएँ मर्मस्पर्शी संवेदनाओं से लबालब हैं। ये बरबस ही पाठक की आँखें भिगो जाती हैं। आज के संवेदनहीन युग में डा. बलराम अग्रवाल का लघुकथा के माध्यम से समाज में संवेदना का अलख जगाना एक महती योगदान है। वे मानते हैं कि कुछ एक आवश्यक तत्वों को छोड़कर, लघुकथा गुरुओं तथा समीक्षकों में काफी मुद्दों पर मतभेद हैं, जो अंततः विधा की यात्रा और प्रयोगधर्मिता हेतु स्वस्थ संकेत भी माना जा सकता है।

लघुकथा विधा में समीक्षा एक प्रकार से हाशिये पर है। उच्च कोटि के लघुकथाकार होने के साथ–साथ डॉ. बलराम अग्रवाल एक मंजे हुए सक्षम और योग्य समीक्षक भी हैं। उन्होंने मधुदीप द्वारा सम्पादित 'लघुकथा के समीक्षा बिंदु' में अपने आलेख में समीक्षा के हर पहलू पर प्रकाश डाला है और बताया है कि एक अच्छे समीक्षक को किन बिंदुओं पर ध्यान देना चाहिए। डॉ. बलराम अग्रवाल हिंदी साहित्य की अन्य विधाओं जैसे बाल साहित्य, कहानी लेखन, कविता लेखन में काफी सक्रिय रहे हैं लेकिन लगता है हिंदी लघुकथा से उन्हें सदा से एक नैसर्गिक और स्वाभाविक लगाव रहा है। उनकी प्रथम लघुकथा 'लौकी की बेल' वर्ष 1972 में पत्रिका 'कात्यायनी' में प्रकाशित हुई। यह लौकी की बेल ऐसी पुष्पित और पल्लवित हुई कि पिछले पचास

वर्षों में उन्हें लघुकथा विधा के सर्वोच्च शिखर पर विराजित कर गयी।... लघुकथा की विकास यात्रा में उनका योगदान अप्रतिम, अतुल्य, अमिट, अद्वितीय एवं अविस्मरणीय है।... कर्तव्यबोध, सौंदर्य बोध, आत्म–उद्वेलन, आत्ममंथन कराने के साथ–साथ उनकी लघुकथाओं की एक विशेषता यह भी है कि वे पाठकों के जीवन में साथ–साथ चलती हैं और किन्हीं कठिन पलों में धीमे से कंधे पर हाथ रखकर उनका मार्गदर्शन करा जाती हैं।...

■ बी–31, जीएफ, साउथएन्ड फ्लोर्स, सेक्टर–49, गुरुग्राम–122018 / मो. 08800101769

डा. लता अग्रवाल 'तुलजा'

सबको प्रोत्साहन देना प्रमुख गुण

बलराम अग्रवाल सर से मेरा परिचय 2017 में अपने संग्रह 'मूल्यहीनता का संत्रास' के प्रकाशन के दौरान हुआ था। लघुकथा के क्षेत्र में कार्य कर रहे अपने अग्रजों को जब मैंने जानना चाहा उनमें स्व. डा. शकुंतला किरण जी के साथ कुछ नाम और भी जानकारी में आए। उनमें बलराम अग्रवाल सर भी एक हैं। यद्यपि उनकी कुछ ही लघुकथाओं से परिचित हो पाई हूँ– कब तक लड़ेगा जटायु, पीले पंखों वाली तितलियाँ आदि। खलील जिब्रान की लघुकथाओं का हिंदी में अनुवाद आपका लघुकथा को प्रदेय है। लघुकथा को लेकर साक्षात्कार की मेरी कड़ियों का एक हिस्सा आप भी रहे हैं। अपने पूछे प्रश्नों के दौरान जब मुझे आपका मेल मिला तो मैं अचम्भित रह गई कि ''लता जी लघुकथा में पिछले तीस वर्षों से हूँ, किन्तु लगता है लघुकथा को जितना मैंने नहीं जाना उतना आपने समझा।'' किसी अग्रज द्वारा ऐसे प्रोत्साहन भरे शब्द मिलना सचमुच सुखद है। लघुकथा के विकास हेतु आपकी कई योजनाएँ प्राकारांतर में चल रही हैं। केंद्र शासन द्वारा लघुकथा के संरक्षण और संवर्धन हेतु आपका चुना जाना आपके कार्यों को रेखांकित करता है। यह एक बड़ी उपलब्धि है। हाल ही में आपके द्वारा कई लघुकथाकारों की लघु पुस्तिकाएँ प्रकाशित की जा रही हैं। आशा करती हूँ आगे भी लघुकथा के क्षेत्र में आपकी वैचारिक भूमिका और निष्पक्ष सक्रियता बनी रहेगी।...

■ 30, सीनियर एम.आई.जी., अप्सरा काम्प्लेक्स, इन्द्रपुरी, भेल क्षेत्र, भोपाल–462021,म.प्र.

डॉ. उपमा शर्मा

बलराम अग्रवाल : पथ प्रदर्शक लघुकथाकार

लघुकथा हिन्दी साहित्य की नवीनतम विधा है। अपने लघु आकार में ही पर्याप्त प्रभाव छोड़ने के कारण यह समकालीन पाठकों के ज्यादा नजदीक है। अपने विधागत सरोकार के कारण यह एक पूर्ण विधा के रूप में साहित्य जगत में समादृत हो रही है। लघुकथा लेखन में जिन कुछेक लोगों ने इस रचना विधा को सही मार्ग दिखाया उसमें श्री बलराम अग्रवाल एक महत्वपूर्ण

नाम है। उनकी लघुकथाओं में संवेदनाओं की अनुभूति की तीव्र ज्वाला विभिन्न चित्रों–बिम्बों के माध्यम से फूटती हैं। वो अपनी बात को प्रतीकों, बिम्ब और रूपकों में कहना पसन्द करते हैं। उनकी लघुकथाओं में वर्तमान जीवन की त्रासदियाँ, विसंगतियाँ, विद्रूपताएँ, बेकारी, मानवीय संवेदनहीनता, राजनीतिक छलावा आदि विषयों को चुनकर समकालीन चेतना को यथार्थ का स्वर प्रदान किया है। 'गुलमोहर', 'अकेला कब तक लड़ेगा जटायु', 'तीसरा पासा', 'और जैक मर गया', 'गो भोजनम् कथा' आदि लघुकथाएँ सृजनशीलता की सार्थक अभिव्यक्ति हैं।

बलराम अग्रवाल लघुकथा में कहानीपन के हिमायती हैं, इसीलिए इनके चित्रण में काव्यात्मकता सहज ही परिलक्षित होती है। बलराम अग्रवाल ने लघुकथा को अपने आलेखों के माध्यम से भी एक निश्चित रूप प्रदान किया है। उनके लिखे अनेकों आलेखों में लघुकथा के विभिन्न बिन्दुओं पर विस्तार से लिखा गया है, ऐसे ही एक बिंदु– लघुकथा में नेपथ्य पर वो समझाते हैं, ''वस्तुतः नेपथ्य वह वातायन है जिसे लेखक अपनी रचना में तैयार करता है और पाठक को विवश करता है कि वह उसमें झाँके तथा रचना के भीतर के व्यापक संसार को जाने। कई बार मुख्य–कथा के एक या अनेक पात्र भी लघुकथा के नेपथ्य में रहते हैं। लघुकथा में उनका सिर्फ आभास मिलता है, वे स्वयं उसमें साकार नहीं होते। दरअसल, घटनाओं और स्थितियों का यह प्रस्फुटन लघुकथा के नेपथ्य में उतरे उसके पाठक के मनोमस्तिष्क में होने वाली निरन्तर प्रक्रिया है। अगर कोई रचना इस प्रक्रिया को जन्म देने में अक्षम है तो निःसंदेह वह अच्छी रचना नहीं हो सकती। अपने इसी गुण के कारण लघुकथा गंभीर प्रकृति के पाठक को जिज्ञासु बनाए रखने में सफल रह सकी है। इसी बात को मैं यों भी कहना चाहूँगा कि अपने समापन के साथ ही जो लघुकथा पाठक के भीतर विचार की एक शृंखला जाग्रत कर दे, वह एक सफल लघुकथा है।

लघुकथा में नेपथ्य की उपस्थिति को जानने के बाद यह आशंका निर्मूल सिद्ध हो जाती है कि कोई कथाकार लघुकथा लिखता है, क्योंकि वह कथा को कहानी जितना विस्तार दे पाने में अक्षम है। सही बात यह है कि लघुकथाकार कथा के मात्र संदर्भित बिंदुओं पर कलम चलाता है और शेष को नेपथ्य में बनाए रखता है।''

लघुकथा के संदर्भ में जहाँ आज भी यह विधा अपने स्वरूप को लेकर विवादों से मुक्त नहीं हो पाई है, बलराम अग्रवाल ने निरन्तर सक्रियता और विभिन्न आलेखों के माध्यम से भावी पीढ़ी के लिए पथ प्रशस्त ही किया है।

■ बी–1/248, यमुना विहार, दिल्ली–110053/मो. 08826270597

चित्रा राणा

बलराम अग्रवाल : बड़े कालखण्ड का प्रतिनिधित्व

यूँ तो बलराम अग्रवाल एक विधा से अधिक में सक्रिय हैं, लेकिन उन्हें लघुकथा लेखक व लघुकथा क्षेत्र का बड़ा व्यक्ति

ही माना जाना चाहिए। वे कई अवसर पर ऐसा कहते पाये गए हैं कि जिस विधा में निरंतरता बनी रहे वह व्यक्ति उस विधा का लेखक माना जा सकता है।

...बलराम अग्रवाल के लघुकथा की विकास यात्रा में योगदान को एक पृष्ठ में लिखने का प्रयास करना ऐसा ही है, जैसे भारतवर्ष के राजनैतिक नक्शे को देखना।... मेरे द्वारा यहाँ बस एक प्रयास किया गया है।

सभी अपनी दृष्टि अनुसार किसी कार्य का महत्व और भूमिका का स्तर तय करते हैं। साहित्य में ये स्वेच्छा से स्वीकार की गईं वो चुनौतियाँ होती हैं जिनका निर्वाचन करते हुए तय नहीं किया जा सकता कि इन्हें समय के साथ कोई पहचान मिलेगी भी या नहीं। फिर भी एक लेखक को उसके लेखन की प्रचुरता और समय की घटनाओं की व्यापकता की परख कितनी है, लिखने से पहचाना जाना चाहिए। यदि वह केवल रचनात्मक जैसे लघुकथा, कविता कहानी, व्यंग्य आदि ही लिखता है, तो उसकी रचनाएँ ही कसौटी हों। जिसमें बलराम अग्रवाल की रचनाएँ, संग्रह, आलेख इस कार्य मे सफल रहे हैं। चाहे वे उनके तत्कालीन कार्य हों या पिछले दशकों के।

समय और लघुकथा : मेरे अनुसार योगदान के आयाम से अगर देखें तो 'समय' को लेकर वे आधुनिक लघुकथा की शुरुआत से लेकर आने वाले कई वर्षों के लिए सामग्री दे चुके हैं। लघुकथा क्षेत्र के समय का लेखा–जोखा तैयार करने और उसे इस तरह संजोने में सबसे ज्यादा सफल हैं। उनके द्वारा किया गया कार्य आने वाले कई वर्षों तक, लघुकथा में आने वाली पीढ़ियों के लिए आसानी से उपलब्ध रहे, इसका भी ध्यान उन्होंने अपने कार्य में किया है। लघुकथा क्षेत्र में घटित लगभग सभी मुख्य घटनाओं, संग्रहों, संकलनों का लेखा जोखा रखना, विश्व लघुकथाकार कोश बनाना, ब्लॉग पर जगह देते जाना, इस संकल्पना व आधार को पुष्ट करता है कि वे एक बहुत बड़े कालखण्ड के लिए कार्य करते आए हैं व कर रहे हैं। लघुकथा की लोकप्रियता के कोण से देखें, संघर्ष के उस दौर में जब लघुकथा को मुख्य धारा में लाने के प्रयास चल रहे थे, जब लघुकथा के मानक तय करना ही मुश्किल था, उस समय से लघुकथा को अपनी विधा के रूप चुनाव करना मुश्किल निर्णय रहा होगा। विधा के संघर्ष के साथ लघुकथा को और स्वयं को स्थापित करना और भी मुश्किल कठिन निर्णय उन्होंने लिया। उस समय में लघुकथा को लेकर हो रहे आंदोलनों में भी वे सक्रिय रहे। जिन आंदोलनों का फल आज हम सभी जानते हैं।

लघुकथा में आलोचना को मान व यथास्थान दिलाने का प्रयास भी बलराम अग्रवाल की ओर से बड़े स्तर पर किया गया और किया जा रहा है। हालांकि वे इसमें नरमपंथी कहे जा सकते हैं, यहाँ इस शब्द का अर्थ सीमित क्षेत्र के चुनाव या स्वरुप से नहीं है। यहाँ नरम बर्ताव व व्यवहार से है। वे अक्सर अन्यों की तरह कड़ा रुख नहीं अपनाते, ना ही कटु शब्दों का प्रयोग करते हैं। वे लघुकथा में हुए अनेकों प्रयोग का स्वागत करते हैं। किसी फॉर्मूले पर हुए लेखन से अधिक वैचारिकी को महत्व देते हैं। लोककथा फिर लघु व्यंग्य से लेकर हास्य–व्यंग्य सभी को लघुकथा कहने वाले समय से होते हुए, आधुनिक लघुकथा का प्रारूप बनने और उसके अपनाए जाने तक चले संघर्ष को बलराम जी ने न सिर्फ जिया है बल्कि उसकी दिशा भी तय की है।...

लघुकथाओं में विषयों का वृहद पटल : इस सदी के पहले दशक के साथ ही लघुकथा

लेखन की लोकप्रियता जनमानस में प्रचारित हुई। लेकिन इसके साथ ही विषय दोहराव को रोका जाना असम्भव हो गया। जिसके लिए समय–समय पर अपनी फेसबुक टाइमलाइन, लघुकथा साहित्य पेज आदि पर समकालीन विषयों पर चर्चा व सम्बंधित लघुकथा को पोस्ट कर लघुकथा लेखकों का ध्यान उन विषयों पर खींचते हैं। लघुकथा के वर्तमान चलन को देखते हुए ये एक महत्वपूर्ण भूमिका है।

लघुकथा में भाषा सौंदर्यीकरण : यहाँ कई ब्लॉग्स और वक्तव्यों का जिक्र किया जा सकता है, जहाँ बलराम जी ने लघुकथा में भाषा प्रयोग में मुहावरों, लोकोक्तियों का प्रयोग, सुंदर भाषा व नए मुहावरे गढ़ने को लेकर जोर दिया है। सपाट लेखन से वे बहुत खुश नहीं दिखते। उनसे प्रेरित होकर लिखने वाला लेखक निश्चित ही भाषा के प्रति सजग होगा।

लघुकथा में विदेशी लघुकथाओं को जोड़ना : समय, लोकप्रियता, भाषा सौंदर्यीकरण आदि से अलग लघुकथा के क्षेत्रफल में भी बलराम जी का बड़ा योगदान है, विदेशों से ले लघुकथाएँ अनुवादित की हैं व हिंदी लघुकथा में उन्हें स्थान दिया है।...

गैर हिन्दी भाषी राज्य की भाषाओं में लघुकथा : बलराम जी क्षेत्रफल के बड़े खण्ड, देशों में यदि लघुकथा को तलाशने पहुँचें हैं तो वहीं हिन्दी भाषी राज्यों से आगे ले जाकर भारत के अन्य राज्यों में भी बलराम जी की न सिर्फ लघुकथा पहुँची बल्कि उन्हें अन्य भाषाओं में हुए लघुकथा कार्यों के लिए सम्मानित भी किया गया।

लघुकथा के आधुनिक रूप और व्यापकता पर आज का लेखक/प्रकाशक/पाठक चकित हो सकता है लेकिन इसमें बलराम अग्रवाल व उनके अन्य समकालीन लेखकों की महत्वाकांक्षा, उनका संघर्ष और योगदान महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

■ भारत : 130, सेक्टर–12, प्रताप विहार, संतोष मेडीकल कॉलेज, गाजियाबाद, उ.प्र./मो. 09582563356@ ₩l - %2254857650@bZs %ana.chitra@gmail.com

ज्योत्स्ना कपिल

लघुकथा के चमचमाते नक्षत्र बलराम अग्रवाल

वरिष्ठ पीढ़ी के डॉ. बलराम अग्रवाल जी के साहित्यिक सरोकार एवं उनके लघुकथा में योगदान की बात जब भी उठती है, उन्हें बहुत सम्मान के साथ याद किया है एवं विशिष्ट स्थान प्रदान किया जाता है। वह उन चुनिंदा कथाकारों में से हैं जो साहित्य की कई अन्य विधाओं के साथ, लघुकथा के लिए अनवरत साधनारत हैं। यूँ तो आपने कहानी, उपन्यास, कविता, व्यंग्य, लेख, सभी पर अपनी कलम चलाई है और खूब चलाई है। परन्तु लघुकथा के लिए जितना कार्य किया है, उसे देखते हुए ही, आपको अग्रणी श्रेणी के कुछ अति महत्वपूर्ण लघुकथाकारों में रखा गया है। उनकी लघुकथाओं की मारक क्षमता, शोधात्मक आलेखों का प्रकाशन एवं विस्तृत चर्चा हुई है। स्वयं के कई संग्रहों के प्रकाशन के साथ, वह कितने ही विशेषांकों एवं संकलनों का सम्पादन कर चुके हैं। बलराम जी की सर्जनात्मकता एवं सक्रियता कई बार चकित कर जाती है। वह

लघुकथा के क्षेत्र में चुपचाप एक के बाद एक कीर्तिमान स्थापित करते जा रहे हैं। उन्हें यदि लघुकथा का विद्यालय ही कहा जाए तो कुछ भी अनुचित न होगा। नई पीढ़ी के कितने ही कथाकारों को, उन्होंने न सिर्फ चिन्हित किया बल्कि आगे बढ़ाने के लिए पर्याप्त सराहना एवं अवसर भी प्रदान किये। उनकी अभिव्यक्ति तीक्ष्ण एवं अद्‌भुत है। जब हम उन्हें पढ़ते हैं तो उनकी कल्पनाशीलता एवं विशद ज्ञान से चमत्कृत रह जाते हैं। लघुकथा को साहित्य की मुख्यधारा में लाने, उसे उसका स्थान व उचित सम्मान दिलाने के संघर्ष में वह सतत प्रयत्नशील रहे हैं। लघुकथा रूपी खजाने के कुछ बहुमूल्य रत्नों सर्वश्री सतीश दुबे, भगीरथ परिहार, सुकेश साहनी, रामेश्वर कंबोज हिमांशु, मधुदीप गुप्ता, डॉ. कमल चोपड़ा, सतीश राज पुष्करणा, शकुंतला किरण जैसी शख्शियतों की लंबी सूची बलराम अग्रवाल जी के नाम के बिना अधूरी है। वह लघुकथा आकाश के एक चमचमाते नक्षत्र हैं।

■ 18– ए, विक्रमादित्य पुरी, स्टेट बैंक कॉलोनी, बरेली–243005, उ.प्र./मो. 09412291372

ऋता शेखर 'मधु'

बलराम अग्रवाल जी के बारे में कुछ उद्‌गार

लघुकथा के क्षेत्र में आदरणीय बलराम अग्रवाल जी का सम्माननीय स्थान है। लघुकथा विधा के लिए समर्पित उनका समूह 'लघुकथा विश्वकोष' है, जिसमें नवोदित से लेकर वरिष्ठ लघुकथाकारों की लघुकथाओं के पुस्तक संग्रह शामिल हैं। उनके कार्यों से अलग हटकर मैं अपने अनुभव लिख रही हूँ। मैं लघुकथा के क्षेत्र में पहले सिर्फ सबको पढ़ा करती थी और सीखने का प्रयास करती थी। 2019 में कोरोना काल में एक ऑनलाइन गोष्ठी हुई थी, जिसे प्रवासी साहित्यकारों द्वारा आयोजित किया गया था। लगभग दस लघुकथाकार मित्रों ने भाग लिया और समीक्षा बलराम अग्रवाल सर को करनी थी। उन्होंने हर एक लघुकथा ध्यान से सुनी और त्वरित सटीक समीक्षा करके सभी का उत्साह बढ़ाया। एक प्रतिभागी मैं भी थी, तो हमारी लघुकथा पर भी समीक्षा की गयी जो बहुत उत्साहवर्धक थी। दूसरी बार जब अविराम साहित्यिकी के स्वर्ण जयंती समारोह में वे अतिथि संपादक बने तब हमने भी लघुकथाएँ भेजी थीं, मई और सितम्बर के अंकों में उनके द्वारा तीन लघुकथाएँ चयनित हुईं। 2022 में जब मैंने अपना लघुकथा–संग्रह 'धूप के गुलमोहर' प्रकाशित करवाया तो बलराम सर ने विश्व लघुकथा समूह पर तथा अपने ब्लॉग पर पुस्तक को स्थान दिया। यह हमारे लिये बहुत उत्साहवर्धक है।

बलराम सर की कृतियों में कहानियाँ और बाल साहित्य के अलावा बहुतायत में खलील जिब्रान की अनूदित लघुकथाएँ हैं जो नवोदितों के लिए उपयोगी हैं। हिन्दी समय डॉट कॉम पर अरबी लेखक खलील जिब्रान की जीवनी में जिब्रान के लेखन, कला एवं उनके प्रेम से संबंधित हर पहलू को विस्तार से लिखने का श्रमसाध्य कार्य बलराम अग्रवाल जी ने किया है। लघुकथा के क्षेत्र में उनका स्थान सदा सर्वदा आगे बढ़ता रहे, हार्दिक शुभकामनाएँ।

■ डी–1228, ब्रिगेड गोल्डन ट्रैंगल, कटमनल्लूर गेट, बंगलुरू–560049, कर्नाटक

श्रुत कीर्ति अग्रवाल

डॉ. बलराम अग्रवाल : प्रेरक व्यक्तित्व

आज, जिसे भी, नन्हीं सी लघुकथा के वृहद कार्यक्षेत्र का भान है, वह श्री बलराम अग्रवाल जी से अपरिचित रह ही नहीं सकता। आपने प्राचीन साहित्य में से लघुकथा के अस्तित्व को खोजा, पढ़ा, मनन किया और फिर अनेकानेक विमर्शों, आलेखों और प्रयोगों के माध्यम से आधुनिक लघुकथा को आकार दिया है। और अब, गहन अध्ययन से उपजी आपकी कृतियों को एक पूरी पीढ़ी पढ़, गुन और सीख रही है। जब 'देश इन दिनों' में आप कहते हैं ''समय हत्या–बलात्कार जैसी घटनाओं से नहीं, सोच के तब्दील होने, गिर जाने से भयावह हुआ है'' तो पाठक जरा–सा थमकर, अनेक तहों में दबे, समस्या के मूल को खोजने चल पड़ता है।

अपने सिर पर आपका वरद् हस्त महसूस करना, हम जैसे नये लेखकों के उत्साह को बहुत बढ़ा देता है, कुछ उम्दा काम करने और बहुत कुछ सीखने के लिए प्रेरित करता है।

■ द्वारा अग्रवाल अनिल एण्ड एसोसिएट्स अचल, जस्टिस नारायण पथ, नागेश्वर कालोनी, बोरिंग रोड, पटना–1, बिहार/मो. 09334111164

वीरेन्दर वीर मेहता

बलराम अग्रवाल : एक पूर्ण शिक्षण संस्थान

...भले ही लघुकथा को कुछ मायनो में आधुनिक विधा माना गया है लेकिन वस्तुतः इस विधा की मूल जड़े भारतीय पौराणिक इतिहास से जुड़ी होना भी विधा के कई विद्वानों ने माना है। बहरहाल यदि बात लघुकथा के आधुनिक काल की बात करें, तो पिछले पाँच दशको में इस विधा का विकास त्वरित गति से हुआ है। इसमें अनगिनत साहित्यकारों का समर्पण और योगदान भी शामिल है। ऐसे ही बहुत से विद्वानों के बीच एक नाम निःसंकोच बलराम अग्रवाल का भी लिया जा सकता है।

बलराम अग्रवाल लघुकथा साहित्य से जुड़े ऐसे एकमात्र रचनाकार हैं जिन्होंने साहित्य में गद्य और पद्य, दोनों ही विधाओं में न केवल सफ़ल लेखन किया है बल्कि साहित्य में नए प्रयोगों के साथ साहित्य में कई नए मानदंडों को स्थापित करने का प्रयास किया है। अपने प्रारंभिक दौर में मूलतः एक कहानीकार होने के बावजूद वे लघुकथा साहित्य के बीच एक चलते–फिरते इनसाईक्लोपीडिया के रूप में अपनी पहचान रखते हैं। बतौर लघुकथा लेखक बलराम जी अपनी रचनाओं में भिन्न विषयों के साथ सहज ही नए प्रयोग करने के पक्षधर रहे हैं। इनकी लघुकथाओं के कथ्य, शीर्षक एवं भाषा सरल, सुगम होने के साथ भाषाई स्तर पर श्रेष्ठ और आकर्षक होती है। अपनी रचना से यथासंभव बाहर रहकर अपने संदेश को पाठक तक पहुँचाना इनके लेखन की एक विशेष शैली भी रही है।

बलराम जी लघुकथा लेखन के साथ विधा पर विचार–विमर्श और विधा को प्रोत्साहन

शेष पृष्ठ 68 पर...

डॉ. बलराम अग्रवाल

डॉ. बलराम अग्रवाल से शोधार्थी चन्द्रेश साहू की लघुकथा विषयक वार्ता

{19 फरवरी 2020 को डॉ. बलराम अग्रवाल जी के रायुपर (छत्तीसगढ़) प्रवास के दौरान शोधार्थी कु. चन्द्रेश साहू द्वारा उनका एक विस्तृत साक्षात्कार लिया गया था। यहाँ प्रस्तुत हैं उसी साक्षात्कार के प्रमुख अंश।}

कु. चन्द्रेश साहू

चन्द्रेश साहू : आपके लघुकथा लेखन की शुरूआत कैसे हुई एवं आपके प्रेरणा स्रोत, जिन्होंने आपको लघुकथा लेखन की ओर प्रेरित किया, कौन रहे?

बलराम अग्रवाल : मेरे लघुकथा लेखन की शुरुआत जून 1972 में मेरी पहली लघुकथा 'लौकी की बेल' के प्रकाशन के साथ हुई। यह अश्विनी कुमार द्विवेदी जी के संपादन में लखनऊ से प्रकाशित होने वाली द्विमासिक कथा–पत्रिका 'कात्यायनी' में छपी थी। साहित्य में मेरा रुझान, जब मैं सातवीं कक्षा में था, तभी से हो गया था। उन दिनों कबीर के दोहे जैसी छोटी–छोटी काव्यात्मक तुकबंदियाँ लिखा करता था। 1969 से ही छोटी–छोटी कविताएँ, दोहे, लेख आदि प्रकाशित होने लगे थे। पहला प्रकाशित लेख महात्मा गांधी की आत्मशक्ति पर केंद्रित था जो उनकी जन्मशती के अवसर पर लिखा गया था। मेरे घर का वातावरण साहित्यिक नहीं था। पहली बार 1967 में बिजली के बल्ब ने हमारा घर देखा। पिताजी रोज सुबह–शाम तीन–तीन घंटे रामचरितमानस और भगवद्गीता का पाठ किया करते थे। दादाजी को आल्हा, स्वांग आदि किताबें पढ़ने का भी शौक था। किस्सा तोता–मैना, किस्सा सरवर नीर आदि लोकगाथाओं की कितनी ही किताबें उनके खजाने में थीं। मेरे छोटे चाचाजी पत्रिकाएँ पढ़ते थे और उनकी अच्छी रचनाओं और वाक्यों को डायरी में नोट करते थे। उनके कारण ही मुझे धर्मयुग, सरिता, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, मुक्ता, नवनीत, पांचजन्य, राष्ट्रधर्म जैसी स्तरीय पत्रिकाओं को पढ़ने का सौभाग्य बचपन से ही मिला। बात रही लघुकथा लेखन की, तो बात उन दिनों की है, जब मैं गाजियाबाद से बुलन्दशहर जाने के लिए बस का इंतजार कर रहा था। बस स्टैंड पर लगे एकमात्र बुक स्टाल पर किताबें देखने लगा। वहाँ 'कात्यायनी' नामक एक पत्रिका मिली। उसमें छोटी–छोटी कथाएँ लघुकथा शीर्षक से छपीं थी। उससे पहले मैंने कहीं भी लघुकथा का नाम नहीं सुना था। पैंसठ पैसे में वह पत्रिका खरीद ली। उसमें मुझे लघुकथाएँ बहुत अच्छी लगीं। लघुकथा तो मैं भी लिख सकता हूँ। ऐसी छोटी कथाएँ तो हमने हितोपदेश, पंचतंत्र में पढ़ी थीं। कहने का तात्पर्य कि कहानी के संस्कार तो हमारे अंदर थे पर समकालीन कथा–साहित्य के अंतर्गत लघुकथा विधा में लिखा जा रहा है यह नहीं पता था। पत्रिका को पढ़कर मुझे लगा कि कहानी को इस आकार में लिखा जा सकता है, पर लिखना आसान नहीं था। इसके बाद प्रकाशित हुई मेरी पहली लघुकथा

'लौकी की बेल' दृष्टांत–शैली की लघुकथा है। मैं खलील जिब्रान की भाववादी कथ्यों और भारतीय पुरातन साहित्य के दृष्टांतवादी कथ्यों से बेहद प्रभावित था। उन दिनों लघुकथा व्यंग्य और पौराणिक पात्रों तथा घटनाओं की पैरोडी रचना के रूप में लिखी जा रही थी। मैं जमीन से जुड़ा, ग्रामीण संस्कारों वाला व्यक्ति हूँ और इन्हीं भावों को मैंने 'लौकी की बेल' में व्यक्त किया है। 1972 से लेकर अब तक मैं लघुकथा विधा को समर्पित हूँ।

चन्द्रेश साहू : लघुकथा के उद्‌भव लेकर बहुत भ्रम है कि इसका मूल प्राचीन कथाओं से है या वर्तमान आधुनिक जीवन की विसंगतियों से उद्‌भूत है?

बलराम अग्रवाल : सन् 1970 ई. से पूर्व की लघ्वाकारीय कथा रचनाएँ 'लघुकथा' हैं। उसके बाद सन् 1971 से लिखी जा रही लघ्वाकारीय कथा–रचनाएँ 'समकालीन लघुकथा' की श्रेणी में आती हैं। 1970 के पूर्व की लघुकथाएँ लघ्वाकारीय के साथ दृष्टांत परंपरा, भाव परंपरा, गंभीर कथ्य एवं व्यंग्यात्मक पैरोडी परंपरा की लघुकथा हैं। लघुकथा में धीरे–धीरे परिवर्तन 1961 के आसपास दिखाई देना प्रारंभ हुआ, जो 1971 में बहुलता के साथ प्रकट हुआ। जिस लघुआकारीय कथा रचना का मूल हितोपदेश, पंचतंत्र, जातक कथाएँ या अन्य पुरातन कथा–स्रोत बताए जाते हैं, वह 'लघुकथा' है और जिसका उद्‌भव वर्तमान जीवन की विसंगतियों से बताया जा रहा है, वह पूर्व–कथित उसी लघुकथा का विकसित स्वरूप 'समकालीन लघुकथा' है, जिसका प्रादुर्भाव लगभग सभी लघुकथा आलोचक सन् 1971 से स्वीकार करते हैं।

चन्द्रेश साहू : बोधकथा, नीतिकथा, जातक कथा या कहानी से लघुकथा किस तरह भिन्न है? कृपया स्पष्ट करें।

बलराम अग्रवाल : पूर्वकालीन बोधकथा या उपदेश कथा लघुकथा से अधिक भिन्न नहीं है, किन्तु किसी विशेष भाव, जिज्ञासा–बोध को संप्रेषित करने के उद्देश्य से कथा अवयवों से युक्त और लघुआकारीय रचना होने के बावजूद लघुकथा नहीं माना जा सकता। समकालीन लघुकथा मनुष्य के जीवन से जुड़ी समसामयिक उत्थानशील अथवा पतनशील परिस्थितियों, सुखद अथवा दुखद घटनाओं के कथापरक चित्रण की विधा है। ऐसा भी नहीं है कि इसमें नीति, आदर्श, बोधपरकता का समावेश न हो, लेकिन इन सबकी स्थापना रचना का उद्देश्य नहीं होता... ये गौण रहती हैं... कतिपय बहुत भिन्न नहीं हैं। यदि भिन्न होती तो आज की लघुकथा को हम 'आधुनिक' या 'समकालीन लघुकथा' न कह रहे होते। लघुकथा और कहानी में संवेदना की समानता हो सकती है, आकार में भी समानता हो सकती है, पर यहाँ अंतर है भाषा और शिल्प का; कथ्य की प्रकृति और कथानक को अधिकतम सम्प्रेषणीय व अनुशासित रखने का। कहानी का विस्तार स्थूलतः फैलाव लिए होता है, जबकि लघुकथा का विस्तार सूक्ष्मता की ओर अग्रसरित रहता है।

चन्द्रेश साहू : आप हिंदी की पहली लघुकथा किसे मानते हैं?

बलराम अग्रवाल : मेरे अनुसार भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की पुस्तक 'परिहासिनी' (1876–80) में प्रकाशित उनकी रचना 'अंगहीन धनी' और 'अद्‌भुत संवाद' हिंदी की पहली लघुकथाएँ है।

चन्द्रेश साहू : कहानी और लघुकथा के तत्वों में क्या अंतर है और है तो कौन सा?

बलराम अग्रवाल : लघुकथा और कहानी के बीच मूलभूत अंतर संप्रेषणीय वस्तु का

चयन और उसकी प्रस्तुति पर निर्भर होता है। कथा–रचनाएँ छोटे आकार की होते हुए भी कहानी ही होती हैं। आकार में छोटी होने मात्र से किसी कथा–रचना को लघुकथा मान लेना न्यायसंगत नहीं है। लघुकथा संवेदनात्मक क्षणों को पाठक के समक्ष प्रस्तुत करने वाली कथा रचना है। कहानी सामाजिक विसंगतियों मानवीय क्रियाकलापों व मानसिक व्यापारों के कारकों और कारणों की पड़ताल कर पाठक तक पहुँचाती है। जबकि लघुकथा पाठक के सामने सीधे प्रस्तुत हो कथा–संप्रेषण में वांछनीय कारणों व कारकों का आभास कराती हुई कथा–विस्तार को नेपथ्य में बनाए भी रखती है। 'लाघव' भाषा को अनुशासित करने वाला एक निबंधन विशेष है। वहीं कथानक से संबद्ध सभी घटनाएँ पाठक की रुचि, अध्ययन और कल्पनाशीलता के अनुरूप उसे कथा के 'नेपथ्य' में उतरने को प्रेरित करती हैं। कहानी के समापन–बिंदु पर आकर 'नेपथ्य' स्पष्टतः पाठक के समक्ष भी उपस्थित हो सकता है, परंतु लघुकथा में 'नेपथ्य' कहानी की तुलना में कहीं अधिक विस्तृत और गहन होता है। संक्षेप में समझ लीजिए कि समय, वस्तु और चरित्र की एकान्विति कथा–रचना को 'लघुकथा' बनाते हैं, यदि इनमें से कोई एक भी एकान्विति से विरत हुआ कि रचना कहानी की ओर मुड़ जाएगी।

चन्द्रेश साहू : क्या आप लघुकथा को स्वतंत्र विधा मानते हैं या कहानी में ही इसका समावेश करते हैं?

बलराम अग्रवाल : कथा–साहित्य के अंतर्गत लघुकथा अलग विधा है, जैसे कथा–साहित्य में उपन्यास एक विधा है, कहानी भी एक विधा है और अब लघुकथा भी एक विधा है। डॉ. गोपाल राय ने हिन्दी कहानी का इतिहास चार खंडों में लिखा है। उन्होंने दूसरे खंड में कथा–साहित्य के नौ पद स्वीकार किए हैं, जैसे उपन्यास में वृहद उपन्यास, उपन्यास और लघु उपन्यास, कहानी में लंबी कहानी, कहानी और छोटी कहानी। उन्होंने लघुकथा को विधा के रूप में स्वीकारा है। हमारे यहाँ कहानी–साहित्य प्रचलन में है, जो यूरोप से आया, जिसे पहले बांग्ला ने स्वीकार किया फिर हिंदी ने। पहले अंग्रेजी उपन्यास 1000 पृष्ठों में या उससे अधिक होते थे, जिसे 'स्टोरी' के नाम से जानते हैं। नए कथाकार आए तो उन्होंने कथा के अतिरिक्त बहुत बातें उन उपन्यासों से हटा दीं, जिससे पठनीयता बढ़ गई। इन नई रचनाओं को 'शार्ट स्टोरी' कहा गया। यह शार्ट स्टोरी भी 100–150 पृष्ठ तक होती थी। कम–से–कम 70 पृष्ठ की तो होती ही थी। शार्ट स्टोरी के लिए हिंदी में 'कहानी' शब्द का चलन हुआ, लेकिन लघुकथा 'शार्ट स्टोरी' नहीं है। यह एक अलग विधा है। न यह कहानी है न लघु कहानी। जैसे लंबी कहानी उपन्यास नहीं होती है, क्योंकि उपन्यास की शर्तें अलग हैं, अवयव अलग हैं। उपन्यास पूरे जीवन की कथा है, व्यक्ति और घटना के हर आयाम को पकड़ना और अभिव्यक्त करना उपन्यास है। उसी कथा में से कई घटनाएँ या बातें हैं, जिन्हें व्यक्त न करके संकेतात्मक वक्तव्य से नेपथ्य में ले जाएँ और विस्तार में न जाकर उल्लेख भर करके आकार छोटा कर दिया गया तो उसे कहानी या शार्ट स्टोरी कहते हैं। 1960–80 की हिंदी कहानियाँ पढ़ेंगे तो पता चलेगा कि कहानियों में विवरण ज्यादा है। जैसे पहले कहानीकारों से कहा जाता था, वैसे ही अब लघुकथाकारों से कहा जाता है– एक या डेढ़ पेज में आप कैसे कथा को अभिव्यक्त करेंगे! जैसे कहानीकारों ने कर दिखाया था, वैसे ही

लघुकथाकारों ने भी कर दिखाया है। नई विधाओं को स्थापना के लिए संघर्ष करना पड़ता है। साहित्य का संघर्ष अभिव्यक्ति के कौशल का संघर्ष है, कला का संघर्ष है। कुछ ऐसा नया कहा जाने लगे... पूर्व की परंपरा से अलग नई बात कही जाने लगे तो ही स्वीकार्यता मिलेगी। लघुकथा विधा में शिल्प व शैली की दृष्टि से प्रतीकों, बिम्बों, रूपक और संकेत का प्रयोग होता है, जो काव्य के गुण हैं। लघुकथा का बहुत बड़ा गुण है कि अपने समापन के साथ ही वह पाठक के मन और मस्तिष्क में स्फुटित होना शुरू हो जाती है।

चन्द्रेश साहू : कुछ लोगों का मानना है कि लघुकथाकार कहानी नहीं लिख पाते इसलिए लघुकथा लिखते हैं?

बलराम अग्रवाल : आकार में छोटी होने मात्र से कथा–रचना को लघुकथा मान लेना न्यायसंगत नहीं है। साहित्य को व्यक्तिमूलक संपत्ति मान लेने वाले लोग ही इस वक्त लघुकथा के उद्‌भव से आक्रांत हैं और दूसरा कोई नहीं।

चन्द्रेश साहू : लघुकथा में महत्वपूर्ण तत्व जिनके अभाव में लघुकथा, लघुकथा नहीं रहती?

बलराम अग्रवाल : मनुष्य के समसामयिक संवेदन–तंतुओं को प्रभावित करने वाली 'वस्तु' विशेष की सूक्ष्म एवं समग्र कथात्मक प्रस्तुति का नाम 'लघुकथा' है। आकारगत लघुता लघुकथा की विशेषता है। यह कथाभिव्यक्ति के लाघव की विधा है। जहाँ तक तत्वों की बात है, मैं लघुकथा में शास्त्रीय नियमों का जड़–पक्षघर नहीं हूँ। 'तत्व' वह जिसे कथाकार कथानक के माध्यम से पाठक तक पहुँचाने का प्रयास कर रहा होता है। किसी 'वस्तु' विशेष की कथात्मक प्रस्तुति के लिए कथाकार जिन अवयवों को आवश्यक समझता है, वे ही लघुकथा के आवश्यक तत्व हैं।

चन्द्रेश साहू : लघुकथा का अंत मारक शक्ति के साथ विस्फोट करने वाला हो क्या?

बलराम अग्रवाल : मेरा मानना है कि लघुकथा में कथ्य की शैली, भाषा की प्रवहमन्यता, प्रभावशीलता उत्पन्न करने वाली होनी चाहिए। कथाकार अपनी–अपनी शैली, शिल्प और कौशल के अनुरूप अलग–अलग अवयवों का प्रयोग करता है। कुछ लोग लघुकथा के अंत को चौंकाने वाला मानते हैं और 'चौंक' को लघुकथा का प्रधान तत्व मानते हैं।

चन्द्रेश साहू : आगामी समय में साहित्य की अन्य विधाओं जैसे– उपन्यास, कहानी या नाटक की तरह लघुकथा अपनी विशेष पहचान एवं सम्मान बनाने में सफल होगी?

बलराम अग्रवाल : हमारा काम ईमानदारी से लेखन करना है। किसी भी विधा की सर्व–स्वीकृति का रास्ता स्तरीय लेखन से होकर गुजरता है, मात्र महत्वाकांक्षी होने से सिद्ध नहीं होता।

चन्द्रेश साहू : आपने साहित्य की सभी विधाओं पर अपनी लेखनी चलाई है, पर लघुकथा लेखन ही मुख्य रहा है?

बलराम अग्रवाल : 1972 से जिस विधा में मेरी निरंतरता है, वह लघुकथा ही है। इसलिए मेरे लेखन का मुख्य स्वर 'लघुकथा' है। मुझे इसी में सुकून मिलता है, तथापि मैं कहानी, कविता, समीक्षा संपादन, आलोचना, अंग्रेजी से अनुवाद, बाल नाटक आदि साहित्य की अनेक विधाओं से जुड़ा हूँ। 2014 से मेरा एक बाल–नाटक हिमालच प्रदेश शिक्षा विभाग द्वारा कक्षा चार में पढ़ाया जा रहा है, केरल शिक्षा विभाग द्वारा कक्षा सात

में पढ़ाया जा रहा है, मधुबन बुक्स के पाठ्य पुस्तक के माध्यम से मुम्बई आदि विद्यालयों की कक्षा छह में पढ़ाया जा रहा है। मेरी एक कहानी 'सहस्रधारा' सेंट जोसेफ कॉलेज ऑफ कॉमर्स, बैंगलूर की स्नातक कक्षाओं में पढ़ाई जा रही है। इंटरनेट पर लघुकथा केंद्रित मेरे लेखों की पत्रिकाएँ पाठकों में लोकप्रिय हैं। फेसबुक पर 'लघुकथा साहित्य' नाम से समूह संचालन। इन लिंकों के माध्यम से लघुकथा संबंधी जानकारियाँ अपडेट की जाती रहती हैं तथा देश–विदेश के अनेक कथाकार इनसे जुड़े हैं। लघुकथा के सृजन–पक्ष के साथ विचार–पक्ष पर भी कार्य किए हैं।

चन्द्रेश साहू : आपके विचार से हिंदी में किन लेखकों को लघुकथाकारों में रख सकते हैं?

बलराम अग्रवाल : पूर्व के कथाकारों की लघ्वाकारीय कहानियाँ लघुकथा तो हैं, पर उन्हें लघुकथाकार माना जाए या नहीं, यह मेरे लिए थोड़ा कठिन कार्य है। मेरे विचार से पहले स्थान पर प्रेमचंद और प्रसाद जैसे ख्यातिप्राप्त नाम प्रमुख हैं, जिनकी रचनाओं में बहुसंख्यक लघुकथापरक कथा–रचनाएँ उपलब्ध हैं। दूसरे स्थान में भारतेन्दु, माधवराव सप्रे और तीसरे स्थान पर अयोध्या प्रसाद गोयलीय, कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, रावी, माखनलाल चतुर्वेदी, रामवृक्ष बेनीपुरी, रामनारायण उपाध्याय, आनन्द मोहन अवस्थी आदि ऐसे कथाकार हैं, जिनके लघुकथा संग्रहों की अधिकांश लघुकथाएँ नीतिपरक, आदर्श, बोध, उपदेश एवं शिक्षात्मक हैं। 1970–71 के समकालीन लघुकथा के प्रमुख हस्ताक्षरों में सतीश दुबे, भगीरथ, रमेश बतरा, कमल चोपड़ा, बलराम, पृथ्वीराज अरोड़ा, सुकेश साहनी, विक्रम सोनी, श्यामसुन्दर दीप्ति, सूर्यकांत नागर, अशोक भाटिया, रामकुमार घोटड़, सुभाष नीरव, सन्तोष श्रीवास्तव, सतीश राठी, माधव नागदा, पृथ्वीराज अरोड़ा के नाम निःसंकोच लिए जा सकते हैं, जिन्होंने समकालीन लघुकथा के रचनात्मक एवं आलोचनात्मक दोनों पक्षों पर महत्वपूर्ण कार्य किया है। सन् 2010 के बाद नई पीढ़ी के अनेक कथाकार गम्भीरतापूर्वक लघुकथा लेखन, आलोचना और संपादन से आ जुड़े हैं। इनमें डॉ उमेश महादोषी, डॉ चन्द्रेश कुमार छतलानी, डॉ. संध्या तिवारी, डॉ. कुमार सम्भव जोशी, योगराज प्रभाकर, सविता इन्द्र गुप्ता, डॉ. उपमा शर्मा, कान्ता रॉय, सन्तोष सुपेकर, मृणाल आशुतोष, वीरेन्दर वीर मेहता, अंजु खरबंदा आदि का नाम लिया जा सकता है।

चन्द्रेश साहू : लघुकथा के विचार पक्ष पर आपके विचार?

बलराम अग्रवाल : लघुकथा के विचार पक्ष को पुष्ट बनाने में शुरुआत में प्रो. कृष्ण कमलेश, रमेश बतरा, डॉ. शंकर पुणताम्बेकर, जगदीश कश्यप, भगीरथ परिहार, मोहन राजेश आदि ने मजबूत प्रयास किए। उसी दौर में डॉ. ब्रजकिशोर पाठक, कृष्णानन्द कृष्ण, डॉ कमल किशोर गोयनका आदि ने लघुकथा को विचार पक्ष पर शोधपरक लेखों के माध्यम से पुष्ट किया है। सम्प्रति प्रिंट–मीडिया के साथ इलेक्ट्रॉनिक मीडिया भी विचार पक्ष को ससम्मान स्थान दे रहे हैं।

चन्द्रेश साहू : आपकी नजर में ऐसे लघुकथाकारों के नाम जिनका योगदान लघुकथा के विकास में सराहनीय है?

बलराम अग्रवाल : मेरे विचार से लघुकथा के उत्कर्ष में मात्र लघुकथाकार ही नहीं कुछ कथेतर साहित्यकारों ने भी प्रयास किए हैं। कथाकारों–कवियों में विष्णु नागर,

असगत वजाहत, चित्रा मुद्गल, महेश दर्पण आदि हैं। आलोचकों में डॉ. ब्रजकिशोर पाठक, डॉ. कमल किशोर गोयनका, कृष्णानन्द कृष्ण, डॉ. सुरेश गुप्त, रत्नलाल शर्मा आदि। संपादकों में कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव, रमेश बतरा, अवध प्रताप सिंह, प्रभाकर श्रोत्रिय, महाराज कृष्ण जैन, कमर मेवाड़ी, प्रकाश जैन, बलराम, उर्मि कृष्ण, सतीशराज पुष्करणा, अशोक भाटिया, कमल चोपड़ा, मधुदीप, रामकुमार घोटड़, रामेश्वर काम्बोज 'हिमाशु', सुकेश साहनी, मधुदीप, सतीश राठी, उमेश महादोषी, अशोक जैन, डॉ. नीरज शर्मा आदि हैं।

चन्द्रेश साहू : कुछ ऐसे लघुकथाकार जो आपको वास्तव में लघुकथा के लिए वरदान लगते हों?

बलराम अग्रवाल : हाँ... ऐसे लघुकथाकार जिन्होंने लघुकथा के रचनात्मक और आलोचनात्मक दोनों पक्ष पर गंभीरतापूर्वक कार्य किए हैं और अब भी कर रहे हैं, वे हैं– भगीरथ परिहार, सतीश दुबे (अब स्वर्गीय), कमल चोपड़ा, सूर्यकांत नागर, अशोक भाटिया, सुकेश साहनी, बलराम, रामकुमार घोटड़; इनके अतिरिक्त स्व. विक्रम सोनी, स्व. जगदीश कश्यप, स्व. रमेश बतरा, स्व कृष्ण कमलेश, जिन्होंने लघुकथा के विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया। गत वर्षों में मधुदीप, अशोक जैन, कमल चोपड़ा, सतीश राठी, योगराज प्रभाकर, कांता रॉय आदि ने संगठित रूप से लघुकथा को पुष्ट करने के प्रयास किये हैं। कुछ और भी सम्माननीय नाम छूट गए होंगे, तथापि लघुकथा से जुड़े वरिष्ठ हस्ताक्षर बिना बताए भी उन नामों को जानते हैं, अतः समझ जाएँगे।

चन्द्रेश साहू : वर्तमान समय में लघुकथा लेखन की आवश्यकता एवं इसकी क्या उपादेयता है?

बलराम अग्रवाल : लघुकथा ने वर्तमान समय की अनगिनत समस्याओं को प्रभावी रूप से प्रस्तुत किया है। इस विधा ने पाठकों को आंदोलित व उद्वेलित करने में सकारात्मक भूमिका का निर्वाह किया है, जो समाज की रूढ़ एवं पारंपरिक दृष्टि को सुधारने व बदलने हेतु प्रेरित करती है। समकालीन लघुकथा ने अपनी दिशा तय करने के साथ अपनी दशा में भी सुधार किया है। ■

आवरण पृष्ठ 2 (माइक पर/उमेश महादोषी) **का शेष...**

तक की यात्रा की प्रस्तुति आदि के माध्यम से भी वह लघुकथा को उन्नत करते ही दिखाई देते हैं। निश्चित रूप से वह केवल एक लघुकथा लेखक के रूप में ही लोकप्रिय नहीं हैं, अपितु उनकी लोकप्रियता लघुकथा के प्रति उनकी व्यापक चिंताओं, उनके समाधान हेतु कर्मठता तथा अपने सहकर्मी मित्रों के प्रति विश्वास में निहित है।

■ हमारा सौभाग्य है कि अविराम साहित्यिकी की बारह वर्ष से अधिक की यात्रा में उनका मार्गदर्शन तो हमें मिला ही, आठ सम्पूर्ण लघुकथा विशेषांकों का और दो अन्य विशेषांकों के संपादन में उनके अनुभवों और कौशल का भी लाभ मिला। ये विशेषांक उन्हीं की संपादन क्षमता के कारण लघुकथा जगत में अपनी पहचान बना पाये।

■ सुखद संयोग है कि इस अंक के प्रकाशन और भाई साहब के लघुकथा–सृजन के पचास वर्ष पूरे होने का समय (अप्रैल–जून 2022) का सम्मिलन हो रहा है। भाई साहब को इस अवसर पर अविराम साहित्यिकी परिवार एवं लघुकथा जगत की ओर से हार्दिक बधाई।

■ इस अंक में सहयोग के लिए सभी मित्रों का हार्दिक आभार। ■

डॉ. बलराम अग्रवाल जी की साहित्यिक यात्रा के कुछ पड़ाव

← डॉ. बलराम अग्रवाल जी के परमपूज्य पिताश्री श्रीराम अग्रवाल जी (12.10.1924 – 24.05.1984)

फिल्म अभिनेता अजय रोहिल्ला एवं डॉ. कुँअर बेचैन के साथ ↓

← डॉ. अशोक भाटिया, श्री भगीरथ परिहार एवं श्री महेश दर्पण के साथ

पुत्र आकाश, पत्नी श्रीमती मीरा अग्रवाल एवं गायक मनोज मुन्तसिर के साथ ↓

आगे नामवर सिंह जी व फजल इमाम मलिक, पीछे अजय कुमार और डा.शेरजंग गर्ग, मध्य में डॉ. बलराम अग्रवाल ↓

सुप्रसिद्ध हास्य कलाकार राजू श्रीवास्तव के साथ बलराम अग्रवाल जी सपत्नीक →

सुबह के भ्रमण पर दिल्ली के एक पार्क में रमेश आजाद एवं सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी एवं अन्य मित्रों (जो फोटो में नहीं आ सके) के साथ ⬇

डॉ. बालाशौरि रेड्डी जी के कर–कमलों से सम्मान ➔

विजय गोयल, आकांक्षा पारे एवं मालती जोशी के साथ ⬇

बांग्लादेश की सुप्रसिद्ध लेखिका तसलीमा नसरीन के साथ ⬇

उमेश महादोषी एवं आबिद सुरती के साथ ⬇

⬆ श्री सतीश राठी द्वारा इन्दौर में स्वागत

फुर्सत के क्षण : सुभाष गुप्ता, कथाकार विजय जी व अशोक गुप्ता के साथ ⬇

सुकेश साहनी एवं श्याम सुंदर अगवाल के साथ विमर्श ⬇

दिव्या माथुर के साथ ⬇

उमेश महादोषी एवं ज्योत्स्ना कपिल के साथ ➔

प्रो. धनंजय सिंह, आशा शैली एवं लालित्य ललित के साथ ➔

पारस दासोत के साथ ⬇

⬆ अशोक भाटिया, सुरिन्दर कैले, रामकुमार आत्रेय, रामकुमार घोटड़ व विक्रमजीत नूर के साथ पुस्तक विमोचन कार्यक्रम में।

सुप्रसिद्ध उर्दू लेखक इम्त्याज हुसैन से हाथ मिलाते हुए बलराम अग्रवाल। साथ में हिमांशु जोशी, रामकुमार कृषक, गोपी चन्द नारंग आदि। ⬇

साहित्य अकादमी, नई दिल्ली के सभागार मे लघुकथा पाठ कार्यक्रम में (बायें से) नीलिमा शर्मा, देवेन्द्र कुमार देवेश, सुकेश साहनी, बलराम अग्रवाल, मधुदीप, अशोक भाटिया के साथ ⬇

डॉ. बलराम अग्रवाल : एक भावपूर्ण छायाचित्र

⬆ पुस्तक मेले में शोभा रस्तोगी, मधुदीप, अशोक वर्मा, राधेश्याम तिवारी एवं अशोक गुजराती के साथ

भाषा सहोदरी कार्यक्रम में कमलेश भारतीय, कान्ता रॉय, मॉरीशश की विदुषी एवं सतीश राज पुष्करणा के साथ ➔

अशोक गुजराती, हरिनारायण, भारतेंदु मिश्र, ए के झा और बद्री सिंह भाटिया के साथ ➔

आलोचक श्री धनंजय वर्मा, लघुकथाकार श्री प्रताप सिंह सोढी एवं कवि श्री श्रीराम दबे के साथ ➔

➔ वनिका प्रकाशन के कार्यक्रम में डॉ. संध्या तिवारी के साथ

पृष्ठ 57 '...एक पूर्ण शिक्षण संस्थान' (विरेन्द्र 'वीर' मेहता) का शेष

देती अन्य गतिविधियों से अपने आरंभिक काल से ही जुड़े हुए हैं। अपने पाँच दशक से ऊपर के साहित्य जुड़ाव में उन्होंने अपनी समृद्ध लघुकथाओं, श्रेष्ठ समीक्षाओं, विभिन्न आलेखों, महत्वपूर्ण शोध कृतियों और अन्य साहित्यिक गतिविधियों के माध्यम से लघुकथा को समृद्ध करने का हर संभव प्रयास किया है। उन्होंने अपनी लेखनी से न केवल लघुकथा विधा से जुड़े जरूरी मुद्दों को उठाया है बल्कि विधा के विकास में विद्यमान अवरोधों पर भी समुचित चर्चा एवं उनके समाधान का भी प्रयास किया है। अपनी लंबी साहित्यिक यात्रा के दौरान उन्होंने अपनी दृष्टि न केवल विधा के हर परिवर्तन पर बनाए रखी है बल्कि जहाँ भी संभव हुआ अन्य समर्थ लोगों को साथ लेकर उचित सुझावों के साथ कार्य भी किया है।

...यदि यह कहा जाए कि उन्होंने 'लघुकथा' में एक पूर्ण शिक्षण संस्थान की तरह हिंदी सहित कई राष्ट्रीय–अंतरराष्ट्रीय भाषाओं में अपना श्रेष्ठ योगदान देने के साथ नई पीढ़ी का मार्गदर्शन किया है और वर्तमान में भी निरंतर कर रहे हैं तो सार्थक होगा।

■एफ–62, फ्लैट नं.8, गली–7, निकट मंगल बाज़ार, विकास मार्ग, लक्ष्मीनगर, दिल्ली–92 / मो. 09818675207

।।बलराम अग्रवाल का लघुकथा सृजन।।

लघुकथा संग्रह 'सरसों के फूल' से 06 लघुकथाएँ

01. अलाव के इर्द–गिर्द

टखनों तक खेत में धंसे मिसरी ने सीधे खड़े होकर पानी से भरे अपने पूरे खेत पर निगाह डाली। नलकूप की नाली में बहते पानी में उसने हाथ–पाँव और फावड़े को धोया और श्यामा के बाद अपना खेत सींचने के इंतजार में अलाव ताप रहे बदरू के पास जा बैठा।

''बोल भाई मिसरी के रह्या थारे मामले में? बदरू ने पूछा।

''सब ससुर धोखा।'' अलाव के पास ही रखी वीड़ियो में से एक को सुलगाकर खेत भर जाने के प्रति कश–ब–कश आश्वस्त होता मिसरी बोला– ''ई ससुर सुराज तो फिस्स हुई गया रे बदरू।''

''कउन सुराज... इस श्यामा का छोरा?''

''श्यामा का नहीं, गांधी का छोरा... पिर्जातंत।''

''मैंने तो पहले ही कह दिया था थारे को। ई कोर्ट–कचहरी का न्याय तो भैया पैसे वालों के हाथों में जा पहुँचा। सब बेकार।''

''गलती हुई रे बदरू। थारी जमीन दबाने के समय ही हम एका बरतते तो चौधरी आज इत्ता हावी न होता।''

''थारे को तो पता है... अपनी जमीन हारने के बाद मैं कित्ता रोया था उसमें बैठकर।...और यही बात मैंने कही थी उस वखत, कि एका नहीं होगा तो थोड़ा–थोड़ा करके हर किसान का खेत चबा जाएगा चौधरी।'' अलाव की आग को पतली–सी एक डंडी से कुरेदते हुए बदरू बोला– ''और आज ही बताए देता हूँ, थारे से निबटते ही इस श्यामा की जमीन पर गड़ेंगे उसके दाँत।''

बदरू की बात के साथ ही मिसरी की नजरें खेत सींचने में मस्त श्यामा पर जा पड़ीं। बित्ता–बित्ता भर जमीन अपनी होने के एहसास ने उन्हें आजाद–हैसियत का गर्व दे रखा है। इस गर्व को कायम रखने की ललक ने मिसरी के अंदर से भय की सिहरन को बाहर निकाल फेंका।

''मुझे दे।'' चिंगारी कुरेद रहे बदरू के हाथ से डंडी को लेकर मिसरी ने जगह बनायी और फेफड़ों में पूरी हवा भरकर चार–छः लंबी फूँक अलाव की जड़ में झोंकी। झरी हुई राख के सैकड़ों चिंदे हवा में उड़े और दूर जा गिरे। अलाव ने आग पकड़ ली। कुहासे भरी उस सर्द रात के तीसरे पहर लपटों के तीव्र प्रकाश में बदरू ने श्यामवर्ण मिसरी के ताँबई पड़ गये चेहरे को देखा और अलाव के इर्द–गिर्द बिखरी पड़ी डंडियों–तीलियों को बीनकर उसमें झोंकने लगा।

02. अज्ञात गमन

चौराहे के घंटाघर से दो बजने की आवाज़ घनघनाती है। बन्द कोठरी में

लिहाफ़ के बीच लिपटे दिवाकर आँखें खोलकर जैसे अँधेरे में ही सब कुछ देख लेना चाहते हैं– दो जवान बेटों में से एक, बड़ा– अपनी शादी के तुरन्त बाद ही बहू को लेकर नौकरी पर चला गया था। राजी–खुशी के दो–चार पत्रों के बाद तीसरे ही महीने– ''आदरणीय पिताजी, बाहर रहकर इतने कम वेतन में निर्वाह करना कितना मुश्किल है। इस पर भी पिछले माह वेतन मिला नहीं। हो सके तो, कुछ रुपये खर्च के लिए भेज दें। अगले कुछ महीनों में धीरे–धीरे लौटा दूँगा...'' लिखा पत्र मिला।

रुपये तो दिवाकर क्या भेज पाते। बड़े की चतुराई भाँप उससे मदद की उम्मीद छोड़ बैठे। छोटा, उस समय कितना बिगड़ा था बड़े पर– ''हद कर दी भैया ने, बीवी मिलते ही बाप को छोड़ बैठे!''

इस घटना के बाद एकदम बदल गया था वह। एक–दो ट्यूशन के जरिए अपना जेब खर्च उसने खुद सँभाल लिया था और आवारगी छोड़ आश्चर्यजनक रूप से पढ़ाई में जुट गया था। प्रभावित होकर मकान गिरवी रखकर भी दिवाकर ने उसे उच्च शिक्षा दिलाई और सौभाग्यवश ब्रिटेन के एक कॉलेज में वह प्राध्यापक नियुक्त हो गया। वहाँ पहुँचकर वह अपनी राजी–खुशी और ऐशो–आराम की ख़बर से लेकर दिवाकर के 'ससुर' और फिर 'दादाजी' बन जाने तक की हर ख़बर भेजता रहा है। लेकिन वह, यहाँ भारत में, क्या खा–पीकर जिन्दा हैं– छोटे ने कभी नहीं पूछा।

...कल सुबह, जब गिरवी रखे इस मकान से वह बेदख़ल कर दिए जाएँगे– घने अंधकार में डबडबाई आँखें खोले दिवाकर कठोरतापूर्वक सोचते हैं... अपने बेटों के पास दो पत्र लिखेंगे....यह कि अपने मकान से बेदखल हो जाने और उसके बाद कोई निश्चित पता–ठिकाना न होने के कारण आगे से उनके पत्रों को वह प्राप्त नहीं कर पाएँगे।

03. जुबैदा

इस बार मैं जैसे ही होटल के सामने ऑटो से उतरा– जुबैदा से सामना हो गया। इसहाक ने बताया था कि रहीम ने जुबैदा को घर से बाहर कर दिया है।

''घर से बाहर... क्या मतलब?''

''तलाक!...मेरे और अशफाक भाई के अलावा यह राज इस शहर में अब सिर्फ तुम और जानते हो।''

''अम्मा–अब्बू भी नहीं...?''

''वो यह सदमा सह नहीं सकेंगे... मर जाएँगे विनोद भाई।'' उसने तड़पकर मेरा हाथ थाम लिया था– ''तुम बनारस जाते रहते हो। इत्तफाक से कभी मिल जाए तो जुबैदा पर भी जाहिर मत होने देना कि तुम यह सब जानते हो। शर्मसार लड़की है, साँस नहीं ले पाएगी।''

''अब... मेरा मतलब है कि उसका...''

''वहीं छोटी–सी एक कोठरी किराए पर ले दी है हम भाइयों ने।'' उसने किंचित कष्टपूर्वक बताया, ''फिलहाल तो उसका और उसकी बच्चियों का खर्चा भी हम ही उठा रहे हैं।''

''कितने फरेब जीते हैं हम। कई बार तो एकदम गैर–जरूरी। अन्याय की पीड़ा

से प्रतिरोध की जो चिंगारी हमारे अंदर झरती है, उसे यूँ ही बर्बाद क्यों हो जाने देते हैं हम, मैं सोचता रहा। सोचता रहा कि जुबैदा जैसे ही कभी मिलेगी मैं कहूँगा, दुविधा और विषाद मौत के ही दूसरे नाम हैं। संघर्ष ही सच है जुबैदा। सच को जीओ।

''पकड़े गए न आज!'' जुबैदा की परिचित आवाज ने मेरी तंद्रा तोड़ी, ''बनारस आते हो और इससे बाहर तो तुम्हारा अपना जैसे कोई रहता ही न हो इस शहर में।'' होटल की ओर इशारा करके वह बोली।

''तुम तो जानती ही हो मेरा काम... पापा की मौत के बाद तो एकदम अकेला रह गया हूँ...बेहद व्यस्त।'' मैं बोला, ''और फिर तुम्हारी खैरियत तो अशफाक–इसहाक से मिल ही जाती है।''

''खैरियत के आजू–बाजू भी काफी कुछ होता है विनोद। बिना वजह अपने घर से निकाल बाहर करने की हैवानी हरकत के खिलाफ उन्हें कोर्ट में खींच लाई हूँ मैं।'' जुबैदा के चेहरे पर एकाएक इस्पात की परतें उभर आईं, आज पेशी की पहली तारीख है। इत्तफाक से मिल ही गये हो तो बोलो, मेरे पीछे रहोगे? सिर्फ हाँ या ना।''

मैं मौन रहा। कुछ क्षण वह खड़ी रही फिर चुपचाप एक ओर को चल दी। मैंने तुरंत ही तत्परतापूर्वक उसके कंधे पर अपना हाथ रख दिया।

''इस हौसले को किसी सहारे की तलाश जरूरी नहीं है जुबैदा। मेरे मुँह से फूटा, इसे कायम रखो। मैं बोला।

बेहद ठंडे अंदाज में अपने कंधे पर से उसने मेरा हाथ हटा दिया और संतुलित कदमों से आगे बढ़ गई।

04. नई पौध

''च्यूँठ कुल हेयवअ भाईजी?''[1]

घूमकर देखा– करीब चौदह बरस का एक लड़का कमर पर झल्ली–भर पौधे लादे मेरे पीछे खड़ा था। रुई के फाहे–सा चिट्टा और कोमल, पनीली आँखें, बारीक होंठ और गालों से छलक–छलक पड़ती सुर्खी। हिन्दुस्तान में मैं जहाँ–जहाँ भी गया– स्वेटर, जर्सी, कम्बल या हींग बेचते बेवतन तिब्बती मुझे जरूर मिले। उनकी विवशता और दयनीयता को हम लोगों ने उनकी नियति मानकर पचा लिया है। लेकिन यह कश्मीरी किशोर! वहाँ का सेब तो दुनियाभर में जरूर बेचा और खरीदा जाता है, परन्तु पौध...!!

''प्योर क्अशुर छु भाई जी... म्यूठ फल दीयी।''[2] वह पुनः बोला।

''फल का कोई नमूना है तुम्हारे पास?'' मैंने उससे पूछा, फिर कहा, ''और सुनो, हिन्दी प्लीज।''

''नमूना अब कहाँ भाईजी...'' वह दुःखी स्वर में बोला, ''घर के बाहर एक पौधा यूँ ही रोप दिया था मम्मी ने... बड़ा होने पर खूब फल आये उस पर... मैंने, मेरी छोटी बेनी[3] और दादी ने बड़े चाव से खाये।''

''और तुम्हारे मम्मी–पापा ने?''

''मम्मी बेनी के जन्म के समय ही चल बसी थीं।'' किशोर की आँखों में आँसू छलक आये, ''उन्हीं को याद कर पापा हर बार फसल के आधे सेब देशी–विदेशी

सैलानियों को बाँटते रहे। एक भी फल कभी बाजार में नहीं भेजा उन्होंने।''

''तो क्या वह पेड़ अब...'' मैंने सशंक पूछा। मेरे सवाल के जवाब में लड़का कुछ पल चुप खड़ा रहा। आँखों में छलक आये आँसुओं को बाहर ठेलकर मोटे–मोटे दो और आँसू उसकी आँखों में आ डटे।

''पेड़ तो हैं भाईजी।'' गले में रुक गये बाकी आँसुओं को गटकते हुए वह धीरे–से बोला, ''महीनों पहले कुछ हथियारबन्द लोग हमारे घर में घुस आये थे, बोले कि हमारे साथ मिलकर आजादी की जंग लड़ो या वतन छोड़कर भाग जाओ...कहा कि हफ्ता–दो हफ्ता खूब सोच लो, हम फिर आयेंगे।''

''फिर?''

''उसके बाद वे बार–बार पापा को डराते–धमकाते रहे...पापा पुराने फौजी थे, उनकी कोई बात नहीं माने। आखिर एक दिन...'' यह कहते हुए वह वहीं बैठ गया और जोर–से रोने लगा। आसपास से गुजरते लोग उसका विलाप सुनकर रुकने लगे।

''क्या हुआ, भाई साहब?'' भीड़ में से किसी ने पूछा।

''कुछ नहीं।'' मैंने लापरवाहीपूर्वक जवाब दिया और किशोर के समीप ही उकड़ूँ बैठकर उससे पूछा, ''तुम कैसे बचे?''

''मैं स्कूल गया था उस वक्त।'' रोते–रोते ही उसने बताया, ''बेनी को वे अपने साथ उठा ले गए शायद... घर पर सिर्फ दादी–पापा की लाशें थीं। स्कूल से मेरे लौटने तक पुलिस उन्हें ले जा चुकी थी... उस पूरे दिन मैंने पेड़ से पके फलों को उतारकर इस झल्ली में भरा और दिल्ली आ रहे एक जत्थे के साथ यहाँ भाग आया।''

''तब... वह पौध?'' मैंने पूछा।

''साथ लाये सेबों को खाया या बेचा नहीं मैंने– सड़ा डाला।'' उसने बताना शुरू किया, ''उसके बाद उनसे बीज निकालकर यह पौध तैयार की उस नस्ल की। हिन्दुस्तान के हर घर में एक पौध इस मीठी नस्ल की पहुँचा देना चाहता हूँ भाईजी, लेंगे?''

''हाँ–हाँ क्यों नहीं।'' मैं शीघ्रतापूर्वक उसके पास से उठ खड़ा हुआ, ''मेरे साथ चलो। ये सारे पौधे मेरी दुकान पर रखो। हाथों–हाथ बिकेंगे।''

''दुकानवालों ने ही तो कश्मीर की फिजाँ का यह हाल किया है भाईजी।'' लड़का भी इस बार झटककर उठ खड़ा हुआ। अपनी कलाई से उसने गालों पर खिंच आई आँसुओं की लकीर को पोंछ डाला, बोला– ''घर–घर पौध पहुँचाने का यह काम तो हम कश्मीरियों को खुद ही करना पड़ेगा। आप एक पौधा लेंगे?'' और तुरन्त ही मेरी ओर से मुँह फेरकर उसने भीड़ में दूसरी ओर खड़े लोगों को पूछना शुरू किया– ''आप?... आप? ...आप?''

{ [1] सेब की नई पौध लेंगे भाईजी? [2] शुद्ध कश्मीरी है भाईजी, मीठा फल देगा। [3] छोटी बहन।

1989 में विस्थापित एक कश्मीरी परिवार की व्यथा सुनकर लिखित।}

05. सरसों के फूल

घूरने के उसके अंदाज से आभास हुआ कि वह मुझे पहचानने की कोशिश कर रहा है। लेकिन मुझे वह किसी भी तरह जाना–पहचाना नहीं लगा। न चेहरे–मोहरे से,

न कद–काठी से और न ही हाव–भाव से। सो उसकी ओर से ध्यान हटाकर पुस्तक पढ़ने में मशगूल रहा।

''माफ कीजिए सर...'' मन के आवेग से परास्त वह कुछ देर बाद अपनी सीट से उठकर अंततः मेरे पास आ बैठा, बोला, ''मुझे लगता है कि आप डॉक्टर शर्मा हैं।''

''हाँ, लेकिन मैंने आपको नहीं पहचाना।'' मैं उससे बोला।

''आप मुझे कैसे पहचाने सर।'' वह बोला, ''अब से करीब तीस साल पहले– जब मैं सिर्फ नौ या दस बरस का छोकरा था– मिसेज शर्मा मुझे पढ़ाती थीं।''

मुझे आश्चर्य हुआ कि नौ या दस बरस का एक बालक तीस साल बाद भी अपनी अध्यापिका को स्मृति में बसाए हुए है।

''आंटी कैसी हैं सर?'' उसने पूछा।

''वह! मैं धीरे से बोला, तीस बरस पहले वह चालीस के आस–पास थी। शरीर अब उतना कहाँ जी पाता है। वह तो वैसे भी निःसंतान होने का दबाव झेल रही थीं, पिछले साल...।''

इस खबर से उसे किंचित धक्का लगा। काफी देर तक वह चुप बैठा रहा। मैंने भी किताब बंद करके अपने घुटनों पर रख ली।

''किसी को गोद लिया सर?'' चुप्पी तोड़ते हुए उसने पूछा।

''नहीं।'' मैं बोला, ''दरअसल ऐसे चोंचलों में मुझे कभी विश्वास नहीं रहा। पिछले साल उनके देहांत के उपरांत अपनी सारी संपत्ति मैंने एक ट्रस्ट के नाम वसीयत लिख दी है।''

''आपको शायद याद न हो सर।'' कुछ सोचते हुए उसने बोलना शुरू किया, ''उन दिनों आंटी मुझे अपने पास रखना चाहती थीं लेकिन मेरी माँ और आपकी अनिच्छा के कारण...। इन दिनों मैं अच्छा कमा लेता हूँ सर। पत्नी है, बच्चे हैं और थोड़ा बहुत सोशल स्टेटस भी, लेकिन...।'' कहते–कहते वह रुक गया। मैंने नजरें उठाकर दारुण हो उठे उसके चेहरे को देखा।

''माँ के बाद अनाथ जैसा रह गया हूँ। आपको देखकर कुछ आशा जगी थी सो वह भी...। आप तो संतान तक की इच्छा से विरक्त रहे हैं। अलीगढ़ का ही टिकट लिया होगा न सर। वह कुछ सकुचाता–सा बोला, वसीयत तो लिख ही दी है, छोड़िए वह सब। मेरे साथ खुर्जा उतर चलिए। प्लीज।''

गाड़ी किसी गाँव के पास से गुजर रही थी। मैंने बाहर की ओर झाँका– कुछ नंग–धड़ंग छोकरे कम पानी वाली एक पोखर में किलोल कर रहे थे। गेहूँ की हरी बालियाँ और सरसों के कच्चे फूल खेतों में लहलहा रहे थे। गर्दन घुमाकर मैंने अपने से लगभग आधी उम्र वाले उस नौजवान को देखा। मुझे वह बालकों, बालियों और फूलों जैसा ही निश्छल और सरल लगा। मैंने पुनः बाहर ताका। गाँव बहुत पीछे छूट गया था। गाड़ी एक कृशकाय नदी के छोटे से पुल पर से गुजर रही थी।

06. हिन्द फौज का सूरमा

सिर पर एक टोपीनुमा गूदड़ टिकाए बाजार के बीचों–बीच बैठा नंग–धड़ंग

बूढ़ा अचानक चीख–पुकार कर उठता और तेजी से सामने की ओर भागने लगता। औरतें और समझदार लड़कियाँ उस पर नजर पड़ते ही शर्म से सिर झुका लेतीं और सहमकर एक ओर को बच जातीं। छोटे बच्चों के लिए नंगा बदन कुतूहल की चीज होता तो उच्छृंखल किशोरों और नौजवानों के लिए उसका एकाएक चिल्लाकर दौड़ पड़ना।

''ठंड के मारे पसली–पसली कीर्तन कर रही है बन्दे की।'' एक बुजुर्ग दुकानदार सौदा खरीदते अपने ग्राहक से बोला– ''लेकिन क्या मजाल कि एक बनियान भी बदन पर टिकने दे। दो पुराने कोट तो मैं दे चुका इसे... पता नहीं कहाँ फेंक आया।''

''अस्पताल के सामणै... और कहाँ।'' ग्रामीण ग्राहक बोला, ''रोग ही बस या है इसणै।''

दुकानदार ने गहरी–सी एक नजर ग्रामीण पर डाली और पूछा, ''आप जानते हैं इसे?''

''बहौत अच्छी तरियां।'' वह बोला– ''लम्बी–चौड़ी जैदाद तो एक तरफ, देश की खातिर पेट वाली घराणी और बूढ़े माँ–बाप तक की फिकर नहीं की इसणै... नेताजी सुभाष की हिन्द–फौज में भरती हो गया सब आराम छोड़कै...।''

''खड़े क्यों हैं?'' ग्राहक के मुँह से उसकी दरस्तान सुनने को उत्सुक दुकानदार बोला, ''बैठ जाइये न।''

''दिन बीतते गये।'' स्टूल पर बैठते हुए ग्राहक ने बोलना जारी रखा– ''घराणी ने बेटे को जन्म दिया पर वा खुद तपेदिक की रोगणी हो गई। उण दिणां, वा भी गाँव में, तपैदिक का इलाज तो कुछ था नहीं... सो वा चल बसी... माँ–बाप भी मर–मरा गये।

''ओ...ऽ...।'' बुजुर्ग ने साँस छोड़ी– ''तभी तो।''

''नहीं जी, हिन्द फौज का सूरमा था...।'' ग्रामीण ने प्रतिकार किया– ''घराणी और माँ–बाप की मौत से भला क्या हिलता।''

''तब?'' दुकानदार ने सवाल किया। पूरी बात सुनने से पहले ही बेमौके अफसोस जाहिर कर देने की अपनी हरकत पर थोड़ा शर्मिन्दा भी हुआ।

''दुःख की बात तो या है सेठ, अक पिछले दिणां अपणा इकलौता बेटा इसणै अस्पताल में दाखिल कराणा पड़ गया।'' दुकानदार के नौकर द्वारा बाँध दिये गए सौदे को अपनी ओर खिसकाकर ग्रामीण ने बिल पर नजर डाली और सौ रुपये का नोट दुकानदार की ओर बढ़ाकर बोला– ''डाग्दरां और नरसां णै के मतलब कि मरीज कोण है... औरां की तरियां या के बेटे का इलाज भी लापरवाही सै हुआ और छोटी–सी बीमारी लाइलाज हो गयी।''

''फिर?'' सौ के नोट में से बाकी बचे पैसे उसे लौटाकर दुकानदार ने पूछा।

''फिर एक दिण अस्पताल के डाग्दरां णै अपणै दफ्तर में बुलाकै या खूब फटकारा।'' ग्रामीण ने बताया– ''बोले कि तैणै म्हारी रिपोट मुखमन्त्री को क्यों की?. ..कि तू हिन्द फौज का सूरमा है तो जा मुखमन्त्री से ही करा लै इलाज... अपनी कमी की तरफ तो देखा ही नहीं उण बदमाश डाग्दरां णै।''

''फिर?''

''फिर के सेठ?'' बहुत दुखी मन से वह बोला– ''एक रात या का बेटा

लम्बी–लम्बी साँसे लैण लगा... दो बजे थे... याणै घबराकै...यहाँ–वहाँ देखा– ना कोई नरस ना डाग्दर... लड़का और लम्बी साँसें लैण लगा... वहाँ सै उठकर या डाग्दरां णै, नरसां णै पुकारता हुआ अस्पताल भर की गैलरियां में दौड़ गया। कहीं कोई न मिला...वापस आया तो बेटा... बस, तभी सै या आपा खो बैठा...सिर पै हिन्द फौज की टोपी के अलावा शरीर के सारे कपड़े फाड़ डाले...और चिल्लाता हुआ रात भर अस्पताल की गैलरी मा चकराता रहा।''

''कोई है!...ऽ...अरे कोई है....ऽ....'' अचानक बूढ़ा जोर से चिल्लाया और अपने स्थान से उठकर सामने की ओर भाग लिया। बुजुर्ग दुकानदार नम आँखों से ओझल होती उसकी पीठ को देखता रहा और ग्रामीण ग्राहक सामान का थैला कन्धे पर लादकर आगे बढ़ गया।

लघुकथा संग्रह 'पीले पंखों वाली तितलियाँ' से 03 लघुकथाएँ

07. ब्रह्म सरोवर के कीड़े

''ब्राह्मण को कुछ दे पाओगे सेठ... पुण्य मिलेगा।'' मंदिर की सीढ़ियों से उतरकर जैसे ही वह सड़क पर आया, एक हाथ उसके सामने आ फैला। उसने नजरें उठाकर देखा– बीसेक साल का गोरा चिट्टा किशोर वहाँ था। लम्बा कद मजबूत काठी। हाथ की उँगलियों में लोहे के छल्ले से लेकर सोने और चाँदी तक की अँगूठियाँ, गले में रुद्राक्ष की और स्फटिक की मालाएँ, माथे पर त्रिपुण्ड। ऐसे स्वस्थ लड़के को भीख माँगते देख उसका पारा एकदम से ऊपर चढ़ गया; लेकिन खुद पर काबू रखते हुए उसने उससे पूछा, ''पढ़े–लिखे हो?''

''जरूरत नहीं पड़ी कभी।'' उसके इस सवाल पर लड़के ने स्थिर अंदाज में उत्तर दिया।

''क्यों?'' उसने पूछा।

''पूर्व जन्मों के संत्कर्मों के बल पर हर बार ब्राह्मण परिवार में जन्म लेता हूँ सेठ। इसी से वाणी को इतना सत्व मिला है कि बिना पढ़े भी मुख से निकला हर शब्द श्लोक है।'' मूर्खतापूर्ण विश्वास से भरे स्वर में वह बोला।

''यह किसने बताया तुम्हें?''

''बताने की जरूरत ही कुछ नहीं है। ब्रह्मवेत्ता पूर्वजों का वंशज होने के नाते ज्ञान तो स्वतः ही प्राप्त है हमें।'' वह बोला।

''आत्मज्ञानी होकर भीख माँगते हो, शर्म नहीं आती?''

''परमारथ के कारने साधु धर्या सरीर।'' इस पर वह त्रिपुण्डधारी दर्पपूर्वक बोला, ''दान–दक्षिणा लेकर अन्य योनियों में जन्में मनुष्यों को इस और उस दोनों लोकों में सदा सुखी रहने का आशीर्वाद दे सकने वाली सर्वोच्च जाति में पैदा हुआ हूँ तो मैं क्यों न ऐसा करूँ सेठ! इसमें शर्म कैसी?''

उसे लगा कि इस मूर्ख के पास अगर दो पल भी और रुका तो रक्तचाप बहुत बढ़ जाएगा।

''है कुछ देने और आशीर्वचन लेने की नियत?''

''शटा...ऽ...प!'' बाढ़ का पानी जैसे बाँध को तोड़कर फूट पड़ता है, वैसे ही वह चिल्लाया और बामुश्किल ही अपनी हथेली को झापड़ बनने से रोक पाया।

08. पहली खुराक

''हाँ, कहिए!'' वह नौजवान मेरे सामने वाली चेयर पर आकर बैठा तो मैंने पूछा।

''डॉक्साब, अचानक एक अजीब–सी बीमारी से परेशान हूँ।'' युवक बोला।

''बताते रहिए...'' वह चुप हुआ तो मैंने कहा, ''मैं सुन रहा हूँ।''

''चलते–फिरते, उठते–बैठते, आते–जाते, नहाते–खाते... कोई काम कर रहा होऊँ या निठल्ला बैठा होऊँ, हर वक्त मुझे लगता रहता है कि मैं जाग नहीं रहा, सो रहा हूँ।'' नौजवान ने बताया।

उसकी समस्या सुनकर मैं मुस्कुरा–सा दिया। बोला, ''यह भी कोई समस्या है भला! सीमा पर तैनात जवान के अलावा वोटर से लेकर ऊपरी नेता तक, इस देश का छोटा–बड़ा हर आदमी सो रहा है।''

''डॉक्टर साहब, प्लीज! मेरी बात पर नौजवान तड़पकर बोला, ''मेरी परेशानी को समझने की कोशिश कीजिए। मजाक में मत उड़ाइए, प्लीज!''

''मैं मजाक में नहीं उड़ा रहा।'' इस बार मैंने गंभीर स्वर में कहा, ''मुझे दरअसल खुशी है कि तुम्हें अपने नींद में होने का अहसास है। वरना, ज्यादातर तो लोग सो रहे हैं और खुद को जागा हुआ ही मान रहे हैं। जिसे बीमारी समझ रहे हो, वह तुम्हारे जागने की शुरुआत है।''

इस बात पर वह भौंचक–सा मेरी ओर ताकने लगा।

''तुम्हारी इस बीमारी का इलाज कैप्सूल या गोलियाँ नहीं है।'' मैं बोला।

''तो?''

''वह सब तुम मुझ पर छोड़ दो। मैंने उससे कहा, ''देश को इस चेतना की बहुत जरूरत है दोस्त! नींद से जगाए जाने का तुम्हारा इलाज और अभ्यास इसी समय से शुरू होगा।''

''शुक्रिया डाक्साब। इस कृपा के लिए मैं हमेशा आभारी रहूँगा आपका।'' यह कहते–कहते वह उठा और मेरे पैरों पर झुक गया।

''बस!'' उसके झुके हुए कंधों को पकड़कर उसे सीधा खड़ा करते हुए मैंने कहा, ''आभार तक तो ठीक है किन्तु किसी के सामने पहली–दूसरी मुलाकात में ही श्रद्धानत होकर उसके पाँव में पसर जाना सुप्तावस्था का ही एक चरण है, इसे त्यागो। तुम्हारे लिए यह पहली खुराक है। दूसरी खुराक तब दूँगा, जब देखूँगा कि यह पहली खुराक तुम्हारे भीतर पूरी तरह उतर गई है। अभ्यास जारी रखो। अब जाओ।''

09. दीवार की चुनौती

परस्पर अभी हम बातें कर ही रहे थे कि साथ वाली दीवार भरभराकर हमारे ऊपर आ पड़ी। सौभाग्य ही था कि वह खालिस मिट्टी से बनी थी। हमें चोट नहीं आई। तथापि धूल और दहशत से हमारे चेहरे अट गए।

''कमाल है यार,'' दोस्त अपने कपड़े झाड़ते हुए बोला, ''इस ठीक–ठाक खड़ी

दीवार को एकाएक क्या हुआ?... कोई भूकंप भी नहीं आया!''

''बहुत पुरानी थी शायद!'' जेब से रुमाल निकालकर अपने चेहरे और होठों पर से धूल पोंछते हुए मैंने कहा।

''चुप...चुप ओ बेवकूफ!'' धूल और ढेलों के ढेर में बदल चुकी दीवार के बीच से आवाज आई, ''इस तरह भरभराकर मेरे गिर जाने की वजह मेरा पुरानापन नहीं, तू खुद है।''

''मैं?''

''हाँ।... बातचीत के दौरान अभी–अभी इस दो कान वाले से क्या बोला था तू? यह कि धीरे बोल, दीवारों के भी कान होते हैं।... देख, अब मैं रही न मेरे कान। थोड़ी देर पहले की अपनी बातचीत का गवाह अब या तो तू है या तेरा यह दोस्त। उसे फैलने से जैसे भी रोक सकता है, रोक के दिखा।''

लघुकथा संग्रह 'तैरती हैं पत्तियाँ' से 06 लघुकथाएँ

10. समंदर : एक प्रेमकथा

''उधर से तेरे दादा निकलते थे और इधर से मैं...''

दादी ने सुनाना शुरू किया। किशोर पौत्री आँखें फाड़कर उनकी ओर देखती रही– एकदम निश्चल; गोया कहानी सुनने की बजाय कोई फिल्म देख रही हो।

''लम्बे कदम बढ़ाते, करीब–करीब भागते–से हम एक–दूसरे की ओर बढ़ते... बड़ा रोमांच होता था।''

यों कहकर एक पल को वह चुप हो गयीं और आँखें बंद करके बैठ गयीं।

बच्ची ने पूछा– ''फिर?''

''फिर क्या! बीच में समंदर होता था– गहरा और काला...!''

''समंदर!''

''हाँ... दिल ठाठें मारता था न, उसी को कह रही हूँ।''

''दिल था तो गहरा और काला क्यों?''

''चोर रहता था न दिल में... घरवालों से छिपकर निकलते थे!''

''ओ...ऽ...आप भी?''

''...और तेरे दादा भी।''

''फिर?''

''फिर, इधर से मैं समंदर को पीना शुरू करती थी, उधर से तेरे दादा...! सारा समंदर सोख जाते थे हम और एक जगह जा मिलते थे।''

''सारा समंदर!! कैसे?''

''कैसे क्या...ऽ... जवान थे भई, एक क्या सात समंदर भी पी सकते थे!''

''मतलब क्या हुआ इसका?''

''हर बात मैं ही बतलाऊँ! तुम भी तो दिमाग के घोड़ों को दौड़ाओ कुछ।'' दादी ने हल्की–सी चपत उसके सिर पर लगाई और हँस दी।

11. अपने–अपने आग्रह

''तुझे मेरा नाम मालूम नहीं है क्या?'' वह उस पर चीखा।

''है न– रामरक्खा!''

''रामरक्खा नहीं, अल्लारक्खा।''

''एक ही बात है।''

''एक ही बात है तो अल्लारक्खा क्यों नहीं बोलता है?''

''मैं तो वही बोलता हूँ। तुझे पता नहीं, कुछ और क्यों सुनाई देता है!''

12. उसकी हँसी

चौराहे पर उत्तर और पूर्व की ओर जाने वाली सड़कों के बीच, ईशान में काफी पीछे बरगद का घना पेड़ था। कहीं से आकर एक बुढ़िया कई सालों से उसके नीचे रहने लगी थी।

उसी पेड़ के नीचे कुलचे–छोले का ठीया लगाने वाले शंकर का एक नियम था। सुबह को सबसे पहला और शाम को घर लौटने से पहले आखिरी पत्ता वह बुढ़िया के लिए बनाता था।

आस–पास के सभी खोमचे वाले देखा करते, कि खाली समय में बुढ़िया फटी–सी अपनी झोली से एक गोल डिबिया निकालती थी। वह धीमे से उसे खोलती और अपलक ऊपर वाले ढक्कन को निहारती। कभी शरमाती, कभी मुस्कराती और कभी खिलखिलाकर हँस पड़ती।

वह हँसती तो जैसे सारा आस–पास हँस उठता। उसकी हँसी में घुँघरू–सी छनछनाहट थी। वे छनछनाते तो आस–पास का हर व्यक्ति उस ओर देख उठता। पेड़ पर बैठी गौरैयाँ चहक उठतीं। चीलें चौकन्नी हो जातीं। कौए डरकर इधर–उधर ताकने लगते।

उस दिन शंकर की दस वर्षीया बेटी साथ आ गयी थी। उसने कुलचे–छोले का पत्ता उसके हाथ में थमाकर कहा, ''परी, पेड़ के नीचे बैठी उस दादी को दे आ।''

परी गयी तो पत्ता पकड़कर बुढ़िया ने उसे निकट बैठा लिया। नाम पूछा और कहा, ''बैठ, तुझे एक चीज दिखाती हूँ...'' यों कहकर उसने झोली से डिबिया निकालकर उसे दिखाई, ''बता क्या है ये?''

''डिबिया है।'' परी ने सहज भाव से बताया।

लोहे की ऐसी चादर से बनी है, जिस पर जंग नहीं लगता।'' बुढ़िया बोली, ''अब नहीं बनती ऐसी डिबियाँ; और...।'' फिर उसे खोलकर ऊपर वाले ढक्कन को उसकी ओर बढ़ाते हुए पूछा, ''देख, ये क्या है?''

''दर्पण है।'' परी ने बताया।

''जितना चमकदार यह शादी के वक्त था, उतना ही आज भी है। खराब होने वाला नहीं है इसका मसाला। जब तेरी उम्र की थी, तब ससुराल से मिली थी यह दरपन वाली डिबिया।'' बुढ़िया ने अतीत में उतरते हुए कहा, ''मैं तब बहुत सुंदर थी, एकदम तेरे जैसी।''

''आप तो अब भी बहुत सुंदर हो।'' परी बोली, ''एकदम मेरे जैसी।''

इतना सुनना था कि बुढ़िया की हँसी छूट गई, जोर की हँसी। उसके साथ ही

परी भी खिलखिलाकर हँस पड़ी। दोनों ऐसा हँसी, कि चारों दिशाओं से सिमटकर बादल बरगद के द्वारे आ खड़े हुए। हवाएँ शहनाई बजाने लगी। पत्तियाँ झूम–झूमकर नाचने लगीं। समूचा पेड़ बारिश में भीगने लगा।

''मुझे सालों से तेरा इंतजार था। हँसी और बारिश के बीच डिबिया को परी के हाथों में थमाते हुए बुढ़िया बोली, ''इसकी तू ही सही हकदार है, ले सँभाल।''

इतना कहकर वह कब, लम्बी यात्रा पर निकल गयी, परी को पता ही नहीं चला!

13. गोपाल जी की लुटिया

'गोपाल जी की लुटिया' तो आपने सुनी ही होगी। नहीं सुनी! मैं सुनाता हूँ...

निजी गुरुकुल चला रहे एक मास्टर जी ने गुरु पूर्णिमा के एक दिन पहले नोटिस घुमाया– ''कल गुरु–पूजा होगी। इसलिए हर बच्चा अपने घर से एक लोटा दूध या एक कटोरा चावल लेकर गुरुकुल आएगा।''

नंदू गरीब विधवा का बेटा था। उसकी माँ न लोटा–भर दूध का इंतजाम कर सकती थी, न कटोरा भर चावल का। दुःखी हो, नंदू को उसने बहकाया– ''बेटा, तेरा बड़ा भाई 'गोपाल' जंगल में गाय चराता है। तू वहीं जाकर उससे गुहार कर, वह तुझे एक लोटा–भर दूध जरूर दे देगा।''

माँ की बात पर विश्वास कर अबोध बालक जंगल में गया और लगा पुकारने– ''भैया...ऽ... ओ गोपाल भैया!'' उसकी करुण पुकार सुनकर गोपाल जी चले आए। पूछा; और दूध भरी एक छोटी–सी लुटिया उसके नन्हे हाथों में थमाकर चले गये।

नंदू अगली सुबह गुरुकुल जा पहुँचा और लुटिया मास्टर जी के सामने कर दी। उस सौ मिलीग्राम की लुटिया को देखकर मास्टर जी का पारा कपाल से जा टकराया। कड़वा–सा मुँह बनाकर तड़के, ''दिखा क्या रहा है, जाकर पलट दे नाँद में।''

भोला–भाला नंदू पेड़ के नीचे रखी नाँद के पास गया और लुटिया का दूध उसमें उलटने लगा। एकाएक मास्टर जी की नजर उधर गयी तो वे दौड़े। लुटिया से दूध थमने का नाम ही नहीं ले रहा, लगातार गिरे ही जा रहा था!! मास्टर जी ने नंदू से उसके बारे में पूछा तो उसने बता दिया– ''जंगल में रहने वाले हमारे गोपाल भैया ने हमें दी और कहा कि तुम्हारे हाथ में रहेगी, तभी निकलेगा इससे दूध। किसी और के हाथ में गयी या इससे निकला दूध तुमने बेचा तो यह गायब होकर मेरे पास आ जाएगी।''

मास्टर जी ने मन ही मन सोचा– ''दूध बेचने की मनाही नंदू को ही तो है, हमें थोड़े न है!'' सो नंदू से बोले, ''बेटा तुझे तो इस लुटिया का करना क्या है। मेरे पूजाघर में रख आ। सुबह–सुबह आकर रोजाना यह नाँद अपने हाथों से भर जाया कर। गुरुकुल की सेवा का अनंत पुण्य तुझे मिलेगा।''

अजीब ही तो गोपाल जी हैं और अजीब ही उनकी लुटिया है। जिसका उस पर हक है, उसे उसका दूध नसीब नहीं होता; और जिसके वह कब्जे में है, उसे वह छू नहीं सकता, छूते ही गायब हो जाएगी।

बावजूद इसके उस लुटिया ने चमत्कार खूब दिखाया है। 'गुरुजी' उसी दिन से 'गुरू' हो गए हैं। वह दिन था और आज का दिन है... कितने ही नंदू सुबह–सुबह

पहुँचकर गुरुकुल की नाँद भर रहे हैं; और गुरू लोग? वे निजी विश्वविद्यालय और शिक्षा संस्थाएँ चलाने लगे हैं, मैनेजमेंट कहलाने लगे हैं; और उस दूध से दिन दूने रात चौगुने फल–फूल रहे हैं।

14. नदी को बचाना है

''इस समय हम जहाँ से गुजर रहे हैं, किसी समय वहाँ नदी बहा करती थी।''

''सच में?''

''और यह रास्ता जिस बड़े रेगिस्तान में जाकर मिलता है, जानती हो वह क्या था?''

''क्या?''

''समुद्र।''

''हम उन दिनों साइबेरिया से आया करते थे यहाँ। चहल–कदमी किया करते थे नदी के किनारे–किनारे दूर तक। पास के खेतों और जंगलों में रात बिताते थे और...''

''खेत और जंगल भी थे यहाँ!!''

''बहुत कुछ था जो अब नहीं है। आँखों में भर लो इस दृश्य को; अगली बार आओगी तो उँगलियों में उँगलियाँ फँसाकर घूम नहीं पाओगी इस तरह। धरती की सतह को लील चुके होंगे जहरीले रसायन।''

''तब?''

''स्पेस सिटी में रह रहे होंगे हम लोग, जीव–जन्तु, सब। छोटे–छोटे कैप्सूल में बंद होकर तैरा करेंगे अकेले। बिना उसके, धरती के वायुमंडल में प्रवेश करते ही गल जाया करेगी काया।''

''ओह, नहीं।''

''सुनो प्रिया! लोग अगर गर्भ में ही मारते रहेंगे नदियों को। बहने नहीं देंगे उन्मुक्त। तो सोचो– बचा–खुचा सागर भी जिएगा किसके लिए? वह नहीं बचेगा तो बादलों से वंचित रह जाएगा आकाश... जहरीली हवाएँ कर लेंगी उस पर कब्जा। नदियों को बचाना होगा गर्भ में नष्ट होने से, बचाना है अगर धरती को जैविक युद्ध से।''

15. मुर्दों के महारथी

''गड़े मुर्दे उखाड़ने की प्रैक्टिस हमारे दल के हर शख्स को होनी चाहिए। बड़ा मजा आता है।''

''सिर्फ प्रैक्टिस? शऊर भी तो होना चाहिए।''

''शऊर की फिक्र की, तो उखाड़ लिया मुर्दा। बाल भी नहीं उखड़ पाएगा उसका।''

''शऊर की फिक्र नहीं की, तो जनाब... मुर्दा समूचे शहर को खा जाएगा कब्र से निकलकर।''

''यही... यही तो मजा है इस धन्धे का। कीर्तन थोड़े ही कराना है उनसे।''

लघुकथा संग्रह 'काले दिन' से 05 लघुकथाएँ

16. थोड़ा सा नमक

''सबसे पहले हम एक रेस्टोरेंट में गये अम्मा!'' शाम को घर लौटकर उमा ने

पूरे दिन का चिट्ठा माँ के आगे खोलना शुरू किया, ''वहाँ वह मेरे सामने वाली सीट पर बैठा, खाया–पिया; उसके बाद...''

''उसके बाद?'' माँ ने उत्सुकता से पूछा।

''उसके बाद किसी पार्क में बैठने के लिए हम ऑटो में बैठे।'' बेटी ने बताया।

''और वह एकदम सटकर बैठा।'' माँ ने आशंका व्यक्त की।

''हाँ।'' उमा बोली।

''टोका नहीं तूने?'' माँ तुनकी।

''अपने यहाँ के ऑटोज़ में सीटों का साइज तो तुम जानती ही हो। कितना भी सरक लो, सटे ही रहते हो।''

''अच्छा, फिर।''

''शहंशाहों की तरह खुद को उसने पीछे टिका लिया और दायीं बाँह को सीट के मेरे पीछे वाले हिस्से के ऊपर पूरा का पूरा फैला दिया...''

''और फिर हाथ को धीरे–धीरे नीचे को सरकाना शुरू किया...!''

''नहीं।''

''बातें करते हुए अनजाने में या नींद आने के बहाने, अचानक?''

''एक बार भी नहीं।'' बेटी ने बताया, ''चलते–चलते एक जगह ठोकर लगने पर मैं गिरने–गिरने को हुई, तब भी उसने मुझे छूने–पकड़ने की कोशिश नहीं की। दूर से ही बोला– अरे सँभलके?''

इतना सुनना था कि माँ की आँखों में बरसने को आतुर बदरी तैर आयी। बेटी ने बात को जारी रखते हुए कहा, ''एक बात कहूँ अम्मा?''

''बोल।''

''मैंने पापा को नहीं देखा न! उसका यह रूप देखकर मुझे उनकी याद हो आयी। मैं यह भूल–सी गयी कि...। बातें करते, उसकी ओर देखते हुए कई बार मेरा मन किया कि मैं उसके सीने से लगकर रो पड़ूँ..''

''नहीं,'' माँ ने तुरन्त टोका, ''भावुक होकर एकदम–से किसी पर भी ऐसा यकीन मत करना।''

यह सुनते ही उमा बोल पड़ी, ''एकदम यही बात उसने भी मुझसे कही अम्मा!. ..पता नहीं किस बात पर।''

''अम्मा ने बेटी के भविष्य के प्रति आश्वस्ति की साँस ली। आँखें मूँदकर अगोचर की ओर हाथ जोड़े, ''तेरा लाख–लाख धन्यवाद है भगवान! तूने मेरी सुन ली।

''नहीं अम्मा! उमा ने तुरंत ही विनतीभरे स्वर में कहा, ''इतना भी ठंडा, इतना भी सेल्फ कान्शस नहीं होना चाहिए कि ठोकर लगने पर किसी को थामने के लिए न बढ़ सके। एकदम अलोना मत खिलाओ... थोड़ा–सा नमक, प्लीज!''

17. आखिरी बयान

''तुम्हें फाँसी पर लटकाए जाने का हुक्म हुआ है– अभी, इसी वक्त!''

''.....''

''हाकिम ने तुम्हारी आखिरी इच्छा जानने का आदेश लिखा है। क्या है तुम्हारी आखिरी इच्छा?''

''.....''

''जल्द बताओ। रजिस्टर में दर्ज करके समय रहते हाकिम की मोहर भी लगवानी है।''

''मेरी इच्छा है कि मैं...बहुत कम शब्दों में एक ऐसी कहानी, ऐसी कविता, ऐसा गीत, ऐसी गजल...''

''वक्त बर्बाद मत कर हरामजादे! जल्दी बोल, जो कहना चाहता है।''

''बिना सुने तू जिन पर इतना तिलमिला गया है, एकदम ऐसे तानाशाह के हुक्म की नाफरमानी के बोल भर देना चाहता हूँ जनता में! जा, यही बात सुना दे जाकर उसे।''

18. मुक्ति संघर्ष

वे आईं और मुट्ठियों को हवा में तानकर चीखीं...

''शह...ऽ...र–शहर...!''

''शाहीन बाग...शाहीन बाग!!''

''एकाएक हुए इस हो–हल्ले को सुन चौतरफा माहौल थम गया। फत्तू उधर से गुजर रहा था, वह भी रुक गया। बगल में खड़े एक आदमी से पूछ बैठा, ''क्या है यह सब? किस बाग की बात कर रही हैं?''

''बाग–वाग तो बहाना है। औरतों को आगे करके कुछ लोग अपनी मूछों पर ताव दे रहे हैं।''

''औरतों को आगे करके! कैसे?''

''ऐसे, कि जिस कौम के मर्दों ने सदियों औरत को घर में बंद रखा, दबाव बनाकर उन्होंने ही इन्हें सड़क पर उतारा हुआ है।''

''मुद्दा क्या है?''

''भाई मर्दों का मुद्दा तो निहायत सियासी है; अलबत्ता इन औरतों का मुद्दा अपनी जगह एकदम सही है।''

''वह क्या है?''

''घर बचाओ...और क्या!''

''दबाव में ही सही, बाहर का रास्ता तो देखा! आजादी भी पा ही लेंगी देर–सवेर...!'' फत्तू बुदबुदाया और चल दिया।

19. फलसफा

''आप एक असन्तुष्ट कौम हैं।''

''कैसे?''

''आप जिस भी मुल्क में हैं, वहीं सामने वाली कौम से खफा हैं।''

''यानी सामने वाली कौम हमारे मजहबी मामलों को नेस्तनाबूद करने की चालें

चलती रहे और हम चुप बैठे रहें?''

''जिस मुल्क में सिर्फ आप ही आप हैं, वहाँ अपने ही लोगों से खफा हैं!''

''गरज यह कि हम जाहिलों को काफिरों–जैसी हरकतें करते देखते रहें और चुप रहें?''

''कमाल है यार! बाकी कौमें भी हैं न दुनिया में! अकेले आपको ही चुप रहने से इतना गुरेज क्यों है?''

''वाह मियां! हम कहाँ रहते हैं, क्या करते हैं, आप हमारी हर हरकत पर नजर रखे हुए हैं और उम्मीद करते हैं कि हम चुप रहें?''

20. दीवार से पीठ टिकाए बैठा वह बूढ़ा

ऑफिस से छुट्टी पाकर मैं घर की ओर लौट रहा था। इस समय दिल्ली की ज्यादातर सड़कें कारों, बाइकों आदि वाहनों से जाम हो जाती हैं। फुटपाथ, भीड़–भरा इलाका बन जाते हैं। जिस रास्ते से मैं गुजर रहा था, देखा कि फुटपाथ से काफी पीछे दीवार से पीठ टिकाए एक बूढ़ा बैठा था। जैसे ही नजरें मिलीं, उसने हाथ के इशारे से निकट बुलाया। मैं एकबारगी झिझका जरूर, क्योंकि हाथ के इशारे से निकट बुलाने वाले अभिजात्य–जैसे लगने वाले अनेक लोगों द्वारा मैं ठगा जा चुका था। फिर सोचा, जरूरी नहीं कि हर शख्स ठग ही हो, कोई–कोई जरूरतमंद भी हो सकता है। सो निकट चला गया।

''मैं आपका नाम नहीं पूछूँगा बेटा, लेकिन यह जरूर पूछूँगा कि क्या आप रोजाना इधर से गुजरते हैं।'' उन्होंने पूछा।

''जी।'' मैंने कहा, ''शनिवार और इतवार के अलावा।''

''इसी समय?''

''जी करीब–करीब।''

''एक मेहरबानी करोगे?''

अब शुरू होगा भीख माँगने का सिलसिला– मैंने सोचा और सावधान होते हुए कहा, ''कोशिश करूँगा, आप सेवा बताइए।''

''अकेला हूँ बेटा।'' बुजुर्ग ने कहा इधर–उधर से भीख माँग, पेट भरकर यहाँ आ पड़ता हूँ। बतियाने के लिए पाँच–सात मिनट निकाल लोगे तो मेहरबानी होगी।''

मैं दुविधा में पड़ गया। यह कोई मुश्किल काम नहीं था लेकिन वादा करना मुश्किल था। सभी जानते हैं कि शाम को घर की ओर रुख किये शख्स का एक–एक पल कितना बेचैनी भरा होता है।

''देख लेना, अगर कर सको तो...'' दुविधा में पाकर उन्होंने कहा, ''आपका बहुत समय ले लिया, अब जाइए।'' और विदा कर दिया।

और उस दिन के बाद, अनायास, घर वापसी का मेरा रास्ता ही बदल गया। हाँ घर पहुँच जाने के बाद मुझमें यह बेचैनी जरूर जाग जाती है कि वह बूढ़ा उधर से गुजरते हर साइकिल–सवार में मुझे तलाशता होगा... कि मैं किस डर से उसकी उम्मीद को तोड़ रहा हूँ... कि कल से पल, दो पल उसके पास बैठकर आऊँगा जरूर! ■

अशोक भाटिया

तलाश

''एक रेस्तराँ में डिनर के लिए कुछ परिवार आए हुए थे। उनमें दो–सवा दो साल की एक बच्ची भी थी। बच्ची की उत्सवधर्मी आँखें चारों तरफ लोगों और चीज़ों को ध्यान से देख रही थीं। उसे गुब्बारा दिया गया, लेकिन वह उसे कुछ ख़ास नहीं लगा। वह कुछ नये और भरे–पूरे घटना–क्रम की तलाश में थी।

टेबल की उस तरफ उसका भाई पानी पी रहा था। बच्ची ने भी हाथ बढ़ाकर पानी का वही गिलास माँगा, हालाँकि टेबल पर और भरे गिलास रखे हुए थे। यह देखकर भाई ने फ़ौरन पानी पी लिया, तो बच्ची ने भी वह गिलास माँगना छोड़ दिया। पर वह भरी–पूरी चीज़ों की तलाश में थी।

रेस्तराँ में बैठे कई लोग यह जल–दृश्य देखकर प्रसन्न हो रहे थे। अब बच्ची कुर्सी से उतरी और आसपास के लोगों और मेजों पर पड़े सामान का मुआयना कर फिर अपने जहाज़ पर लौट आई। उसने पानी माँगा। पानी पीते–पीते वह छत पर लगे गुब्बारों, जड़े हुए सितारों आदि का मुआयना करने लगी। उसकी जिज्ञासा अभी कुछ नये की तलाश में थी।

एक तरफ उसे चमकीले शीशे दिखाई दिये तो वह मिठाइयों के शोकेस की तरफ चल दी। दीख रही मिठाइयों का उसने तुलनात्मक अध्ययन किया। फिर रसगुल्ले की ट्रे के बाहर शीशे पर उँगली टिका दी, ''जे लेना है।'' उसने रसगुल्ला पाने की प्रतीक्षा में पाँच मिनट सदियों जितने लम्बे बिताये। आ जाने पर पहले उसे उँगली से छुआ, फिर चम्मच को हटाकर रसगुल्ला उठा लिया, गोल, मीठा, भरा–पूरा संसार।

टेबल पर सूप की कटोरियाँ रखी जा रही थीं। बच्ची अब फिर कुछ नये की तलाश में थी। उसने सूप की तरफ संकेत किया। "वो लेना है" की उसकी थाप तब तक पड़ती रही, जब तक सूप उसके पीने–लायक नहीं हो गया। सूप से वह आत्मिक तुष्टि प्राप्त कर रही थी। तभी बेसमेंट पर चल रहे किसी आयोजन में संगीत बजने लगा। गीत और संगीत की तेज़ स्वर–लहरियों की तरफ बच्ची का मन खिंचने लगा। उसने सूप छोड़ दिया और कुर्सी से उतरकर नाचने लगी। फिर सीढ़ियों की तरफ संकेत करती हुई संगीत–लहरियों की तरफ चल पड़ी। उसे रोककर बताना पड़ा कि वहाँ हमारी पार्टी नहीं है।

बच्ची के पाँव के नीचे की जमीन संगीत से प्रकम्पित हो रही थी। वह जमीन की तरफ रह–रहकर संकेत किए जा रही थी। इसका रहस्य भला वहाँ कौन समझता...

■ 1882, सैक्टर–13, करनाल–132001, हरियाणा / मो. 09416152100

राजेश उत्साही

बारिश

''मुझे बारिश बहुत अच्छी लगती है।''

''लगती तो मुझे भी अच्छी है।''

''अच्छी कहने से कुछ नहीं समझ आता।''

''अरे, गली–कूचों में जमा सब कचरा बाहर आ जाता है।''

''हाँ, यह तो है।''

''और तुम्हें?''

''इसलिए कि रंगे–पुते चेहरे बे–रंग हो जाते हैं।''

■ Editor (Hindi), Teachers of India Portal, ETD, University Resource Centar, Azim Premji University, Pixel park, A-Block, 7th Floor, PESSE Campus, Electronics City, Hosur Road (Beside NICE Road), BANGLORE 560100 (Karnatak)

संतोष सुपेकर

उत्ताप

किसी के दिए धक्के से एकाएक वह एक पाँच–छह फीट गहरे गड्ढे में गिर पड़ा तो चिल्ला पड़ा। कुछ लोगों ने आवाज़ सुनी तो ''अरे–अरे'' कहते हुए गड्ढे के बाहर इकट्ठे हो गए।

कोई रस्सी ढूँढ़ने जाने लगा तो कोई सहायता के लिए फोन लगाने लगा। पर तभी कुछ हाथ आगे बढ़े और उसे सहारा देकर बाहर निकाल लिया।

इस त्वरित सहायता पर, देखने वाले वाह–वाह कर उठे और खींचने वाले हाथों के चेहरे विजयी मुस्कान से भर उठे। पर सहसा उसका मुँह कड़वा हो आया, निकालने वाले हाथों को 'थेंक्स' बोलते हुए।

उसे महसूस हो रहा था कि गड्ढे से बाहर खींचते, सहारा देते हाथों में वही गर्मी है जो उसे अपनी पीठ पर भी महसूस हुई थी, गड्ढे में अचानक गिरते समय।

■ 31, सुदामानगर, उज्जैन–456001, म.प्र./मो. 09752495366

आभा सिंह

सद्‌भाव

कॉलोनी के पार्क में बैंच अनमनी थी। सारा दिन हो गया, रह–रहकर बेचैनी झलकती। थकान से मुँह मुरझाया था। शीशम ने ग़ौर किया।

''बहना बड़ी उदास हो।''

''क्या बताऊँ, शीशम भैया! हॉस्टल के लड़के–लड़कियों के रोज़–रोज़ के जमावड़े से थक गयी हूँ। ये रात–दिन चौगरदा रहते हैं, ऊटपटाँग बातें, बेहूदी हरकतें, अश्लीलता...''

''भला इनकी क्या ग़लती, ज़माने की हवा ही ऐसी है।''

''कॉलोनी वाले भी कुछ नहीं कहते। पहले समाज का जो दवाब होता था, वह अब है ही नहीं, किसी को किसी से कोई मतलब ही नहीं।''

शीशम हँस दिया, ''किस ख़्याल में हो बहना, दुनियाँ बदल रही है।''

''छिछोरी बातें मुझे नहीं सुहातीं।''

थोड़ी देर चुप्पी रही। शीशम फिर बोला, इस बार उसका स्वर धीमा और नरम था। ''भावनाएँ चाहे कैसी भी क्यों न हों, उनका दिल से निकलना ज़रूरी है। अच्छा है कि हम पेड़ों की छाँव तले, तुम बहनों की ममता भरी गोद में सुकून से ये हँस–बोल लेते हैं। जी बहला लेते हैं। देखो, सामने केक कट रहा है, जश्न मन रहा है। प्रेम से छलकने दो इन्हें, वरना अवसाद के विस्फोट से तो नाश ही होगा।''

बैंच को याद हो आया, पार साल प्रेम में असफल होकर एक लड़की ने हॉस्टल के तिमंज़िले से छलाँग लगा दी थी।

वह सिहर उठी।

■ 80/173, मानसरोवर, जयपुर–302020, राज./मो. 08829059234

शील कौशिक

मान–सम्मान

''आज पन्द्रह दिन हो गये हैं... मधु मालकिन अच्छी हैं...सुबह काम पर आते ही चाय–नाश्ता देती हैं... मेरे पीछे–पीछे भी नहीं घूमती... बिन बात के मीन–मेख नहीं निकालती... चुपचाप अपना काम करती रहती हूँ... कभी डाँट–डपट भी नहीं करती... मैं भी अबकी बार मन लगाकर काम करूँगी... बीच में नहीं छोडूँगी। मेरा बेटा भी मेरी इस बात से नाराज हो जाता है कि मैं बीच में काम छोड़कर ठीक नहीं करती... क्या करूँ? मुझसे बात–बात पर डाँट–डपट सही नहीं जाती। अरे! हम गरीब हैं, इसका मतलब यह नहीं कि हमारा कोई मान–सम्मान नहीं! नीतू मैम साहब ने थोड़ा–सा लेट आने पर बच्चों की तरह मुझे बुरी तरह डाँट दिया... यह भी कोई बात हुई भला? शालू मैडम ने तो मेरे अच्छी तरह सज–धजकर रहने पर मेरा नाम ही बदलकर 'चमको' रख दिया था।''

पूनम झाड़ू फिराते हुए सोच रही थी।

''सुनो पूनम! मेरी बहू का नाम भी पूनम है!''

वह चहकी, ''अच्छा आंटी जी!''

''...इसलिए मैं तुम्हें छोटी कहकर बुलाऊँ, बुरा तो नहीं लगेगा!''

अभी–अभी आकाश में पंख खोलकर उड़ने को तैयार जैसे वह 'धम्म' से नीचे जमीन पर गिर पड़ी हो! कुछ देर के लिए उसकी आँखों के सामने अपने तीन छोटे बच्चों का चेहरा लहराने लगा। एक्सीडेंट में घायल पति के कहे वाक्य उसके कानों में गूँजने लगे, ''पूनम! मेरे बाद बच्चों का ठीक से लालन–पालन करना।''

''आप अपनी बहू का नाम बदल लीजिए!''

''चल बदजात! कहीं की...''

''सँभलकर बोलो मेम साहब! और हाँ! कर दो मेरा हिसाब... मुझे नहीं करना

आपके यहाँ काम...।'' उसने झाड़ू जमीन पर पटकते हुए कहा।

■ मेजर हाउस, 17, हुडा सेक्टर–20, सिरसा–125056 हरियाणा / मो. 09416847107

सुदर्शन रत्नाकर

कुछ नहीं ख़रीदा

वह बीच पर बैठी लहरों को उठते–गिरते देख रही थी। सैंकड़ों सैलानी अलग–अलग क्रीड़ाओं का आनन्द ले रहे थे। कई घूम रहे थे, कई धूप का सेवन कर रहे थे। उस द्वीप का मूल निवासी दो घंटे तक बीच का चक्कर लगाता रहा। कुछ लोगों ने उससे स्टोल और मालाओं के दाम पूछे पर ख़रीदा कुछ नहीं। एक घंटे बाद वह फिर आया। उसने क़ीमत आधी कर दी थी। लेकिन किसी ने तब भी कुछ नहीं ख़रीदा। साँझ ढलने से पहले वह एक बार फिर आया। इस बार उसने क़ीमत और भी कम कर दी। अब बहुत सारे लोगों ने उसका सामान ख़रीद लिया था। पर वह कह रहा था कि उसने वस्तुओं की सिर्फ़ लागत ली है। उसे लाभ कुछ भी नहीं हुआ।

लाखों का ख़र्चा करके इस टापू पर आकर मनोरंजन करने वाले सैलानी यहाँ की कला को नहीं ख़रीद सकते। मूल निवासियों की सहायता नहीं कर सकते। उसे बहुत अचरज हो रहा था। अनायास ही उसके मुख से निकला, ''कितने ओछे हैं लोग।''

उसका बारह वर्षीय बेटा भी वहीं खेल रहा था। बात सुनकर बोला, ''आपने भी तो कुछ नहीं ख़रीदा मम्मा!''

■ ई–29, नेहरूग्राँऊड, फ़रीदाबाद–121001 / मो. 09811251135

कमलेश चौरसिया

अनुनय

चलते–चलते मुझे कुछ शब्द जमीन पर गिरे दिखे, मैंने उसे अपनी कलम की नोक पर उठाया और अपनी डायरी के पन्नो में धर दिया। वे शब्द असहाय, पोषक तत्वों से वंचित, निर्बल और दुर्बल लगे। मैंने उनकी व्यथा का कारण जानना चाहा। इतना सुनते ही उनकी आँखों में पानी छलछला आया। वे अपनी दयनीय आवाज में बुदबुदाये।

हम पर आतंकी सेकुलर गिद्ध हावी हो गया है। वे अपने आतंक और तानाशाह शब्दों से मुझे लोगों की जिंदगी से बाहर खदेड़ देना चाहते हैं । उनके उजले लिबास के नीचे भ्रष्टाचार और हैवानियत की कालिमा भरी पड़ी है। उनके अमानवीय शब्दों की बौछार से जीवंत शब्द इंसान की जिंदगी से बहिष्कृत हो रहे हैं। वे विखंडनवादी बाजारवाद से मोहाच्छन्न हो गये हैं। अतः सत्प्रवृत्तियों को ग्रहण करने की पद्धति बदल चुकी है। अब हमें कौन अनावृत करेगा?

इतना कह कर वे शब्द डायरी से निकल कर मुझसे लिपट गये । बाहुपाश में समेटते हुए हल्के हाथ से मैंने उनकी पीठ थपथपा दी।

■ गिरीश–201, डब्ल्यू.एच.सी. रोड, धरमपेठ, नागपुर–440010, महाराष्ट्र / मो. 08796077001

नलिन

आज भी

आज सुबह क्लिनिक खोली ही थी कि एक दस–ग्यारह वर्ष के हट्टे–कट्टे बालक को लाया गया। वह और उसकी चार किशोर–वय बहिनें एक कार की चपेट में आकर घायल हो गये थे। एक व्यक्ति बच्चे को गोद में उठाये था और उसके पीछे लगभग बीस महिलाओं और पुरुषों की भीड़ थी, सब बदहवास। मैंने बच्चे की जाँच की और कहा कि ज्यादा चोट नहीं है, ठीक हो जायेगा। लेकिन एक पुरुष मेरे पैरों पर गिर पड़ा और एक महिला हाथ जोड़े, रोते हुए बोली, ''डॉक्टर साहब हमारे बेटे को कुछ नहीं होना चाहिए, अच्छे से अच्छा इलाज करिए, चार लड़कियों के बाद यह पुत्ररत्न प्राप्त हुआ है।''

मैं उन्हें सांत्वना देते हुए देख रहा था कि चार कृशकाय किशोरियाँ सहमी–सी खड़ी हैं, उनके चेहरे और हाथों से खून बह रहा है, उनके चेहरों पर अपने अपमान के भाव दिखाई दे रहे थे और आँखें कह रही थीं, ''क्या हमारी कोई कीमत नहीं।''

■ 4 ई 6, तलवंडी, कोटा–324005, राजस्थान / मो. 09413987457

मीरा सिंह 'मीरा'

सशंकित बुढ़ापा

दो दिनों की छुट्टी के बाद बैंक खुला था। काउंटर पर बहुत भीड़ थी। एक वृद्धा अपना अकाउंट खुलवा रही थी। उसे पचास हजार रुपए जमा करने थे। वह नॉमिनी में किसका नाम दे, समझ नहीं पा रही थी। पाँच मिनट से काउंटर क्लर्क को परेशान कर रखी थी। अंततः काउंटर क्लर्क खीझकर बोला, ''ऐ बूढ़ी माई, जल्दी नॉमिनी का नाम बताओ या फिर इस फार्म को घर लेते जाओ। कल सोचकर आना कि किसको नॉमिनी बनाना है। कल मैं सबसे पहले तुम्हारा ही काम करूँगा।''

''ऐ बाबू, बुढ़ पुरनिया के काहे दउड़ावत बाड़? हम अइसे–कइसे चल जाई? ऐतना दूर से रोज–रोज कइसे आ सकत बानी? तु त हमार बेटे जइसे हो। तनी तुम ही बताओ न कि हम अपन नॉमिनी के के बनाई? हमर छोटका लइका अभी त ठीके बारन। कुछो टहल टिकोरा भी करिए देता है। पर बाद में के जानि करेगा कि नहीं?''

''क्यों नहीं करेगा? आप उसका नाम बताओ। आपके छोटका लड़का को ही नॉमिनी में नाम डाल देता हूँ।''

''ऐ बबुआ, तुम बात नहीं बुझ रहे हो। मझिला अऊर बड़का से दाज करके कभी–कभार उ न महटियाता भी है।''

''ओफ्! फिर किसका नाम लिखूँ? जल्दी बताओ बूढ़ी माई। देखो भीड़ बढ़ती जा रही है। ज्यादा देरी होगी तो लोग हंगामा करने लगेंगे।''

''इस पर बूढ़ी सोचते हुए बोली, ''ठीके कह रहे हो। ऐ बबुआ, ऐसा करो न कि जे हमार लग्गी लेगा, अऊर किरिया–करम करेगा, ओही के नाम हमर नामिनी में डाल द।'' यह सुनकर काउंटर क्लर्क की आँखे उसके चेहरे पर टिक गई। उपस्थित लोगों में से कुछ बूढ़ी की बात पर ठहाके मारकर हँस पड़े तो कुछ उसकी स्थिति पर तरस खाने लगे। सशंकित बुढ़ापे को देख काउंटर क्लर्क का मन द्रवित हो गया। वह सोचने लगा, ''काश, कोई ऐसा नियम होता, जिससे सशंकित बुढापे को पुख्ता आश्वासन दे पाता।''

■ प्लस टू महारानी उषारानी बालिका उच्च विद्यालय, डुमराँव, जिला बक्सर–802119, बिहार

विजयानंद विजय

चिराग जल रहे हैं...

''डॉ. साहब, मेरी तबीयत ठीक नहीं है।''

''कहाँ हो तुम?''

''आजाद चौक पर।''

''ठीक है। मैं वहीं आ रही हूँ।''

''डॉ. साहब, यहाँ मास्क नहीं है।''

''इंतजार करो। गाड़ी जा रही है। सभी जवानों को मास्क भिजवा रही हूँ।''

''यहाँ सैनिटाइजर की जरूरत है मैम।''

''हाँ जरूर। भेज दिया गया है।''

''मैम, यहाँ कुछ लोग दूसरे राज्यों से आये हैं। जाँच नहीं करवा रहे हैं। जबरदस्ती कर रहे हैं।''

''उन्हें पकड़कर रखो। मैं आ रही हूँ।''

एस.पी. साहिबा, जो खुद एक डॉक्टर भी हैं, ड्राइवर को आवाज देती हैं– ''दवाइयाँ गाड़ी में रखवा दीं?''

''जी मैम।'' ड्राइवर ने कहा।

''आजाद चौक चलो।'' एस.पी. साहिबा गाड़ी पर बैठती हैं और उनकी गाड़ी चल पड़ती है... रोज की तरह नियमित गश्त पर।

हर मोड़ और चौराहे पर वो रुकती हैं। सिपाहियों से बातें करती हैं। उनका हालचाल लेती हैं। उनकी समस्याएँ सुनती हैं। आसपास मुआयना करती हैं। जरूरी दवाइयाँ, मास्क और सैनिटाइजर देती हैं, और हिदायतें देते हुए आगे बढ़ जाती हैं।

आजाद चौक पर पहुँचकर वो माईक थाम लेती हैं और एनाउंस करने लगती हैं– ''सभी नगरवासियों से अनुरोध है कि वे घरों में ही रहें। साफ–सफाई पर पूरा ध्यान दें। मास्क पहनें। साबुन–सैनिटाइजर से हाथ धोते रहें। दूरी बनाकर रहें। अनावश्यक घर से

शेष पृष्ठ आवरण–3 पर...

वसंत राशिनकर स्मृति अ. भा. सम्मान घोषित

इंदौर की संस्था आपले वाचनालय एवं श्री सर्वोत्तम द्वारा उत्कृष्ट मराठी काव्य कृतियों को दिए जाने वाले वसंत राशिनकर स्मृति अखिल भारतीय सम्मानों की घोषणा कर दी गई है। संस्था सचिव संदीप राशिनकर ने बताया कि काव्य संग्रहों की प्राप्त प्रविष्टियों में से निर्णायक मंडल ने कवि राजू देसले (नाशिक) की कृति अवघेचि उच्चार को 'कविवर्य वसंत राशिनकर स्मृति अ. भा. सम्मान' 2021 के लिए चुना है। उल्लेखनीय काव्य कृतियों को दिए जाने वाले 'वसंत राशिनकर काव्य साधना अ. भा. सम्मान' 2021 के लिए अहमदनगर के संदीप काले की कृति सईच्या कविता वसई की, डॉ. पल्लवी परुलेकर बनसोडे की कृति देह्मूठ, संतोष विठ्ठलराव कांबले मालेगाँव की कृति तुकोबाच्या कुलाचा वंश, मुंबई के डॉ. आशुतोष रारावीकर की कृति यशपुष्प, चंद्रपुर के विद्धयाधर बन्सोड की कृति प्रश्न पाणी बदलण्याचा आहे, सोलापुर के डॉ. शिवाजी नारायणराव शिंदे की कृति कैवार तथा औरंगाबाद के हबीब भंडारे की कृति मरण्याच्या दारात जगण्याचा अर्थ शोधणारी माणसं को चुना गया है। आपले वाचनालय में निकट भविष्य में गरिमामय समारोह में ये सम्मान दिये जायेंगे। (समाचार सौजन्य : संदीप राशिनकर)

रीडिंग कैंप में बालप्रहरी द्वारा पुस्तक वितरण

राजकीय प्राथमिक विद्यालय जसकोट (अल्मोड़ा) में रूम टू रीड द्वारा आयोजित रीडिंग कैंप में बच्चों को पुस्तकें उपहार में दी गई। कैंप में बालप्रहरी तथा बालसाहित्य संस्थान की ओर से रूम टू रीड तथा देश के प्रतिष्ठित रचनाकारों की पुस्तकों की प्रर्दशनी लगाई गई। बच्चों से इस प्रदर्शनी से अपनी मन पसंद पुस्तक पढ़ने को कहा गया। जो बच्चे पुस्तक पढ़ नहीं पाते उन्हें रूम टू रीड की चित्र आधारित पुस्तकें छाँटने को कहा गया। उसके बाद स्वेच्छा से पुस्तक पर अपनी समीक्षा प्रस्तुत करने वाले 30 बच्चों को हूंदराज बलवाणी, श्यामपलट पांडेय, राजकुमार 'निजात', डॉ.शील कौशिक, दीनदयाल शर्मा, दिनेश भट्ट, डॉ. आर.पी. सारस्वत, सुधा भार्गव, डॉ.कमल चोपड़ा, रतनसिंह किरमोलिया, खुशाल सिंह खनी आदि प्रतिष्ठित रचनाकारों की पुस्तकें उपहार में दी गई। कुछ बच्चों ने बालप्रहरी पत्रिका पर भी अपनी समीक्षात्मक टिप्पणी की। रीडिंग कैंप के संयोजक उदय किरौला ने रीडिंग कैंप की अवधारणा प्रस्तुत करते हुए कहा कि नई शिक्षा नीति के तहत अब निपुण भारत अभियान में स्कूल प्रबंध समिति तथा अभिभावकों की महत्वपूर्ण भूमिका सुनिश्चित की जा रही है। उन्होंने कहा कि रीडिंग कैंप का उद्देश्य, बच्चों में पठन–पाठन की संस्कृति जाग्रत करना तथा अभिभावकों को घर के काम करते हुए बच्चों के साथ घर पर बुनियादी साक्षरता तथा कौशल आधारित गतिविधियां करने के लिए प्रेरित करना है। उन्होंने बताया कि इससे पहले बिरौड़ा, खत्याड़ी, ओडला तथा गधोली में भी रीड़िग कैंप आयोजित किए गए। 5 रीडिंग कैंप में 184 बच्चों तथा 102 अभिभावकों ने प्रतिभाग किया। प्रमोद तिवारी, गरिमा राना, ममता भाकुनी आदि शिक्षकों ने रीडंग कैंप में सक्रिय भूमिका निभाई। इस कार्यक्रम में गाँव के बच्चों ने कुमाउनी परिधान में सांस्कृतिक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किए। (समाचार सौजन्य : उदय किरोला)

हरियाणा साहित्य अकादमी द्वारा साहित्यकार सम्मान

24 फ़रवरी 2022 को चंडीगढ़ में हरियाणा साहित्य अकादमी आयोजित समारोह में मुख्यमंत्री श्री मनोहर लाल खट्टर ने वर्ष 2017, 2018 तथा 2019 के अकादमी द्वारा घोषित संस्कृत, पंजाबी, उर्दू एवं हिन्दी के आजीवन साहित्य साधना पुरस्कार महाकवि सूरदास आजीवन साहित्य साधना पुरस्कार, बाल मुकंद गुप्त पुरस्कारो से अनेक साहित्यकारों को सम्मानित

किया। वरिष्ठ साहित्यकार एवं चिंतक डॉ. कमल किशोर गोयनका (2017), डॉ. सुरेश गौतम (2018) व श्री माधव कौशिक (2019) को रु. 7 लाख (प्रत्येक) का 'आजीवन साहित्य साधना सम्मान, डॉ. पूर्णचन्द शर्मा (2017), श्री मधुकांत व डॉ. संतराम देशवाल (2018) एवं डॉ. सुदर्शन रत्नाकर व श्रीमती चन्द्रकांता (2019) को रु. 5 लाख (प्रत्येक) का महाकवि सूरदास आजीवन साहित्य साधना सम्मान तथा डॉ. अशोक भटिया व डॉ. दिनेश दधीचि (2017) एवं डॉ. रूप देवगुण व डॉ. राजकुमार निजात (2018) एवं श्री गुलशन मदान व डॉ. घमण्डीलाल अग्रवाल (2019) को रु. 2 लाख (प्रत्येक) का बाबू बालमुकुंद गुप्त सम्मान प्रदान किया गया है। (समाचार सौजन्य : श्री रामेश्वर काम्बोज हिमांशु/डॉ. अशोक भाटिया)

साहित्य में लेखक सर्वेसर्वा है – प्रबोध कुमार गोविल

जयपुर में 23 फ़रवरी से ऑनलाइन छः दिवसीय डियर साहित्यकार सम्मेलन के चौथे सत्र 'साहित्य और सिनेमा' में प्रख्यात साहित्यकार और फ़िल्म विश्लेषक प्रबोध कुमार गोविल ने कहा कि सिनेमा एक टीमवर्क है, जिसमें किसी कहानी को पटकथा, संवाद, निर्देशन, अभिनय आदि के सामूहिक माध्यम से अभिव्यक्ति मिलती है; जबकि लेखक या साहित्यकार अपने सोच में अकेला होता है, जो फ़िल्म में कही जाने वाली पूरी बात को अपने मानस से स्वयं 'कंसीव' करता है। यही कारण है कि नामी गिरामी साहित्यकार जब फ़िल्मों का रुख करते हैं तो उन्हें कुछ निराशा होती है। किंतु कमलेश्वर और राही मासूम रज़ा जैसे लेखकों ने इस धारणा को तोड़ा है कि साहित्यकार फिल्मी लेखन नहीं कर सकता। डा. संजीव दुबे ने यह सवाल उठाया कि कई बेहद सफ़ल कृतियों को जब फिल्मांकन के लिए लिया गया तो उन पर बनने वाली फ़िल्मों ने वैसा प्रभाव नहीं छोड़ा जैसा मूल कृति का रहा। यद्यपि कुछ अपवाद अवश्य रहे हैं। कई कालजयी उपन्यास कालजयी फ़िल्म में नहीं बदल सके। चरण सिंह पथिक, गजेंद्र श्रोत्रिय, आनंद वर्धन ने भी अपने विचार रखे। (समाचार सौजन्य : हिमांशु जोनवाल)

डाक विभाग ने मनाई नेताजी सुभाष की 125वीं जयंती

डाक विभाग ने नेताजी सुभाष चन्द्र बोस की जयंती क्षेत्रीय कार्यालय, वाराणसी में मनाई। इस अवसर पर पोस्टमास्टर जनरल श्री कृष्ण कुमार यादव ने नेताजी सुभाष चन्द्र बोस के चित्र पर पुष्पांजलि अर्पित कर स्वतंत्रता आंदोलन में उनके अवदान को याद किया। श्री यादव ने कहा कि देश के स्वतंत्रता आंदोलन में नेता जी सुभाष चन्द्र बोस का अहम स्थान रहा है। साहस और पराक्रम के परिचायक, देशभक्ति की अद्भुत मिसाल पेश करने वाले, स्वतंत्रता आंदोलन के महानायक नेताजी सुभाष चंद्र बोस सदैव युवाओं के लिए प्रेरणास्रोत रहेंगे। श्री यादव ने बताया कि डाक विभाग द्वारा नेताजी सुभाष चन्द्र बोस की 125वीं जयंती पर विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किये जायेंगे। आम लोगों में देशभक्ति की भावना को जगाने के लिए सभी डाकघरों में 22 से 27 जनवरी तक भारतीय सेना के देशभक्ति गीत बजाये जायेंगे, ताकि डाकघर आने वाले ग्राहक भी इसका हिस्सा बन सकें। (समाचार सौजन्य : राम मिलन, स.नि.)

श्री रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' जी पर केन्द्रित अभिनन्दन ग्रंथ

लोकप्रिय साहित्यकार, अंतरराष्ट्रीय पत्रिका हिंदी चेतना के विद्वान् संपादक, लघुकथा डॉट कॉम, हिंदी हाइकु डॉट कॉम, त्रिवेणी इत्यादि के सहयोगी सूत्रधार, नई पीढ़ीके अनेक रचनाकारों के प्रेरणा स्रोत श्री रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर केन्द्रित अभिनन्दन ग्रंथ यथाशीघ्र प्रकाशित करने की योजना बनाई गई है। अभिनन्दन ग्रन्थ के लिए श्री रामेश्वर काम्बोज हिमांशु जी पर केन्द्रित विचार, संस्मरण, आलेख, वृत्तांत आदि का व्यापक स्तर पर संकलन किया गया है। (समाचार सौजन्य : डॉ. हरदीप कौर सन्धु) ■

।।प्राप्ति स्वीकार।।

{पुस्तक/पत्रिका की **एक प्रति** ही **बरेली के पते** पर भेजें। पुस्तकों की निम्नानुसार संक्षिप्त सूचना का प्रकाशन ही संभव है।}

प्राप्त पुस्तकें

सवाल–दर–सवाल : रमेश बत्तरा का लघुकथा साहित्य : अशोक भाटिया। प्रकाशक : भावना प्रकाशन, 109–ए, पटपड़गंज गाँव, नई दिल्ली–110091। मूल्य : रु. 175/–। संस्करण : 2022।

लघुकथा में प्रतिरोध : आलोचना : अशोक भाटिया। प्रकाशक : उद्भावना, एच–55, सेक्टर–23, राजनगर, गाजियाबाद, उ.प्र.। मूल्य : रु. 25/–। संस्करण : 2021।

यादों के झरोखे : उपन्यास : सुदर्शन रत्नाकर। प्रकाशक : अयन प्रकाशन, जे–19/39, राजापुरी, उत्तम नगर, नई दिल्ली–110059। मूल्य : रु. 300/–। संस्करण : 2021 (द्वितीय)।

फक्कड़ उवाच : लघुकथा संग्रह : योगराज प्रभाकर। प्रकाशक : देवशीला प्रकाशन, पटियाला–147001, पंजाब। मूल्य : रु. 300/–। संस्करण : 2021।

शब्द–शब्द क्षणबोध : क्षणिका संकलन। संपादक : डॉ. शैलेष गुप्त 'वीर'। प्रकाशक : लोक–परलोक पब्लिकेशन, 105–एफ/4, सादियाबाद, प्रयागराज, उ.प्र.। मूल्य : रु. 300/–। संस्करण : 2021।

बेहतर समाज की ओर : सामाजिक आलेख संग्रह : डॉ. हितेन्द्र प्रताप सिंह। प्रकाशक : एशोसिएटेड पब्लिशिंग हाउस, ब्लॉक–77, संजय प्लेस, आगरा, उ.प्र.। मूल्य : रु. 150/–। संस्करण : 2021।

मुट्ठी भर धूप : लघुकथा संग्रह : शिव डोयले। प्रकाशक : सुधा प्रकाशन, 207, एल.आई.जी., बर्रा–5, कानपुर–208027, उ.प्र.। मूल्य : रु. 220/–। संस्करण : 2021।

धूप के गुलमोहर : लघुकथा संग्रह : ऋता शेखर 'मधु'। प्रकाशक : श्वेतांशु प्रकाशन, एल–23, शॉप–6, गली नं. 14/15, न्यू महावीर नगर, नई दिल्ली–110018। मूल्य : रु. 340/–। संस्करण : 2021।

प्राप्त पत्रिकाएँ

कथादेश : मासिकी। सम्पादन : हरिनारायण। वार्षिक सहयोग : रु. 400/– मात्र। सम्पर्क : एल–57 बी, दिलशाद गार्डन, दिल्ली–110095।

वीणा : साहित्यिक मासिकी। संपादन : राकेश शर्मा। वार्षिक शुल्क : रु. 300/– मात्र। सम्पर्क : श्री मध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति, 11, रविन्द्रनाथ टैगोर मार्ग, इन्दौर–1, म. प्र.।

लघुकथा कलश : लघुकथा अर्द्धवार्षिकी। सम्पादन : योगराज प्रभाकर। मूल्य : 300/–। सम्पर्क : 'उषा विला', 53, रॉयल एन्क्लेब, डीलवाल, पटियाला–147002, पंजाब।

विभोर स्वर : वैश्विक हिन्दी त्रैमासिकी। सम्पादन : पंकज सुबीर। पाँच वर्षों का शुल्क : 3000/–। सम्पर्क : पी. सी. लैब, शॉप नं. 3–6, सम्राट काम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैण्ड के सामने, सीहोर, म.प्र.।

दि अण्डरलाइन : साहित्यिक मासिकी। सम्पादन : वीरेन्द्र शुक्ला/डॉ. प्रेमस्वरूप त्रिपाठी। मूल्य : 15/– मात्र। सम्पर्क : 127/122, डब्ल्यू–2, जूही कलां, कानपुर, उ.प्र.।

नवल : साहित्यिक त्रैमासिकी। सम्पादन : हरि मोहन 'मोहन'। बार्षिक सहयोग : रु.60/– मात्र। सम्पर्क : उत्तराखंड प्रेस, रानीखेत रोड, रामनगर, जिला : नैनीताल–242715 (उ.खंड)।

शिवना साहित्यिकी : साहि.त्रैमा.। सं. : पंकज सुबीर/शहरयार। पाँच वर्षों का शुल्क : 3000/–। सम्पर्क : पी. सी. लैब, शॉप नं. 3–6, सम्राट काम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैण्ड के सामने, सीहोर, म.प्र.।

सरस्वती सुमन : साहित्यिक मासिकी। सम्पादन : आनन्दसुमन सिंह। वार्षिक मूल्य : 500/–। सम्पर्क : 'सारस्वतम' 1–छिब्बर मार्ग, आर्यनगर, देहरादून (उ.खण्ड)।

नये क्षितिज : साहित्यिक त्रैमासिकी। सम्पादन : डॉ.सतीश चन्द्र शर्मा 'सुधांशु'/डॉ. नितिन सेठी। वार्षिक मूल्य : रु0 300/–। सम्पर्क : बाबू कुटीर, ब्रह्मपुरी, पिन्दारा रोड, बिसौली, बदायूँ, उ.प्र.।

पुष्पक साहित्यिकी : साहित्यिक पत्रिका। सम्पादन : डॉ.अहिल्या मिश्र/आशा मिश्र 'मुक्ता'। वार्षिक मूल्य : रु. 300/–। सम्पर्क : 93/सी, राजसदन, वेंगलराव नगर, हैदराबाद–500038 (आं. प्र.)।

मेकलसुता : साहित्यिक पत्रिका। सम्पादक : कृष्णस्वरुप शर्मा 'मैथिलेन्द्र'। मूल्य : रु. 100/–। सम्पर्क : गीतांजलि, म.आ.व. 8, शिवाजीनगर उपनिवेशिका, नर्मदापुरम्–461001, होशंगाबाद (म.प्र.)। ■

घोषणा पत्र

अविराम साहित्यिकी त्रैमासिकी के संबंध में **फार्म 4 (नियम 8)**

समाचारपत्र के स्वामित्व और अन्य विशिष्टियों के बारे में विवरण जो प्रत्येक वर्ष फरवरी के अंतिम दिन के पश्चात् प्रथम अंक में प्रकाशित किया जाएगा।

1. प्रकाशन का स्थान : एफ–488/2, गली सं.–11,राजेन्द्रनगर, रुड़की, जिला हरिद्वार,(उ.खंड)
2. प्रकाशन की नियत अवधि : त्रैमासिक
3. मुद्रक का नाम : श्रीमती मध्यमा गुप्ता
   राष्ट्रीयता : भारतीय
   पता : एफ–488/2,गली सं.–11, राजेन्द्रनगर, रुड़की,जिला हरिद्वार, उ.खंड
4. प्रकाशक का नाम : श्रीमती मध्यमा गुप्ता
   राष्ट्रीयता : भारतीय
   पता : एफ–488/2, गली सं.–11,राजेन्द्रनगर, रुड़की, जिला हरिद्वार, उ.खंड
5. संपादक का नाम : श्रीमती मध्यमा गुप्ता
   राष्ट्रीयता : भारतीय
   पता : एफ–488/2, गली सं.–11,राजेन्द्रनगर, रुड़की, जिला हरिद्वार, उ.खंड
6. उन व्यक्तियों के, जो समाचारपत्र के स्वामी हैं और उन भागीदारों या शेयरधारकों के, जो कुल पूंजी के 1 प्रतिशत से अधिक अंश के धारक हैं, नाम और पते : श्रीमती मध्यमा गुप्ता, एफ–488/2, गली सं.–11, राजेन्द्रनगर, रुड़की, जिला हरिद्वार, उ.खंड

मैं मध्यमा गुप्ता घोषणा करती हूँ कि ऊपर दी गई विशिष्टियां मेरे सर्वोत्तम ज्ञान और विश्वास के अनुसार सही हैं।

(मध्यमा गुप्ता)

तारीख : 14.05.2022 प्रकाशक के हस्ताक्षर

पृष्ठ 89 '...चिराग जल रहे हैं (विजयानंद विजय) का शेष

बाहर न निकलें, वरना सख्त कानूनी कार्रवाई की जाएगी। दवा और राशन के सामानों की कोई कमी नहीं होने दी जाएगी। हास्पिटल चौबीसों घंटे खुले हैं। किसी भी तरह की परेशानी हो, तो हास्पिटल या मुझे फोन करें। अफवाहों पर ध्यान न दें और डरें नहीं।''

रात के आठ बज रहे हैं। उनकी गाड़ी ऑफिसर्स क्वार्टर्स के गेट पर रुकती है। एक बच्ची उनके पास आती है। हाथ का थैला उन्हें देती है और आँखों में आँसू लिए पूछती है– ''आप घर कब आओगे मम्मा?''

''बहुत जल्दी, बेटा। बस, ये सब काम खत्म होते ही आ जाऊँगी।'' वे बेटी को छूना, सहलाना, प्यार करना चाहती हैं। पर उसकी ओर बढ़े हाथ रुक जाते हैं। वे पापा और दादी का हालचाल पूछती हैं, बेटी को हाथ हिलाकर 'बाय' करती हैं, और उनकी गाड़ी शहर की ओर चल पड़ती है।

माँ–बेटी की आँखों में आँसू देख, ड्राइवर भी अपने आँसू नहीं रोक पाता है। सोच में पड़ जाता है वह, कि ये प्रेम, ममता, करुणा के आँसू हैं या निष्ठा, त्याग और कर्त्तव्य के प्रति समर्पण के!

■ आनंद निकेत, बाजार समिति रोड, पो. गजाधरगंज, बक्सर–802103, बिहार/मो. 09934267166

पंजीयन : UTTHIN/2012/48352

श्री रामेश्वर काम्बोज हिमांशु जी के लघुकथा संग्रह 'असभ्य नगर एवं अन्य लघुकथाएँ' के विमोचन में अनुराग शर्मा, मधुदीप, रा. का. हिमांशु, दीपक मशाल, सुभाष नीरव, बलराम, एवं विवेक मिश्र के मध्य डॉ. बलराम अग्रवाल ⬇

↑ सुप्रसिद्ध चित्रकार स्मृतिशेष बी.मोहन नेगी जी व उनके परिवार के मध्य डॉ.बलराम अग्रवाल पत्नी श्रीमती मीरा अग्रवाल जी के साथ।

लघुकथा में बलराम अग्रवाल के प्रदेय पर शोधरत छात्रा कु. चन्द्रेश साहू द्वारा रायपुर में डॉ. बलराम अग्रवाल का स्वागत ⬇

प्रेषक

प्रधान सम्पादिका
अविराम साहित्यिकी
एफ–488/2, गली संख्या–11, राजेन्द्र नगर, रुड़की–247667, जिला हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

प्राप्तकर्ता का नाम व पता

(मुद्रित पुस्तक पैकेट/Printed Book Packet)

प्रतिष्ठा में,